दक्खिनी कवि : ग़व्वासी का जीवन और साहित्य

(हैदराबाद विश्व विद्यालय की पी-एच. डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध)

सन् 1991 ई०

प्रस्तुतकर्ता :

एम. मजीदुल्लाह सिद्दिकी

निर्देशिका :

डॉ. नूरजहाँ बेगम

एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच.डी., डी.लिट्

रीडर, हिन्दी विभाग,

हैदराबाद विश्व विद्यालय, हैदराबाद.

डॉ. वें. वेंकटरमण राव

एम. ए. (हिन्दी, तेलुगु), पी-एच.डी.

प्रो. एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

हैदराबाद विश्व विद्यालय, हैदराबाद.

SUPERVISOR´S - CERTIFICATE

This is to certify that Mr. M.Majeedullah Siddiqui is a Bonafide - Student of the Department of Hindi, University of Hyderabad and the thesis entitled **"DAKKHINI KAVI : GHAWWASI KA JEEVAN AUR SAHITYE"** is a bonafide record of his research - work done under my supervision for the award of Ph.D. degree in partial fullfilment of the course work, and does not constitute part of any material submitted for a degree here or elsewhere.

Hyderabad

NOORJAHAN BEGUM

Date: 7.10.91

Supervisor

Dean,
School of Humanities,
University of Hyderabad,
HYDERABAD-500 134.

7.10.91

C E R T I F I C A T E

I hereby declare that this thesis entitled **"DAKKHINI KAVI : GHAWWASI KA JEEVAN AUR SAHITYE"** has been written by me during 1989 - 1991 under the supervision of Dr.Noorjahan Begum, Reader, Department of Hindi, University of Hyderabad, Hyderabad in partial fullfilment of the requirement for the award of Ph.D. degree.

I also declare that this is the result of my own effort and has not been submitted to any other University, before, for any degree or diploma.

M. M. Siddiqui

M.MAJEEDULLAH SIDDIQUI.

अनुक्रमणिका

पृष्ठ सं0

0 प्राक्कथन

0 प्रथम अध्याय

1• दक्खिनी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और गव्वासी का जीवन

1•1 आन्ध्र तथा सतवाहन वंश

1•2 राष्ट्रकूट

1•3 कल्यानी अथवा परवर्ती चालूक्य वंश

1•4 यादव, काकतीय तथा होसला राज्य

1•5 विजयनगर राज्य

1•5•1 संगम वंश

1•5•2 सालवा वंश

1•5•3 तोलवा वंश

1•6 बहमनी राज्य

1•7 बहमनी साम्राज्य का पतन

1•8 दक्खिनी तथा आफ़ाकी

1•9 बहमनी शासन के पतन के पश्चात् दक्खिन में नए राज्यों की स्थापना

1•10 नए राज्यों का विलय

2• गव्वासी का जीवन

2•1 जन्म एवं समय

2•2 गव्वासी का नाम

2•2•1 गव्वासिया

2•2•2 गव्वास

2•2•3 गव्वासी

2•3 शिक्षा

2·4 ग़व्वासी की आत्मश्लाघा

2·5 ग़व्वासी का प्रारम्भिक जीवन

2·6 राजदरबार से सम्बन्ध

2·7 राजकवि की उपाधि से विभूषित

2·8 गोलकुण्डा के राजदूत के रूप में बीजापुर में ग़व्वासी की नियुक्ति

2·9 गोलकुण्डा तथा बीजापुर की मित्रता में ग़व्वासी की भूमिका

2·10 ग़व्वासी की मान्यता

2·11 बीज़ापुर से ग़व्वासी की वापसी

2·12 ग़व्वासी की प्रार्थना - बादशा की ओर से आर्थिक सहायता

2·13 समकालीन दक्खिनी कवियों से ग़व्वासी की नोंक-झोंक

2·14 ग़व्वासी के जीवन का अंतिम चरण

0 द्वितीय अध्याय

2· ग़व्वासी और उनकी मसनवियाँ : वस्तु एवं स्रोत

खण्ड "अ"

1· दक्खिनी की मसनवी परम्परा

1·1 दक्खिनी मसनवी

1·2 ग़व्वासी की मसनवियाँ

खण्ड "ब"

1· सैफ़ुलमुलूक व कदीउज्जमाल

1·1 स्रोत

1·2 कथा -सार

2· तूती नामा : स्रोत एवं कथा- सार

2·1 स्रोत

2·2 कथा -सार

3· मैना सतवन्ती : स्रोत एवं कथा सार

3·1 स्रोत

3·1·1 मैना सतवन्ती एवं मुल्लादाऊद-कृत चंदायन

3·1·2 मैना सतवन्ती एवं साधन-कृत मैना सत

3·1·3 मैना सतवन्ती एवं हमीदी-कृत इस्मत नाम

3·1·4 मैना सतवन्ती एवं दौलतकाज़ी-कृत सती मयना व लोर चंद्रानी

3·1·5 मैनासतवन्ती एवं खेमदास-कृत मैना का सत

3·1·6 मैना सतवंती एवं चतुर्भुजदास-कृत मधुमालती

3·1·7 मैना सतवन्ती का लोकाधार

निष्कर्ष

3·2 कथा-सार

0 तृतीय अध्याय

1· गुव्वासी की मसनवियाँ : कथ्य और शिल्प

1·1 सौंदर्य वर्णन

1·1·1 मानव सौंदर्य

1·1·2 प्रकृति सौंदर्य

1·2 सामाजिक मूल्य

1·3 नैतिकता

1·4 गुव्वासी का जीवन दर्शन

1·5 मानवीकरण

1·6 रस-योजना

1·7 वीर-रस

1·8 रौद्र-रस

1·9 वीभत्स - रस

1·10 भयानक - रस

1·11 श्रृंगार रस

1·11·1 विप्रलम्भ-श्रृंगार
1·11·2 संयोग-श्रृंगार
1·12 हास्य - रस
1·13 करुण-रस
1·14 अद्भुत - रस
1·15 शिल्प
1·15·1 भाषा
1·15·2 फ़ारसी प्रभाव
1·15·2·1 हम्द
1·15·2·2 दुआ
1·15·2·3 कलीफ़ाओं की प्रशंसा
1·15·2·4 मीरां मुहीउद्दीन के सम्बन्ध में
1·15·2·5 अब्दुल्लाह कुतुबशाह की प्रशंसा
1·15·3 सरल अभिव्यक्ति
1·15·4 खड़ी बोली हिन्दी का रूप
1·15·5 वर्णनात्मकता
1·15·6 चित्रात्मकता
1·15·7 बिंबात्मकता
0 चतुर्थ अध्याय
दक्खिनी ग़ज़ल की परम्परा एवं गवासी का ग़ज़लिया काव्य
1· ग़ज़ल का उद्भव और विकास तथा अर्थ एवं विषय
1·1 ग़ज़ल से अभिप्राय
1·2 ग़ज़ल का विषय
1·3 ग़ज़ल का शिल्प विधान
2· दक्खिनी ग़ज़ल की परम्परा : ग़व्वासी तक
2·1 मुश्ताक़
2·2 लुत्फी
2·3 फ़ेरोज़

2·4 महमूद

2·5 मुल्ला ख़्याली

2·6 मुहम्मद कुली कुत्बशाह

2·7 मुल्ला असदुल्ला वजही

3· ग़व्वासी की ग़ज़लें – विविध परिप्रेक्ष्य

3·1 रहस्यवादी भावना

3·1·1 साई

3·2 विरह-वर्णन

3·3 प्रेमाभिव्यक्ति

3·4 नायिका – सौंदर्य – नख- शिख वर्णन

3·4·1 नयन

3·4·2 केश

3·4·3 दाँत

3·5 माँसलता

3·6 गर्व

3·7 विनम्रता

3·8 नैतिक मूल्य

3·9 जीवन दर्शन

0 पंचम अध्याय

ग़व्वासी के अन्य काव्य रूप : समसामयिक संदर्भ

(मर्सिया, कसीदा एवं रूबाई)

1· मर्सिया से तात्पर्य

1·2 मर्सिया का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

1·3 मर्सिया का विकास : ग़व्वासी तक

1·4 मुहम्मद कुली कुत्बशाह कृत मर्सिये

1·5 मुल्ला वजही का मर्सिया

1·6 अब्दुल्लाह कुत्बशाह का मर्सिया

1·7 ग़व्वासी की मर्सियागोयी

1·8 दक्खिनी मर्सिये का छन्द

1·9 मर्सियों में, पात्रवत-प्रयुक्त प्रसिद्ध
एवं प्रचलित नाम

2· क़सीदा : तात्पर्य

2·1 दक्खिनी क़सीदा

2·1·1 प्रारम्भिक रूप

2·1·2 मध्यवर्ती रूप

2·1·3 विकसित रूप

2·2 ग़व्वासी के क़सीदे

3· रुबाईयाँ

3·1 मुल्लाह असदुल्लाह वजही की रुबाईयाँ

3·2 मुहम्मद कुली क़ुत्बशाह की रुबाईयाँ

3·3 ग़व्वासी की रुबाइयाँ

4· समकालीन कवियों के संदर्भ में ग़व्वासी का मूल्यांक
मूल्यांकन

4·1 ग़व्वासी एवं वजही

4·2 ग़व्वासी एवं मुहम्मद कुली कुत्बशाह

4·3 ग़व्वासी एवं अब्दुल्ला कुत्बशाह

0 उपसंहार

0 संदर्भ ग्रंथ सूची

प्राक्कथन

हिंदी साहित्य के क्षेत्र में, दक्खिनी के अध्ययन का इतिहास पचास-साठ वर्ष से अधिक प्राचीन नहीं है । इतने अल्प समय में दक्खिनी से संबद्ध जो सामग्री प्रकाश में आई है वह हिंदी-शोध की समृद्धि को प्रदर्शित करती है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध के प्रथम अध्याय में आलोच्य कवि के जीवन, विभिन्न आयाम एवं जीवन से संबंधित महत्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख किया गया है । साथ ही, दक्खिनी साहित्य के उद्‌भव एवं विकास से संबद्ध विभिन्न राजनीतिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक कारणों पर लेखनी उठाई गई है ।

द्वितीय अध्याय में गव्वासी की मसनवियों पर विचार करते हुए उनके काव्य-स्रोत आदि के संबंध में आवश्यक चर्चा की गई है ।

तृतीय अध्याय के अंतर्गत कथ्य एवं शिल्प के परिप्रेक्ष्य में ग़व्वासी की मसनवियों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है ।

चतुर्थ अध्याय में ग़ज़ल के उद्भव एवं विकास के संबंध में तथ्य प्रस्तुत करते हुए ग़व्वासी की ग़ज़लों में विद्यमान विभिन्न काव्य-मूल्यों पर लेखनी उठाई गई है ।

पंचम अध्याय में मर्सिया §शोक-काव्य§ क़सीदा §स्तुति-काव्य§ तथा रुबाई आदि के उद्भव एवं विकास पर प्रकाश डालते हुए ग़व्वासी के योगदान पर विचार किया गया है ।

इनके अतिरिक्त, आवश्यकतानुसार गोलकुण्डा के अन्य कवियों, मुहम्मद कुली कुत्बशाह, मुल्ला वजही तथा अब्दुल्लाह कुत्बशाह आदि के काव्य से ग़व्वासी के काव्य की तुलना की गई है ।

अंत में उप संहार की औपचारिकता का निर्वाह करने की, संक्षिप्त, चेष्टा के साथ ही यह शोध-प्रबंध सीमाबद्ध हो जाता है । संदर्भ ग्रंथ-सूची प्रबंध को सामयिक पूर्णता प्रदान करती है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध "दक्खिनी कवि : ग़व्वासी का जीवन और साहित्य" हिंदी में, किसी एक दक्खिनी कवि के जीवन तथा समस्त साहित्य के संबंध में लिखा गया प्रथम प्रबंध है ।

हिंदी-विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय ने न केवल मुझे शोध करने का अवसर प्रदान किया, अपितु, आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करते हुए मेरा उत्साह भी बढ़ाया है । अत: मैं समस्त हिंदी-विभाग के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूं । विशेष रूप से हिंदी-

विभागाध्यक्ष पूज्य प्रो॰ वे॰ वेंकटरमण राव जी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना मेरा परम कर्तव्य है । मेरी निर्देशिका डॉ॰ नूरजहाँ बेगम इस दृष्टि से धन्यवाद की पात्र हैं कि उन्होंने अध्ययन, संशोधन से लेकर सामग्री नियोजन तक अपना अमूल्य समय मुझे दिया । मैं उन क्षणों को विस्मृत नहीं कर सकता जबकि नूरजहाँ जी ने अपने निजि कार्यों को स्थगित करके मेरे कार्य को प्राथमिकता दी ।

स्वर्गीय श्रीराम शर्मा जी के सुपुत्र, रवींद्र शर्मा जी ने छोटे भाई के रूप में मेरे हाथ मज़बूत किये, मैं उनका आभारी हूँ । अपने परिवार के सभी सदस्यों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना मेरा नैतिक कर्तव्य है ।

अंत में त्रुटियों के लिए क्षमा-प्रार्थना करता हूँ ।

कोटला आलीजाह,
हैदराबाद

(एम॰ मजीदुल्लाह सिद्दीकी)

प्रथम अध्याय

1· दक्खिनी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और ग़व्वासी का जीवन

1·1 आन्ध्र तथा सतवाहन वंश

1·2 राष्ट्रकूट

1·3 कल्यानी अथवा परवर्ती चालूक्य वंश

1·4 यादव, काकतीय तथा होसला राज्य

1·5 विजयनगर राज्य

1·5·1 संगम वंश

1·5·2 सालवा वंश

1·5·3 तोलवा वंश

1·6 बहमनी राज्य

1·7 बहमनी साम्राज्य का पतन

1·8 दक्खिनी तथा आफ़ाक़ी

1·9 बहमनी शासन के पतन के पश्चात दक्खिन में नए राज्यों की स्थाना

1·10 नए राज्यों का विलय

2· ग़व्वासी का जीवन

2·1 जन्म एवं समय

2·2 ग़व्वासी का नाम

2·2·1 ग़व्वासिया

2·2·2 ग़व्वास

2·2·3 गव्वासी

2·3 शिक्षा

2·4 ग़व्वासी की आत्मश्लाघा

2·5 ग़व्वासी का प्रारम्भिक जीवन

2·6 राजदरबार से सम्बन्ध

2·7 राजकवि की उपाधि से विभूषित

2·8 गोलकुण्डा के राजदूत के रूप में बीजापुर में ग़व्वासी की नियुक्ति

2·9 गोलकुण्डा तथा बीजापुर की मित्रता में ग़व्वासी की भूमिका

2·10 ग़व्वासी की मान्यता

2·11 बीजापुर से ग़व्वासी की वापसी

2·12 ग़व्वासी की प्रार्थना – बादशा की ओर से आर्थिक सहायता

2·13 समकालीन दक्खिनी कवियों से ग़व्वासी की नोक-झोंक

2·14 ग़व्वासी के जीवन का अंतिम चरण

प्रथम अध्याय

दक्खिनी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और गुव्वासी का जीवन

1. दक्खिनी साहित्य का इतिहास वास्तव में उस संस्कृति का इतिहास है जो दक्षिण भारत में उत्तर भारत की विभिन्न जन-जातियों एवं मुसलमानों के आगमन एवं सम्पर्क के फलस्वरूप विकसित हुई। दक्खिनी के परिप्रेक्ष्य में हिन्दु अथवा मुसलमान शब्द वास्तव में अपने भीतर किसी प्रकार का साम्प्रदायिक वैमनस्य नहीं रहते हैं। प्रत्येक धर्म की अपनी एक ऐतिहासिक स्थिति एवं परंपरा होती है। इस परम्परा का सम्बन्ध भौगोलिक स्वरूप से भी होता है। भौगोलिक कारणों से उत्पन्न होने वाली परिस्थितियाँ राजनीतिक उथल-पुथल के कारण गतिशील होकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक फैलती हैं तो सांस्कृतिक आदान-प्रदान प्रारम्भ हो जाता है। स्वभाव से कोई संस्कृति स्थिर नहीं रहती। विभिन्न धर्मों, जातियों, सम्प्रदायों एवं वर्गों के आपसकी मेल-मिलाप से भी किसी विशेष संस्कृति का जन्म होता है।

दक्खिनी संस्कृति के विकास के पीछे ऐतिहासिक परिवर्तनों की सुदीर्घ परम्परा रही है । यह सुदीर्घ ऐतिहासिक परम्परा, जो कि दक्षिण भारत में शताब्दियों से चली आ रही है, दक्खिनी भाषा एवं साहित्य की जननी है । अतः दक्खिनी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर विचार कर लेने से पूर्व हमें, सर्वप्रथम, दक्खिन की सीमा को समझना होगा ।

दक्खिन के क्षेत्र निर्धारण पर प्रकाश डालते हुए डॉ० श्रीराम शर्मा जी ने लिखा है - प्राचीन काल से दक्षिण भारत दो भागों में विभक्त रहा है । एक भाग तो नर्मदा से लेकर तुंगभद्रा तक और दूसरा भाग तुंगभद्रा से के किनारे से लेकर समुद्र तक । दूसरे भाग को संक्षेप में द्रविड़ देश कहा जाता है । द्रविड प्रदेश के चोल, केरल और पाण्ड्य प्रदेश कहीं स्वतंत्र रूप से गिनाए गए हैं और कहीं द्रविड़ प्रदेश थे कहने से उन सबका बोध होता रहा है । नर्मदा और तुंगभद्रा के बीच का प्रदेश भी अनेक प्रान्तों में विभक्त रहा है । दण्डकारण्य, विदर्भ, महाराष्ट्र और कुछ अंश तक कर्नाटक का समावेश इसी प्रदेश में होता था । वास्तव में देखा जाय तो यह प्रदेश उत्तर और सुदूर दक्षिण के बीच में पड़ता है और यह सदा से उत्तर तथा दक्षिण की विशेषताओं से लाभान्वित होता रहा है । मुसलमानों के काल में इसी प्रदेश को दक्षिण या दक्खिन कहते थे ।"[1]

दक्खिन के क्षेत्र निर्धारण के सम्बन्ध में डॉ० हुसैनी शाहिद का कहना है -

"चालुक्य वंश के शिलालेखों से ज्ञात होता है कि दक्षिणापथ उस क्षेत्र को कहते थे जो नर्मदा और सेतु के मध्य विद्यमान था । यह साढ़े सात लाख ग्रामों पर आधारित था । मेगस्थनीज़ ने आंध्र और कलिंग का उल्लेख किया है । लेकिन महाराष्ट्र और कर्नाटक के नाम बाद में जोड़ दिए गए हैं । उस युग में यह समस्त क्षेत्र दक्षिणापथ ही कहलाता है । इतिहासकारों का कहना है कि दक्खिन से अभिप्राय वह क्षेत्र है जिसके उत्तर में विंध्याचल तथा पूर्व एवं पश्चिम में समुद्र है । अन्य शब्दों

---

1. डॉ० श्रीराम शर्मा : दक्खिनी का पद्य और गद्य - पृ० सं० 10

में वह समस्त क्षेत्र जिसे आप हम आंध्र, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक का नाम देते हैं ; प्राचीन काल में एक ही नाम - दक्षिणापथ से सम्बोधित किया जाता ह था ।"[1]

दक्खिनी क्षेत्र की विशेषताओं पर विचार करते हुए डॉ० परमानंद पाँचाल का अभिमत उल्लेखनीय है -

"दक्खिन के नाम से प्रसिद्ध यह भू-भाग इतिहास में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । उत्तर तथा दक्षिण और आर्य तथा द्रविड़ संस्कृतियों का यह मिलन क्षेत्र रहा है । यह प्रदेश संस्कृतियों और विचारों का ही संगम-स्थल नहीं है बल्कि अनेक भाषाओं का भी मिलन केन्द्र रहा है । तेलुगु, कन्नड़ और मराठी के इसी क्षेत्र में खड़ी बोली अपनी सह-भाषाओं ब्रज, हरियाणी, अवधी और मेवाती आदि को साथ लेकर यहाँ उतरी तो एक नयी भाषा का जन्म हुआ, जिसे हम "दक्खिनी हिंदी" कहते हैं ।"[2]

1·1 आंध्र तथा सतवाहन वंश

उक्त क्षेत्र पर ई० पूर्व क्रमशः सन् दो सौ के लगभग आन्ध्र मृत्यों का शासन चलता रहा जो ईसा के बाद दो सौ पच्चीस वर्ष के आसपास तक चलता रहा । तत्पश्चात सतवाहन वंश के शासकों ने अपने राज्य का विस्तार बहुत दूर तक उत्तर भारत के क्षेत्रों तक किया । इस सम्बन्ध में, सांस्कृतिक दृष्टिकोण से, दक्खिनी के विद्वानों ने स्वीकार किया है -

"सतवाहनों के समय उत्तर और दक्षिण में जितना आदान-प्रदान हुआ उतना पहले कभी नहीं हुआ था । सन् 225 ई० से सन् 550 ई० तक इस क्षेत्र के इतिहास का पूरा पूरा ज्ञान नहीं है । कुछ ऐतिहासिकों

1· डॉ० हुसैनी शाहिद : लेख-दखन, दक्खिनी ज़बान और उसका उदय - सब रस, मासिक अगस्त, 1954 पृष्ठ सं० 48

2· डॉ० परमानन्द पाँचाल : दक्खिनी हिंदी विकास और इतिहास, पृ० 40

का कहना है कि इस समय राष्ट्रकूट वंश इस प्रदेश पर शासन करता था। छोटे-छोटे राजवंशों का पता चलता है, किन्तु इस ढाई सौ वर्ष तक इस प्रदेश का इतिहास सिलसिलेवार नहीं है और न उससे हमारा अधिक प्रयोजन है। हमारा काम चालूक्यों से शुरू होता है।"[1]

वास्तव में दक्खिन का इतिहास सन् 550 ई० ही से प्रारम्भ होता है, क्योंकि तभी से अधिकांश ऐतिहासिक सूत्र प्रत्यक्ष रूप से हमारे सम्मुख आते हैं। यही वह समय है जबकि चालूक्य वंश के शासन की स्थापना हुई। चालुक्यवंश कहा जाता है कि चालुक्य वंश के शासक राजपूत थे। यह उत्तर भारत से आए थे। कुछ इतिहासकार चालुक्यों को गुर्जर अथवा हूण बताते हैं, कुछ इन्हें रघुवंशी मानते हैं तथा कुछ लोग चालुक्यों को ग्रीक अर्थात् यूनानी भी बताते हैं। डॉ० श्रीराम शर्मा ने चालुक्यों की जाति एवं मूल स्थान के सम्बन्ध में निष्कर्ष निकालते हुए लिखा है -

"यहाँ इस विवाद में जाने की आवश्यकता नहीं कि चालुक्य लोग रघुवंशी के या गुर्जर, हूण अथवा यूनानी। चालूक्य इन चारों में से कोई रहे हों किन्तु इतना निश्चित है कि वे दक्षिण के नहीं थे और उनका आगमन उत्तर से हुआ था। उनके साथ बहुत से उत्तर भारतीय आए होंगे, जो उस समय की उत्तर भारत की कोई प्रचलित प्राकृत बोलते होंगे।"[2]
इनकी राजधानी कर्नाटक में थी। कर्नाटक आने के पश्चात् यह लोग स्थानीय नागरिकों से सम्बन्ध बढ़ाते हुए कुछ इस प्रकार स्थानीय संस्कृति में लीन हो गए कि दक्खिनी कहलाने लगे।

सातवीं शताब्दी ईस्वी में चालूक्यों ने बहुत उन्नति की तथा इनका बड़ा विस्तार हुआ। कृष्णा तथा गोदावरी के मध्यवर्ती क्षेत्र में चालूक्य वंश की एक शाखा, जिसे सूबेदारी प्रदान की गई थी, ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर डाला। इस प्रकार यह पूर्वी राज्य के शासक

---

1. डॉ० श्रीराम शर्मा - दक्खिनी का पद्य और गद्य - पृ सं० 11-12
2. डॉ० श्रीराम शर्मा - दक्खिनी का पद्य और गद्य - पृ सं० 13

पूर्वी चालूक्य कहलाने लगे । पूर्वी तथा पश्चिमी चालूक्य वंश ने सन् 753 तक दक्खिन की बड़ी सेवा की जिसका विवरण कन्नड़ी भाषा के साहित्य मिलता है । चीनी यात्री ह्यूनसांग ने सन् 671 ई० में इस क्षेत्र की यात्रा की थी । उसने अपने यात्रा विवरण में चालूक्यों की बहुत प्रशंसा की है । चालूक्य वंश के नौ राजाओं ने सफलतापूर्वक शासन किया । इनके चौथे राजा, पुलकेशी द्वितीय से सन् 620 ईस्वी में हर्षवर्द्धन का युद्ध हुआ था । युद्ध में नर्मदा नदी के तट पर, हर्षवर्द्धन को पराजय हुई तथा पुलकेशी द्वितो विजयी हुआ ।

1.2 राष्ट्रकूट

चालूक्यों के पतन के पश्चात् कर्नाटक में मान्यखेट जो कि आधुनिक मलखेड़ है राष्ट्रकूट वंश के राज्य की राजधानी बना । कहा जाता है कि दक्खिन में राष्ट्रकूट चौथी शताब्दी में आए थे तथा उन्होंने छोटे-छोटे राज्यों की स्थापना भी की थी । राष्ट्रकूटों का सम्बन्ध "रटा" वंश से भी माना जाता है तथा इनके सम्बन्ध में यह भी कहा जात है कि यह उत्तरी दक्खिन के निवासी थे । वास्तविक तथ्य यह है कि राष्ट्रकूट वंश के शासकों ने कन्नड़ भाषा को राजकीय संरक्षण प्रदान किया था । इन्होंने कन्नड़ संस्कृति को अपना ओढ़ना बिछौना बना लिया था अतः इसमें संदेह है कि यह लोग मूल रूप से कन्नड़ नहीं थे । राष्ट्र कूट वंश के क्रमशः बीस शासकों ने सन् 973 ई० तक दक्खिनी संस्कृति को लाभान्वित किया । कहा जाता है कि एलोरा की अधिकांश गुफ़ाए राष्ट्रकूट शासकों के युग में निर्मित एवं सुदृढ़ हुई । सन् 973 ई० के आसपास चालूक्य वंश के कुछ शेष बचे योद्धाओं ने सुसंगठित रूप से राष्ट्रकूटों पर हल्ला बोल दिया और अपना खोया हुआ शासन प्राप्त करने में सफल हुए ।

1·3 कल्यानी अथवा परवर्ती चालूक्य

परवर्ती चालूक्यों ने आधुनिक बीदर के निकट कल्यान नामक स्थान को राजधानी बनाया । परवर्ती चालूक्य वंश के क्रमशः बारह शासकों ने सन् 1190 ई0 तक राज्य किया । कालान्त में शासन में कुछ त्रुटियाँ आ जाने के कारण विभिन्न सूबेदारों ने राज्य का बंटवारा कर लिया ।

1·4 यादव, काकतीय तथा होसला राज्य

दक्खिन के उत्तर पश्चिमी क्षेत्र पर यादव नरेशों का अधिपत्य स्थापित हो गया । यह क्षेत्र अब महाराष्ट्र कहलाता है । वरंगल में काकतियों का राज्य अस्तित्व में आया । द्वार समुद्रम, दक्षिणी कर्नाटक में होयसला राजाओं ने द्वार पतिपुर को अपनी राजधानी बनाया ।

यादव नरेशों की राजधानी देवगिरि थी जिसे मुहम्मद तुग़लक़ ने कालान्तर में दौलताबाद का नाम दिया था । अब्दुल मजीद सिद्दीकी के अनुसार -

"इन तीनों वंश के शासकों ने मुसलमानों के दक्खिन में आने के पूर्व क्रमशः एक शताब्दी तक शासन किया । यादव वंश के सात, काकतीय वंश के दस तथा होयसला वंश के ग्यारह राजा हुए हैं । अन्ततः चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुसलमानों ने तमाम दक्खिन पर अधिकार कर लिया ।"[1]

डॉ0 परमानन्द पांचाल का मत है -

"देवगिरि पर अलाउद्दीन की विजय के बाद दक्खिन अथवा दक्षिणापथ के इतिहास का नया अध्याय प्रारम्भ हुआ । अलाउद्दीन खिलजी दक्षिण पर अधिक प्रभाव नहीं डाल सका इसके सेनापति मलिक काफ़ूर ने देवगिरि के साथ-साथ वरंगल पर अधिकार करके उन घटनाओं के लिए पृष्ठ-भूमि तैयार की जो मुहम्मद तुग़लक़ के समय में घटित हुई ।"[2]

1· अब्दुल मजीद सिद्दीकी : मुक़द्दमा तारीख़-ए-दकन, पृ सं0 13
2· डॉ0 परमानन्द पांचाल : दक्खिनी हिन्दी-विकास और इतिहास, पृ0 41

अलाउद्दीन के सेनापति मलिक काफूर ने सन् 1312 ई० में देवगिरि पर विजय प्राप्त करके उसे उत्तरी राज्य से जोड़ दिया ।

खिल्जियों के उत्तराधिकारी होने के कारण तुग़लक् सन् 1323 ई० में वरंगल को तहस नहस करके उसे भी उत्तर के एक सूबे में बदल दिया । तत्पश्चात् तुग़लक् ने कर्नाटिक और उसके निकट कम्पनी पर सन् 1327 ई० में अधिकार कर लिया । इस प्रकार समस्त दक्खिन मानो दिल्ली सल्तनत के अधीन होकर रह गया । मुहम्मद तुग़लक् के युग में पहले कुतलग़ खाँ और बाद में भाई मुल्ला निज़ामुद्दीन दक्खिन के गवर्नर बनाए गए । इनके दुर्ग आज भी देवगिरि की प्राचीन अवस्था की याद दिलाते हैं ।

दक्खिन की यह अधिकृत स्थली दिल्ली सलतनत से काफी दूर पड़ती थी । अतः दक्खिन को उत्तर भारत से पूर्ण रूपेण जोड़ने के लिये संभवतः मुहम्मद बिन तुग़लक् ने देवगिरि को अपनी राजधानी बनाने का सपना देखा । यह भी हो सकता है कि उसने अपनी राजधानी को सुदूर उत्तरी आक्रमणों से सुरक्षित भी रखना चाहा हो । चाहे कुछ भी राजनीतिक कारण रहे हो, सन् 1327 ई० में तुग़लक् ने देवगिरि को अपनी सल्तनत की राजधानी बनाने का असफल प्रयास अवश्य किया । सुल्तान की सरकार केन्द्र में दम तोड़ने लगी, फलस्वरूप अन्य सूबों के साथ-साथ दक्खिन भी मुहम्मद बिन तुग़लक् के हाथ से फिसल गया ।

1·5 विजयनगर राज्य

दक्खिन में जिन स्थानीय शक्तियों को खिलजी तथा तुग़लक् वंश के बादशाहों ने दबाए रखा था, अवसर पाकर वे शक्तियाँ फिर संगठित होने लगी । इस संगठन के नायकों के रूप में हरिहर और बुक का नाम अग्रणीय है । कुछ ही समय में इन्होंने तुंभद्रा की घाटी में विजयनगर राज्य की स्थापना कर दी । इनका संबंध वरंगल से बताया जाता है । यह लोग राजा गणपति के राज्याश्रयी थे । यह भी कहा जाता है कि इनका सम्बन्ध कर्नाटिक से था । अन्य धारणा के अनुसार हरिहर और बुक

के पूर्वज नागण्दी के सामन्त थे तथा होयसला वंश के शासकों के यहाँ सूबेदार थे । कुछ वि शिलालेखों में इन्हें महानुण्डेश्वर कह कर सम्बोधित किया गया है । हरहर और बुक के व्यक्तित्व को बनाने में माधवाचार्य की भूमिका का भी उल्लेख मिलता है । विजय नगर राज्य की स्थापना सन् 1336 ई० में हुई । हरिहर और बुक ने गुरू माधवाचार्य की छत्र-छाया में राज कार्य चलाया । इस राज्य पर कुल तीन वंशों ने शासन किया ।

1•5•1 <u>संगम वंश</u>

पहला वंश "संगम" कहलाया । यह हरिहर के पिता के नाम से सम्बद्ध था । सन् 1479 ई० तक संगम वंश के कुल आठ राजाओं ने शासन किया । अंतिम राजा के कमज़ोर पड़ने पर एक सेनापति ने शासन पर अधिकार कर लिया ।

1•5•2 <u>सालवा वंश</u>

संगम वंश के पश्चात विजयनगर पर सालवा वंश का अधिकार हो गया । इस प्रकार नरसिम्हा तथा उसके तीन उत्तराधिकारियों ने, क्रम से विजयनगर पर शासन किया ।

1•5•3 <u>तोलवा वंश</u>

सन् 1499 ई० में सालवा शासक के एक मंत्री नरसा नायक ने शासक को पदच्युत करके सिंहासन संभाल लिया । इस प्रकार सालवा के पश्चात् तोलवा वंश का शासन, विजय नगर पर, स्थापित होगया । तोलवा वंश के पाँच शासकों का उल्लेख मिलता है । अंत में कृष्ण देवराय के जामाता राम राज ने अंतिम शासक सदाशिवराय को गद्दी से उतार कर राज्य पर अधिकार कर लिया ।

विजयनगर राज्य का सितारह, क्रमशः दो सौ वर्ष के उत्कर्ष के पश्चात्, उस समय डूब गया जब कि मुसलमान शक्तियाँ पारस्परिक-रूप से दक्खिन में संगठित हो चुकी थीं ।

1·6 बहमनी राज्य

दक्खिन में प्रशासन की देख भाल के उद्देश्य से जो सामान्य सुल्तान मुहम्मद तुग़लक़ द्वारा नियुक्त किये गए थे वे तुग़लक़ के नियंत्रण से बाहर हो रहे थे । अतः तुग़लक़ ने उन्हें कुचलने के लिये आक्रमण किया तो उन सामन्तों ने अपने एक वरिष्ठ साथी इस्माईल मिख़ को अपना बादशा घोषित कर दिया । परन्तु तुग़लक़ के लौटने पर दिल्ली की सेना को देवगिरि तथा गुलबर्गा की सेना के सम्मुख हथियार डालना पड़ा तो सन् 1347 ई० में समस्त मुसलमान सामन्तों ने संगठित होकर एक स्वतंत्र राज्य का बुनियाद डाली और इस्माईल मिख़ उर्फ़ नासिरुद्दीन शाह को दक्खिन की गद्दी से उतार कर उसके स्थान पर एक अन्य सामन्त ज़फ़र खाँ का राज्याभिषेक किया । ज़फ़र खाँ को अलाउद्दीन हसन बहमनशाह का लक़ब दिया गया । इसी बहमनशा के नाम पर आधारित राज्य बहमनी राज्य कहलाया ।

बहमनी वंश के बादशाहों ने क्रमशः दो सौ वर्ष तक दक्खिन पर शासन किया । अब्दुल मजीद सिद्दीक़ी के अनुसार -

"सच तो यह है कि इन शासकों ने अपनी असीम सांस्कृतिक सेवाओं से दक्खिन को दक्खिन बनाया । दक्खिन की आधुनिक संस्कृति बहुत कुछ इन्हीं लोगों के परिश्रम का फल है ।"[1]

वैसे तो बहमनी राज्य की स्थापना देवगिरी में हुई थी परन्तु कालान्तर में गुलबर्गा को राजधानी बनाया गया । गुलबर्गा सन् 1430 ई० तक बहमनी राज्य की राजधानी रहा । इस वंश के कुल अठारह बादशाह

1· अब्दुल मजीद सिद्दीक़ी ： मुक़द्दमा तारीक़ -ए- दक़न - पृ सं० 17

बादशाह हुए है । यह तथ्य सर्व विदित है कि पहले तीन शासकों के युग में बहमनी सल्तनत मज़बूत हुई । परन्तु आठवें बादशाह फ़िरोज़शाह के युग में बहमनी शासन की अभूतपूर्व उन्नति हुई, जिसके अवशेष आज तक बाकी है ।

1·7 बहमनी साम्राज्य का पतन

फ़िरोज़शाके के भाई अहमद शाह ने सन् 1430 ई0 में गुलबर्गा के स्थान पर बीदर को राजधानी का श्रेय प्रदान किया । तब ही से बहमनी शासन के पतन का प्रारम्भ होने लगा । अहमदशाह ने दक्खिन के स्थानीय हिन्दु-मुसलमानों की अपेक्षा विदेशी तुर्की व ईरानी लोगों पर अवलम्बित रहना शुरू किया । दक्खिन की मिट्टी बाह्यदबाव को कभी सहन नहीं करती अत: समाज में दो विरोधी मूल्यों का संघर्ष आरम्भ हो गया । एक स्थानीय दक्खिनी लोग थे तथा दूसरे विदेशी ।

1·8 दक्खिनी तथा आफ़ाक़ी

विदेशी ईरानी एवं तुर्क स्वयं को आफ़ाकी (उच्चकोटि) मानते थे तथा स्थानीय दक्खिनी लोगों को तुच्छ समझते थे । इन दो वर्गों के मध्य, मुहम्मद शाह लश्करी के युग में, संघर्ष इतना बढ़ गया कि बहमनी सलतनत की भावात्मक एकता टूटने लगी । डॉ0 इक़बाल अहमद के अनुसार -

"जो मुसलमान ईरान, ईराक़ तथा अरब से आये थे उन्हें आफ़ाकी के नाम से सम्बोधित किया जाता था । यही आफ़ाकी लोग उच्च वर्ग से थे और इन्हीं की भाषा और वेशभूषा उच्च मानी जाती थी । वास्तव में ये लोग अपने आपको केवल हिन्दुओं से ही नहीं बल्कि मुसलमानों से भी श्रेष्ठ समझते थे । स्वभावत: दक्खिनी मुसलमान भाषा और अध्ययन के क्षेत्र में आफ़ाक़ियों की श्रेष्ठता को स्वीकार करने पर भी छोटेपन की

भावना से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया से वंचित न हो सके ।"[1]

इस विश्रृंखलन का मूल कारण लश्करी का मंत्री महमूम गावाँ था जो कि व्यापार करने के उद्देश्य से विदेश से आकर दक्खिन में बस गया था । धीरे-धीरे शासक पर महमूद गावाँ की पकड़ मज़बूत होती चली गई । बहमनी वंश के चौदह वे बादशाह महमूदशाह के युग तक आते-आते सन् 1490 ई0 में समस्त सूबेदारों ने राज्य के विरुद्ध बग़ावत कर डाली । राजधानी भी एक तुर्क वंश के बरीद के हाथ में आ गई । स्थिति यहाँ तक पहुँची कि महमूदशाह तथा उसके चारों पुत्र बरीदों की कठपुतली बन गए । बरीदों ने अंतिम शासक हकीमुल्लाह को कुछ ऐसा परेशान किया कि सन् 1527 ई0 में बहमनी वंश का अंतिम शासक अपनी राजधानी बीदर को छोड़ कर ~~अह~~ अहमदनगर चला गया ।

बहमनी साम्राज्य के अंतिम शासक हबीमुल्लाह के अहमदनगर चला जाने के पश्चात् इस सल्तनत का अंत हो गया, परिणाम स्वरूप

"दक्खिन में पाँच राज्यों की स्थापना हुई । यह पाँच राज्य अधिक समय तक पृथक न रह सके इनमें भी आपस में विलय हुआ ।

1.9 <u>बहमनी शासन के पतन के पश्चात - दक्खिन में नए राज्यों की स्थापना</u>

बीजापुर में जाकि बहमनी साम्राज्य का उत्तर पश्चिमी सूबा था, आदिलशाही वंश का शासन स्थापित हो गया । उत्तरी सूबे अहमदनगर में निज़ाम शाही वंश के शासन की शुरूआत हुई । तटवर्ती सूबे बरार में इमादशाही शासन अस्तित्व में आया । दक्षिणपूर्वी सूबे गोलकुण्डा में कुत्बशाही वंश की बुनियाद पड़ी और बीदर में बहमनियों से गद्दी छीन कर बरीदों ने बरीदशाही शासन सुसज्जित कर लिया ।

---

1. डॉ0 इक़बाल अहमद : दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृष्ठ सं0 17

1·10 नए राज्यों का विलय

सन् 1574 ईस्वी में अहमद नगर में बरार का तथा सन् 1619 ईस्वी में बीजापुर में बीदर का विलय हो गया । शेष तीन राज्य, आदिलशाही, निज़ामशाही तथा कुत्बशाही क्रमशः दो सौ वर्ष तक बाकी रहे । इन्में दक्खिन के सांस्कृतिक मूल्य अपने चरम उत्कर्ष को छूते रहे हैं । दक्खिनी संस्कृति का यह उत्कर्ष इन राज्यों में रचे गए साहित्य में समाया हुआ है ।

.....

2· ग़व्वासी का जीवन

हिन्दी और उर्दू के अधिकांश महाकवियों की भाँति दक्खिनी कवि "ग़व्वासी" का जन्म एवं बाल्यकाल अन्धकार को गर्त में विलुप्त है । कवि के वास्तविक नाम के सम्बन्ध में भी प्रामाणिक अथवा अप्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती । अन्तः साक्ष्य तथा बहिसाक्ष्य के आधार पर कवि की संज्ञा "ग़व्वासी" निश्चित होती है । इन्होंने अपने उपनाम को -ग़व्वासी, ग़व्वास, ग़वास तथा ग़व्वासियाँ आदि विभिन्न रूपों में प्रस्तुत किया है ।

2·1 जन्म एवं समय

अब तक प्रकाश में आई हुई सामग्री की सहायता से यह ज्ञात होता है कि दक्खिनी का यह महान कवि गोलकुण्डा के सुल्तान इब्राहीम कुल कुत्बशाह के शासन काल में §1550-1580 ई0§ जन्म ले चुका था । जिस समय अपनी आयु की तरुण देहलीज पार कर रहा था उस समय गोलकुण्डा पर सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह का शासन था । डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय तथा अकबरुद्दीन सिद्दीकी के मतानुसार -"ग़व्वासी की जन्मतिथि ज्ञात नहीं है । किन्तु यह अनुमान किया जाता है कि यह इब्राहीम कुत्बशाह के शासन काल में पैदा हुआ था और इसने सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह के शासन काल में कविता करना आरम्भ किया ।"[1]

ग़व्वासी के जन्म तथा मृत्यु के सम्बन्ध में दक्खिनी के वरिष्ठ विद्वान डॉ0 श्रीराम शर्मा जी बिना किसी विस्तार के व्यक्त करते हैं -

"ग़व्वासी की जन्म तिथि तथा मृत्यु-तिथि ज्ञात नहीं है । उसका प्रथम आख्यानक काव्य सन् 1610 ई0 में और दूसरा सन् 1631 ई0 में लिखा गया, अतः इतना निश्चित है कि कवि इस अवधि में विद्यमान था ।"[2]

1· संपादक : डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी - ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदिउज्जमाल, पृ सं0 3

2· श्रीराम शर्मा :दक्खिनी हिन्दी का साहित्य, पृष्ठ सं0 274

"ग़व्वासी" को उसके युग का सर्वश्रेष्ठ एवं लोकप्रिय कवि होने का श्रेय प्राप्त है। डॉ० इक़बाल अहमद का कथन है -

"मुल्ला ग़व्वासी अपने समय का सबसे अधिक सफल और सिद्धहस्त कवि था। किन्तु इसकी जन्म तिथि ज्ञात नहीं है और न मृत्यु के सम्बन्ध में ही निश्चित कहा जा सकता है।"[1]

हिन्दी में दक्खिनी के जो अन्य शोध ग्रंथ प्रकाश में आए हैं उनमें भी "ग़व्वासी" के जीवन-वृत्त पर विशेष प्रकाश नहीं डाला गया -

"इनके {ग़व्वासी} जीवन-वृत्त के सम्बन्ध में पूरी जानकारी नहीं है।"[2]

डॉ० रहमतुल्लाह ने तो ग़व्वासी को दक्खिनी का अज्ञाततम कवि माना है -

"यह दक्खिनी का सर्वाधिक अज्ञात कवि था। उसके जीवन के सम्बन्ध में बहुत कम सामग्री प्राप्त होती है।"[3]

दक्खिनी कवियों में ग़व्वासी का स्थान निर्धारित करते हुए डॉ० वी पी मुहम्मद कुंज मेत्तर ने इनके जीवन वृत्त को इस प्रकार स्वीकार किया है।

"दक्खिनी हिन्दी के आख्यान कवियों में ग़व्वासी को श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। बहुत से अन्य कवियों की भांति ग़व्वासी का जीवनवृत्त अंधकाराच्छादित है।"[4]

---

1. इक़बाल अहमद, दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० 124
2. डॉ० परमानन्द पांचाल, दक्खिनी हिंदी : विकास और इतिहास - पृ सं० 112
3. डॉ० रहमतुल्लाह, दक्खिनी हिंदी और उसके प्रेमाख्यान, पृ सं० 55
4. डॉ० वी पी मुहम्मद कुंज मेत्तर, दक्खिनी हिंदी का सूफ़ी साहित्य - पृष्ठ सं० 138

उपरोक्त तथ्यों को दक्खिनी पर, उर्दू में लिखे गए शोध ग्रंथों में न केवल स्वीकार किया गया है अपितु पुष्ट रूप में उद्धृत किया गया है । उदाहरणार्थ डॉ0 सय्यद मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर", नसीरुद्दीन हाशमी, मीर सआदत अली रिज़्वी तथा डॉ0 गुलाम उमर खाँ आदि के न इस दिशा में उल्लेखनीय है ।

"उर्दू शहपारे" में डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" लिपिबद्ध करते हैं -

"गुव्वासी इब्राहीम कुत्बशाह के अहद में पैदा हुआ और उम्र में वजही से छोटा था । मुहम्मद कुली कुत्बशाह के अहेद में इसकी शायरी ने, उस वक़्त जबके वो वजही का हरीफ़ बन चुका था, इसको मशहूर किया

"दकन में उर्दू" नामक पुस्तक में नसीरुद्दीन हाशमी ने व्यक्त किया है -

"सुल्तान मुहम्मद कुत्बशाह के अहेद में इसकी शायरी चमकी और सुल्तान अब्दुल्लाह के अहेद में इसको शाही तक़र्रुब हासिल हुआ और बड़ी इज़्ज़त व शौकत हासिल हुई ।"[1क]

मसनवी सैफ़ुलमुलूक व बदीउज्जमाल" के मूल संपादक मीर सआदत अली रज़्वी ने मसनवी की भूमिका में "गुव्वासी" के प्रारम्भिक जीवन पर इस प्रकार प्रकाश डाला है -

"गुव्वासी" की तारीख़-ए-पैदाइश का इल्म नहीं । क़रीने क़्यास ये है के वो सुल्तान इब्राहीम कुत्बशाह के अहेद में पैदा हुआ होगा और मुहम्मद कुली कुत्बशाह के ज़माने में शायरी शुरू की होगी । उसकी इब्तेदाई जिन्दगी उसरत में बसर हुई, वो सरकारी मुलाज़ेम था और यही उसकी गुज़र-औक़ात का ज़रिया था ।"[2]

1· डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर", उर्दू शहपारे, पृष्ठ सं0 104

2· नसीरुद्दीन हाशमी, "दकन में उर्दू" पृष्ठ सं0 17

3· मीर सआदत अली रज़्वी, सैफ़ुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ सं0 ।

"ग़व्वासी" की मसनवी, "मैना सतवन्ती" के संपादक डॉ० गुलाम उमर खाँ ने मसनवी की भूमिका में लिखा है -

"ग़व्वासी" वजही और मुहम्मद कुली कुत्बशाह के मुकाबले में कम उम्र था । क़यास है के अहदे मुहम्मद कुली {सन् 1580-1612 ई०} के निस्फ़आखर में यानि सोलहवीं सदी के रुबए अव्वल में उसने मश्क-ओ-मज़ावेलत की बदौलत शेर गोई में महारत हासिल करली थी और तदरीजी तौर पर उसे अपनी सलाहियतों पर ऐतमाद और अपने कमालेफ़न का शहीद एहसास होता गया ।"[1]

2.2. "ग़व्वासी" का नाम

मौलवी सकावत मिर्ज़ा ने अपने एक शोधात्मक लेख, "मलिकुश्शोअरा ग़व्वासी और उसका कलाम" में जो कि ओरिअन्टल कालेज मेगज़ीन, नवम्बर सन् 1956 ई० में प्रकाशित हुआ था, "ग़व्वासी" का नाम शेख़ बहाउददीन लिखा है जो सत्य पर आधारित नहीं है । वास्तव में मिर्ज़ा साहब को "निसाब-उल-एहतेसाब" के लिपि-मुलेखक {कातिब} शेख़ बहाउददीन के उपनाम "ग़व्वास" के कारण भ्रम हो गया । उन्होंने लिपि-मुलेखक {कातिब} को गोलकुण्डा का राजकवि सिद्ध करने का असफल प्रयास किया है ।

डॉ० जमाल शरीफ़ ने भी एक शोध-लेख "ग़व्वासी" का नाम" में सकावत मिर्ज़ा के कथन को निराधार माना है । यह लेखक "इदारह अदबियात-ए-उर्दू" हैदराबाद से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका "सबरस" के जनवरी सन् 1968 ई० के अंक में प्रकाशित हुआ था ।

दक्खिनी से सम्बन्धित हिन्दी के किसी भी शोध ग्रंथ में "ग़व्वासी" के नाम को लेकर ऐसी कोई चर्चा नहीं की गई जिसका आधार अप्रामाणिक हो । "ग़व्वासी" ने स्वयं जिन उपनामों का प्रयोग अपनी

---

1. सम्पादक : डॉ० गुलाम उमर खाँ - "ग़व्वासी" मैना सतवन्ती, पृ सं० 5

कविता में किया उसी को मान्यता एवं महत्त्व प्रदान किया गया। ह इतना अवश्य हुआ कि वर्तनी तथा उच्चारण की सामान्य समस्या के का शोधकर्ता "ग़्वास" को "ग़वास" और "ग़्वासी" को "ग़वासी" लिखे रहे। उदाहरण के तौर पर सन् 1954 में श्रीरामशर्मा जी ने कवि का नाम "ग़वासी" लिखा।"[1] बाद में सन् 1972 में उन्होंने इसे "ग़्वास से संबोधित किया।[2] राहुल जी ने "ग़्वासी" को "गोवासी" बताया है।[3]

शोध्य दक्खिनी कवि ने अपने लिए जो नाम चुने हैं उसका सप्रमाण विवरण इस प्रकार है -

2.2.1 ग़्वासिया

"ग़्वासिया है आज तेरा वक़्त क्या सबब
दरिया तू ज़ौक़ का तूँ उबलता नहीं हुनोज़।"[4]

x x x

"ग़्वासिया नफ़्स तेरे जौहरां पे थे
क्यों ना हुए ज़्याद ख़रीदार का हवस।"[5]

x x x

"ग़्वासिया इस जगे निर्मल निच्छल गुज़ार में
बातां के फूलां सूँ भारिया सो हूँ रंगीला झाड़ में।"[6]

---

1. श्रीराम शर्मा, दक्खिनी का पद्य और गद्य, अनुक्रमणिका - पृ सं0 ।
2. डॉ0 श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिन्दी का साहित्य, पृ सं0 273
3. महापण्डित राहुल सांकृत्यायन, दक्खिनी हिंदी काव्य धारा, पृ सं0
4. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, कुल्लियात-ए-ग़्वासी - पृ सं0 120
5. -वही- 121
6. -वही- 133

"लाब्बाली अच्छ सदा हौर ज़ोक़ कर ग़व्वासिया
है तेरे सर पर कवी बारा इनामाँ ग़म न खा ।"[1]

2.2.2 ग़व्वास

"इस दौर के नारियाँ में तूं अय नाज़ भरी आज
"ग़व्वास" की आँखियाँ में दिसे सब थे अजबतर ।"[2]

+ + +

"ग़व्वास हो कइया यूं ग़ज़ल मोतियाँ भरी
तुज बेनज़ीर हुस्न के समदूर के बदल ।"[3]

+ + +

"मैं इन्तेज़ारी केता खींचतो रहूं ग़व्वास
उताल ताइ नईं मिंज इन्तज़ार कूं बी ।"[4]

+ + +

"है शाकेर ज्कोई उसके दिल कूं "ग़व्वास"
शकर थे मिठो बात तेरी लगे ।"[5]

2.2.3 ग़व्वासी

"ज़माने आज के कहता ख़ल्क़ ग़व्वासी कूं
यू बेबदल है बचन मोतियाँ पुराने में ।"[6]

x x x

"ग़व्वासी" यूं जल्या बो तुज पिरत की आग बुजातो नईं
हनोज़ हुड़किया केरी भुगल में ज्यूं अंगारे है ।"[7]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियात-ए-ग़व्वासी - पृ सं0 113
2. -वही- 120
3. -वही- 125
4. -वही- 161
5. -वही- 172
6. -वही- 134
7. -वही- 138

"ग़व्वासी" होके ज्यूँ है त्यूँ कता हूँ झूट नईं इसमें
न देख्या कोई दुनिया में तुज ऐसी हूर कूँ अजनूँ ।"[1]

x x x

"ग़व्वासी" मिंज दीवाने कूँ नहीं ज़रई ख़बर कुच यू
जो काँ गता हूँ काँ अचता हूँ किस संगात फिरता हूँ ।"[2]

2.3. शिक्षा

"ग़व्वासी" की शिक्षा तथा काव्य-गुरु आदि के सम्बन्ध में आवश्यक प्रामाणिक जानकारी का अभाव है, "ग़व्वासी" से सम्बद्ध बहिर्साक्ष्य एवं प्राप्त अन्तःसाक्ष्य दोनों ही आधार इस दिशा में मौन हैं ।

2.4. "ग़वासी" की आत्मश्लाघा

उसने अपने काव्य में न तो किसी कवि की प्रशंसा ही की और न ही किसी को आदर्श माना । ग़व्वासी को अपनी काव्य-कला पर अत्यंत गर्व था -

"जतन कर तन कूँ साजे सो हमी हैं
दिलाँ को मस्त बाजे सो हमी हैं
शहाँ हर वक़्त के राजे तो हैं सात्र
सबा बारे के राजे सो हमी है
परम का मस्त मद पी मस्त होकर
गह व बेगाह गाजे सो हमी हैं
ख़लक़ में खोल कहने दर्द अपना
"ग़व्वासी" सख़्त लाजे सो हमी है ।"[3]

---

1. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी - पृ सं0 138
2. -वही- 143
3. -वही- 145

यथा

अगरचे हूँ शह के बन्दयाँ में हक़ीर
वले शेर के फ़न मे हूँ बे नज़ीर ।"[1]

ज्ञात होता है कि वह किसी का शिष्य नहीं था । उसने निजी प्रतिभा के आधार पर निरन्तर अभ्यास करके अपनी विशेष पहचान बनाई थी ।

"तूतियाँ सब हिन्द की रग़बत करें त्यूं आज खुश
शकरिस्तान हो "ग़व्वासी" शकर अफ़्शानी किया ।"[2]

x x x

"ग़व्वासिया" नफ़ीस तेरे जोहराँ पे थे
क्यों ना होवे ज़्याद ख़रीदार का हवस ।"[3]

x x x

"ज़माने आज के मजनूँ हो पैदा
हुआ मशहूर "ग़व्वासी" दक्खिन में ।"[4]

यथा

"हुनर की गवी का सो मैं बाग हूँ
बचन के उतम गंज का नाग हूँ
सके कौन मिलने मेरे तौर में
कि रुस्तम हूँ मैं आज के दौर में ।"[5]

"ग़व्वासी" ने अपने समकालीन कवियों का उल्लेख नहीं किया है । उसने पूर्ववर्ती कवियों को भी श्रद्धांजलि अर्पित नहीं की और नही अपने से छोटे

1· संपादक : डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी - ग़व्वासी सैफुल मुलूक - व बदीउज्जमाल - पृ सं० 219
2· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियात-ए-ग़व्वासी - पृ सं० 109
3· -वही- 121
4· -वही- 129
5· संपादक : डॉ० राजकिशोर पाण्डेय -अकबरुद्दीन सिद्दीकी, सैफुलमुलूक व बदिउज्जमाल - पृ सं० 22

कवियों का उत्साह बढ़ाया । "ग़व्वासी" का यह व्यवहार दक्खिनी कवियों की तत्कालीन परम्परा के विपरीत था । इसके विरुद्ध वज़ही परम्परा का अनुसरण करते हुए पूर्ववर्ती कवियों का आदर सहित उल्लेख किया है । पता नहीं क्यों ग़व्वासी ने वजही पर व्यंग-बाण कसे हैं -

"बड़े फ़हमदारां में हूँ कम फहाम
किया हूँ यूँ नादानगी सूँ तमाम
"ग़व्वासी" कमीने पो करना नज़र
दुआ हक़ सूँ मंगना मेरे हक़ उपर
हुआ नज़्म यू नांव सूँ सब तमाम
बहक़्क़े मुहम्मद अलेहस्सलाम ।"[1]

"ग़व्वासी" ईश्वर की महानता को स्वीकार करते है, मानो गुरु के अभाव में ईश्वर के प्रति उनका मन विह्वल हो उठता है -

"ग़व्वासी" जो तुज दार का ख़ाक है
तेरी बाट का महज़ ख़ाशाक है
दिशा कीमियां कर तूं मुझ ख़ाक कूँ
दे रंग बास मुज दिल के फल फांक कूँ ।"[2]

x x x

"ओ ख़ालिक़ है सब ख़ल्क़ का खास-ओ-आम
ओ मालिक अहे मलक सब का तमाम
ओ रज़्ज़ाक़ है रिज़्क़ का देनहार
के देने कु उस के करे कोन शुमार
कितियां कुं सब्र देके साबिर किया
कितियां कुं फकीरी ने नादिर किया ।"[3]

1• संपादक : डॉ० गुलाम उमर खां, मैना सत्वन्ती - ग़व्वासी, पृ सं० 194
2• संपादक : डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी, सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल - ग़व्वासी - पृ सं० 2
3• सम्पादक : डॉ० गुलाम उमर खां - ग़व्वासी - मैना सत्वन्ती-पृ सं० 118

"भर अमृत के चश्मे मेरे कलक में
रतन ग़ैब के ल्या मेरे सिल्क में ।"[1]

"ग़व्वासी के काव्य में अन्य किसी कवि के लिए आदर की भावना नहीं मिलती । उसकी अभिव्यक्ति में प्रायः अहं अधिक है । कवि का आत्मसम्मान उसके आत्म गौरव में बदलता है । उसका यह आत्मगौरव आत्म स्तुति में परिवर्तित होकर मानो अहंकार की सीमा को भी पार कर जाता है -

"हुनर को गवी का नी मैं बाग हूँ
बचन के उत्तम गंज का नाग हूँ
सके कौन मिलने मेरे तौर में
के रुस्तुम हूँ मैं आज के दौर में ।"[2]

x x x

"ग़व्वासी" जौहरां जोती तो लई धरता जुनूँ में आ
कहाँ वो जौहरी पारख जो परखे जौहरां मेरे ।"[3]

x x x

"जित हैं जो तूती हिन्दुस्तान के
भिकारी है निज शकरिस्तान के ।"[4]

"ग़व्वासी" का गर्व नैतिक दृष्टिकोण से उचित नहीं है । काव्य-कला में दक्ष होने के कारण ग़व्वासी स्वयं को महान ही समझते रहे । काव्य के सैद्धान्तिक अथवा शास्त्रीय दृष्टिकोण से उनकी महानता असंदिग्ध है ।

1· सम्पादक : डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दकी ग़व्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 4

2· संपादक: मीर सआदतअली रज़्वी - ग़व्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल पृ सं० 16-17

3· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी पृ सं० 162

4· सम्पादक : डॉ० राजकिशोर पाण्डेय अकबरुद्दीन सिद्दीकी - ग़व्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 21

2.5 ग़व्वासी का प्रारम्भिक जीवन

"ग़व्वासी" के प्रारम्भिक जीवन के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट जानकारी नहीं मिलती। केवल इतना ज्ञात होता है कि उन्होंने अपना प्रारम्भिक जीवन ग़रीबी में बिताया। प्राय: आर्थिक संकटों को भोगते रहे। जीवन की जटिल विषमताओं को उन्होंने मसनवी "सैफ़ुलमुलूक व बदिउज्जमाल" में वाणी दी है। कवि, दीन-हीन भाव सहित, शाहे वक़्त अब्दुल्लाह कुतुबशाह से सविनय प्रार्थना करता है कि सुल्तान उसको आदर प्रदान कर कवियों में सम्मानित करें, गुणों के आधार पर उसके काव्य की प्रशंसा करें तथा उसके दैनिक जीवन की कठिनाइयाँ दूर करें, उसका उद्धार करें। वह शाह से प्रार्थना करता है कि शाह उसकी प्रतिभा के प्रति उदार हों, मन कलुषित न करें। उसका मन शाह द्वारा प्रोत्साहित किए जाने हेतु लालायित हो उठता है -

जो सुल्तान अब्दुल्लाह इन्साफ़ कर
मेरे जौहरां पो ये दिल साफ़ कर

    देवे दाद मेरा भोत मान पाऊँ
    अमल दौर ये ता गारेबान पाऊँ

के यू शाह मेरा ख़रीदार होवे
तो ताज़ा मेरा सब्ज़ गुल्ज़ार होवे

    के ग़मगीन हूँ मैं बख़्त सेतार थे
    धरू ज़ग़दगे ख़ाक इस आज़ार थे

परेशानगी में जम्या ख़याल मैं
ले आया हूँ ऐसे रतन थाल मैं

    जो भोगी नवल शाह सती फरह पाऊँ
    तो इस थे रतन ख़ास ढेर हुण्डल्याऊँ

अगरचह हूँ शह के बन्दयाँ में हक़ीर
वले शेर के फन में हूँ बे नज़ीर ।"[1]

"ग़व्वासी" की उपरोक्त विपदा से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सन् 1035 हिजरी तक "ग़व्वासी" दुःखमय जीवन व्यतीत कर रहे थे ।

2.6• राज दरबार से सम्बन्ध

गोलकुण्डे के सुल्तान अब्दुल्लाह कुत्बशाह के शासन काल में "ग़व्वासी" की पहुँच शाही दरबार तक हो गई । शाह ने उनसे आमंत्रित किया था । देखते ही देखते वह सुल्तान का बन गया । उनको प्रगति का मार्ग खुल गया । सुल्तान ने शाही सम्मान सहित उनको राज कवि की उपाधि से विभूषित किया । यह ज्ञात नहीं होता कि राजदरबार में उनकी पहुँच का माध्यम क्या था ? पहुँच के लिए उन्होंने किस पद्धति को अपनाया था ?

यह भी ज्ञात नहीं हो सका कि उन्होंने इतना प्रभाव कैसे प्राप्त कर लिया कि उन्हें दरबार में पहुँचने के क्रमशः तुरन्त बाद राज-कवि की उपाधि मिली ।

"हदीकतुलसलातीन" के साक्ष्य से पता चलता है कि सुल्तान अब्दुल्लाह कुत्बशाह को जब पुत्र उत्पन्न हुआ तो वजही और ग़व्वासी ने जन्म तिथि निकाली थी ।

2.7• राजकवि की उपाधि से विभूषित

सुल्तान अब्दुल्लाह कुत्बशाह के दरबार में स्थान प्राप्त होने के पश्चात ग़व्वासी के भाग्य का सितारा चमकने लगा । सुल्तान ने न कवल

1• सं0 मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी - कुलयाते ग़व्वासी - कसीदे

ने आश्रय प्रदान किया अपितु उसको "फ़साहत आसार" की उपाधि से सम्मानित भी किया । "ग़व्वासी" की कुल्लियात के एक क़सीदे में वह सुल्तान के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता है -

"हज़ार शुक्र जो खुश होके यू शह आरिफ़
खिताब मिंज कूँ दिया है, "फ़साहत आसारी"
अछो तहाँ तलक इस शाह का बुलन्द इक़बाल
जहाँ तलक करे तारियाँ में चाँद सरदारी
खुशी सूँ राख खुदाया मिंज उसके साये में
के मैं ग़व्वास जम इसका बन्दा हूँ दरबारी ।"[1]

दरबार में ग़व्वासी के प्रभाव और पहुँच का अनुमान उसके काव्य के अन्तःसाक्ष्य से लगाया जा सकता है । वह राजकवि होने के अतिरिक्त सुल्तान का विश्वास पात्र, परामर्शदाता, प्रशासनिक कार्यों आदि का सहायक भी था । उसने अपने एक क़सीदे में सुल्तान अब्दुल्लाह कुत्बशाह को सांकेतिक चेतावनी दी कि राज्य में उत्कोच की प्रवृत्ति पनप रही है -

"जिस किया है उनकू याद नई जान पो है वाँ
कुच दाद नई
कोई खल्क़ इनों थे शाद नई जमराज कराए
राज तूँ
हर काम में हरकताँ बेशक़ को लेते
रिश्वताँ
है यू बड़े बे दौलताँ जम राज कर अय
राज तूँ
बरदारियाँ कूँ तोड़ यू छुछियाँ कूँ लिया
लिया जोड़ यू
शाकर से सब कू फोड़ यू जम राज कर अय
राज तूँ ।"[2]

1• सम्पादक : मुहम्मद-बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी - पृ सं0 96
2• -वही- 75

2.8· गोलकुण्डा के राजदूत के रूप में बीजापुर में "गुव्वासी" की नियुक्ति

"गुव्वासी" के व्यक्तित्व एवं कार्यकुशलता से प्रसन्न होकर शाह ने उन्हें गोलकुण्डा का राजदूत बनाकर बीजापुर भेज दिया । "गुव्वासी" के बीजापुर प्रस्थान से पूर्व सन् 1635 ई0 में बीजापुर के सुल्तान मुहम्मद आदिलशाह ने अपने राजकवि मलिक खुशनूद को राजदूत के रूप में गोलकुण्डा भेजा था । संभवत: इसके उत्तर स्वरूप ही "गुव्वासी" को गोलकुण्डे से बीजापुर भेजा गया । जिस समय गुव्वासी राजदूत बनकर बीजापुर जा रहा था तो सुल्तान अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने उसे अमूल्य उपहार दिए । अब्दुल्लाह कुत्बशाह इस बात से प्रसन्न तथा संतुष्ट था कि उसका राज्य भी गुव्वासी जैसे योग्य, ज्ञानी, दार्शनिक, प्रशासक, राजनीति-मर्मज्ञ, दूरदृष्टा तथा कवि का स्थान है जो कि बीजापुर के राजकवि तथा राजदूत मलिक खुशनूद से कम नहीं ।

"गुव्वासी" ने सन् 1635 ई0 तथा 1636 ई0 में अली आदिलशाह "शाही" के दरबार में गोलकुण्डा का प्रतिनिधित्व किया । गोलकुण्डा द्वारा सहायता प्राप्त करने से बीजापुर को जो लाभ हुआ उसका उल्लेख नुस्रती ने "अलीनामा" में किया है । नुस्रती ने अब्दुल्लाह कुत्बशाह के बारे में व्यक्त किया है -

"दिसे अक़्ल व तदबीर में यक हकीम
बड़ा दूरबीन कारकर्द अज़ीम
धरनहार आदाब दूँ ताज व तख़्त
सो सुल्तान अब्दुल्लाह फ़र्ख़न्दह बख़्त
दिसंत कूँ है दरियाए आब उसकी तेग़
बरसती दन्दे पर फन आतिश का मेग़ ।"[1]

1· सम्पादक : अब्दुल मजीद सिद्दीकी - मुल्ला नुस्रती - अलीनामा पृष्ठ सं0 362-363

2.9• गोलकुण्डा तथा बीजापुर की मित्रता में "ग़व्वासी" की भूमिका

गोलकुण्डा तथा बीजापुर के मत्री-सम्बन्धों में घनिष्टता लाने का श्रेय "ग़व्वासी" को प्राप्त था । वह न केवल राजदूत की भूमिका में ही सफल रहे बल्कि, व्यावहारिक रूप से, सांस्कृतिक दूत सिद्ध हुए । बीजापुर भेजे जाने के पूर्व ही ग़व्वासी की मसनवी "सैफुल मुलूक व बदिउज्जमाल" प्रकाश में आ चुकी थी । यही कारण है कि बीजापुर का महान कवि नुसरती "ग़व्वासी" की मसनवी "सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल" को आदर्श मानता है ।

"हिकायत मने लग गम्मत के संगात
किते आए यू वो यकायक यू बात
के क्या शायरां फ़ारसी खुश कलाम
गए कर अपस फ़न में हिकमत तमाम
यक यक इश्क़ की बात केते से नकल
सुने पर न रह किस को जागा पे अकल
वलेकिन दक्खिन यू रहया हो कुहन
न कोई खूब क़िस्सा कहिया नेक फ़न
पढ़ी कुच "ग़व्वासी" तबी कर ख़्याल
किया ताज़ा बाग़ बदीउज्जमाल ।"[1]

बीजापुर के राजकवि "नुसरती" के अतिरिक्त विख्यात दक्खिनी कवि "मुक़ीमी" ने भी मसनवी "चन्दरबदन व महयार" में "ग़व्वासी" का श्रद्धापूर्ण उल्लेख किया है । मुक़ीमी का सम्बन्ध बीजापुर से था । वह "ग़व्वासी" का समकालीन कवि था । उसने "ग़व्वासी" का काव्य-ऋण स्वीकार किया है -

---

1• सम्पादक : सय्यद मुहम्मद - मलिकुश्शोअरा नुसरती - गुल्शने इश्क़
पृ सं0 54

"ज़ुबाँ का इत्ता हूँ सचा जौहरी
करूँ नित सुख़न सूँ गुहर गुस्तरी
क़िसा यक कहूँ मैं गुहर बार का
सो चन्दरबदन हौर महयार का
सुने कोई मुज कूँ दुआ याद कर
रहेंगे तअाज्जुब सूँ दिल शाद कर
ततब्बो "ग़्वासी" का बाँद्या हूँ मैं
सुख़न मुख़्तसर ल्या के साँ द्या हूँ मैं
इनायत जो उसको हुई मुज उपर
यू तब नज़्म क़िस्सा किया सरबसर ।"[1]

"ग़्वासी" ने गोलकुण्डा और बीजापुर में जो ख्याति प्राप्त की थी वह बहुत कम दक्खिनी कवियों के भाग्य में आई थी । उसने न केवल समकालीन कवियों पर अपनी छाप छोड़ी है बल्कि परवर्ती कवियों को भी कुछ कम प्रभावित नहीं किया । इसका परिणाम यह हुआ कि "ग़्वासी" का नाम दक्षिण से उत्तर भारत तक गया । लोग उसकी महानता की बातें करने लगे । संभवत: यही कारण होगा कि मीर तक़ी मीर जैसा उर्दू का महान कवि भी "ग़्वासी" का उल्लेख किए बिना नहीं रह सका । "नुकातुशशोअरा" में मीर तक़ी मीर ने "ग़्वासी" को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उसका यह शेर उद्धृत किया है -

जो कोई इस मुर्ग़ -ए- दिल में
बिरह का बीज बोता है
तो हरगिज़ उसके बस्ताँ में
गुल -ए- उम्मीद होता है ।

1· सम्पादक : मुहम्मद अकबरुद्दीन सिद्दकी - मुक़ीमी- मसनवी चन्दरबदन व महयार, पृष्ठ सं0 82-83

"ग़व्वासी" बीजापुर में गोलकुण्डे का सांस्कृति दूत सिद्ध हुआ ।

2.10· "ग़व्वासी" की मान्यता

मीर तक़ी मीर ही नहीं, मीर हसन ने भी अपने संस्मरण में, फ़ारसी में, "ग़व्वासी" के व्यक्तित्व को मान्यता प्रदान की है -

"ग़व्वासी" तख़ल्लुस दरवक़्त जहाँगीर बादशाह बूद तूती नामा बख़ुशरा नज़्म नमूदह अस्त । बज़बाने क़दीम निस्फ़े फ़ारस व निस्फ़े हिन्दी बतौर बिकट कहानी सरसरी दीदह बूदम शेर आन नज़्म बह याद नीस्त ।"[1]

उर्दू की एक अन्य पुस्तक "तज़किरह सुरूर" में "ग़व्वासी" को दक्षिण के प्राचीन कवि के रूप में मान्यता प्रदान करते हुए एक शेर उद्धृत किया गया है -

"ग़व्वासी" तख़ल्लुस अज़ शाइरान क़दीमी दकन अज़ीश्त :

तेरा मुँह देख बुलबुल फूल से बेज़ार हो जावे
अगर गुल तुझ तलक पहुँचे गले का हार हो जावे ।"[2]

"ग़व्वासी" ने स्वयं लिखा है कि वह हिन्द के कवियों में अपरिचित नहीं है, लोग दक्षिण अतिरिक्त भी उसको जानते हैं -

"ग़व्वासी" हो मशहूर हूँ
इस सल्तनत के भार में
तूतियाँ सब हिन्द के
रग़बत करें त्यूँ आज खुश ।"[3]

1· संपादक : डॉ० अकबर हैदरी काश्मीरी, मीरहसन, तज़किरह शोअरा पृ सं० 208

2· सम्पादक : ख़्वाजा अहमद फ़ारूकी, नवाब आज़मुद्दौला मीर उमर खाँ बहादुर "सुरूर", उम्दा मुन्तखिबात यानि तज़किरह सुरूर, पृ सं० 998

3· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी - पृ सं० 24

2.11. बीजापुर से ग़व्वासी की वापसी

जिस प्रकार गोलकुण्डा से, राजदूत के रूप में बीजापुर पहुंचने पर "ग़व्वासी" का भव्य स्वागत हुआ था, वैसे ही बीजापुर से गोलकुण्डा वापस लौटते समय "ग़व्वासी" को मान-सम्मान सहित भव्य रूप से विदा किया गया। उसे उसके योग्य उपहार भी दिए गए। जब "ग़व्वासी" बीजापुर से विदा होकर गोलकुण्डा वापस लौट आया तो वह सुल्तान का घनिष्ट मित्र बन गया। सुल्तान अब्दुल्लाह कुत्बशाह भुवनगिरि की यात्रा पर गये तो ग़व्वासी को साथ लेते गये। उस यात्रा का विवरण इस प्रकार काव्यबद्ध किया गया -

"खुशियाँ सूँ सैर करने शह जो
देखने भोनगीर आए
सहलियाँ सात मिल तारियाँ सूँ
शह बदर-ए-मुनीर आए
चरागाँ का लगा सुन्दर इस
गढ़ कू यूँ रोशन
जो लोगाँ धरत के देखें तमाशा
भेंड कू चोर आए।"[1]

2.12. "ग़व्वासी" की प्रार्थना - बादशाह की ओर से आर्थिक सहायता

अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने "ग़व्वासी" की साहित्यिक सेवाओं एवं प्रशासनिक योग्यताओं से प्रसन्न होकर उसको एक गाँव उपहार में दिया था। उस गाँव से कवि की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति मालगुज़ारी तथा कर वसूली से, बड़ी सीमा तक, हो सकती थी। परंतु कवि स्वभाव से भावुक त्य तथा नम्र हृदय का होता है। वह मालगुज़ारी प्राप्त न कर सका। वैसे भी सज्जन अधिकारी को कौन गाँव वाला कर देता ? "ग़व्वासी" गाँव और गाँव वालों से तंग आ गया। लोग पैसा

---

1. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी - पृ सं0 183

भुक्तान करना नहीं चाहते थे । विवश होकर "ग़व्वासी" ने बादशाह से प्रार्थना की कि उसे जो गाँव जागीर में दिया गया है उस गाँव से उसे कोई लाभ नहीं है । मात्र कहने भर के लिए गाँव मिला है । इससे अच्छा यह है कि बादशाह उसको कोई अन्य गाँव दे -

"मिंज कू दिए हं गाँव सो
कुछ दस्त नईं इस ठाँव सो
है गाँव कर चुप नाँव सो
जन राज कर अय राज तूँ
मामूर होर यक गाँव में
जो शाह की दौलत पाँउ में
तुज सुख सूँ रोटी खाउँ में
जम राज कर अय राज तूँ ।"[1]

अब्दुल्लाह कुत्बशाह के समय में, गोलकुण्डा में, यह परम्परा थी कि जो कोई उच्च अधिकारी होता उसे सप्ताह में एक बार पहरे पर नियुक्त किया जाता था । "ग़व्वासी" को भी सप्ताह में एक बार राजमहल का पहरा देना पड़ता था । यह रीति गोलकुण्डा की सल्तनत के पतन के पश्चात भी आसिफ़जाही युग तक प्रचलित रही । इसका कारण यह बताया जाता है कि उच्च अधिकारी वर्ग रात के समय यदि पहरा देते हों तो उन्हें राजा के विरुद्ध किसी भी संभावित षड्यंत्र का पूर्व अनुमान होगा । जिसका ठीक समय पर उपचार हो सकेगा । यह भी ज्ञात होगा कि निम्न वर्ग के कर्मचारी, पहरेदार, सिपाही इत्यादि अपना उत्तरदायित्व ठीक-ठीक सुचारु ढंग से निबाह रहे हैं अथवा नहीं । इस प्रकार पहरा देने का यह उत्तरदायित्व "ग़व्वासी" को भी सौंपा गया । "कुलियाते ग़व्वासी" की भूमिका में डॉ० मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" लिखा है -

---

1. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी - पृ सं० 76

"अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने "ग़व्वासी" को एक गाँव बतौर जागीर इनायत किया था और अपनी ख़्वाबगाह के बाहर रात में इनकी निशिस्त मुक़र्रर की थी । शाही महलात का यह तरीक़ा था के रात के वक़्त बादशाह की ख्वाबगाह के बाहर मामूली सिपाहियों के इलावह बड़े-बड़े अमीरों और आलिमों, बुज़ुर्गों को बारी-बारी से हाज़िर बाश किया जाता था के अगर सिपाही किसी साज़िश के असर से बेवफ़ाई और दग़ा करना चाहें तो इन मोअतबर और मोतमदुल आलिया असहाब की मौजूदगी की वजह से न कर सकें मगर "ग़व्वासी" के लिए ख़िदमत भी गराँ थी ।"[1]

पहरे के सम्बन्ध में "ग़व्वासी" ने शाह से प्रार्थना की -

"मक़्सूद मैं होर यक धरूँ
नाग़ा पकड़ने कर डरूँ
हर रात आ पहरा करूँ
जम राज कर अय राज तूँ
फेरी से नई फेरा निंजि
तड़के बहुत ज़हरा निंजि
कर माफ़ यूँ पहरा निंजि
जम राज कर अय राज तूँ ।"[2]

उपरोक्त तथ्यों से यह सिद्ध हो जाता है कि "ग़व्वासी" व्यावसायिक रूप से पहरेदार अथवा सिपाही नहीं थे । वह सुल्तान के परमसहायकों में गिने जाते थे । बड़े दुःख की बात है कि जमील जालिबी जैसे उर्दू के विद्वान आलोचक ने "ग़व्वासी" को रात के समय पहरा देने वाला साधारण सिपाही माना

---

1. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी : भूमिका : डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" पृष्ठ सं0 13
2. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, कुलियाते ग़व्वासी, पृष्ठ सं0 76-77

"ग़ुव्वासी पेशे के ऐतबार से सिपाही था
और रात के वक़्त पहरे पर मामूर था ।
इस काम से वो इतना आजिज़ था के एक
क़सीदे में उसने बादशाह से पहरेदारी से
माफ़ी की दरख़्वास्त की थी ।"[1]

पहली बात तो यह है कि "ग़ुव्वासी" पेशे के ऐतबार से सिपाही नहीं थे । वह पहरे के काम से आजिज़ भी नहीं थे । इतना अवश्य है कि पहरे के समय, रात्रि के अंतिम प्रहर में उन्हें शीत बहुत अखरता थी । बादशाह का सहायक होने के नाते यदि "ग़ुव्वासी" शीत अखरने की बात करते हैं तो उसे अकर्मठ समझना उक्त लेखक की भूल है । "ग़ुव्वासी" स्पष्ट रूप से कहते हैं -

"फेरी थे नईं फेरा निजे
तड़के बहुत ठहरा निजे ।
कर माफ़ यू पहरा निजे
जम राज कर अय राज तू ।"[2]

"ग़ुव्वासी" की आर्थिक विपदा सुन कर सुल्तान ने उसको तीन हज़ार रुपये दिए अथवा वार्षिक तीन हज़ार रुपये की वृत्ति निर्धारित की । ग़ुव्वासी ने शाह से विनती की कि वर्ष भर में केवल एक बार तीन हज़ार की राशि से उसकी आवश्यकताओं की तृप्ति कठिन है । अतः वर्ष भर में कम से कम दो-तीन बार तो इतना धन प्राप्त होना चाहिए ।

"हज़ार हैफ़ जो तुज शाह का हो शायर मैं
न पाऊँ साल मने तीन हज़ार दो तीन बार ।"[3]

---

1. जमील जालिबी : तारीख़े अदबे उर्दू, हिस्सा ए अव्वल, पृष्ठ 472-73
2. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, कुल्लियाते ग़ुव्वासी - पृष्ठ सं० 77
3. -वही-

2.13. समकालीन दक्खिनी कवियों से "ग़व्वासी" की नोक-झोंक

"ग़व्वासी" ने "तूतीनामा" में अपने समकालीन कवियों पर फब्तियाँ कसी है । उन्होंने इस बात का भी ध्यान नहीं रखा कि "हम्द" कहते समय शायर केवल ख़ुदा की अज़मत का बख़ान करता है । परम्परानुसार "हम्द" में कवि को स्वयं के बारे में कुछ कहने की स्वतंत्रता नहीं होती । यदि अपवाद स्वरूप कवि कुछ कहता भी है तो उसे अच्छा नहीं समझा जाता । "ग़व्वासी" ने इस काव्यानुशासन का निर्वाह नहीं किया । हम्द में परम्परा का उल्लंघन करते हुए वह कहते हैं -

"करू जिस सूँ यारी तो अग़यार हुवे
चलूँ मोर हूँ मैं तो वो मार हुवे
वफ़ा सूँ रखूँ जिसके पावाँ पो सर
तो मेरकुच सर पो रखे पाँ फिर ।"[1]

"ग़व्वासी" की काव्य-प्रतिभा से, प्रारम्भ में, वजही प्रभावित हुए बिना न रह सके । जिस समय वहजी का सितारह उन्नति के चरम उत्कर्ष पर पहुंच चुका था और वह मुहम्मद कुली कुत्बशा के राजकवि भी थे ऐसे समय में वजही का "ग़व्वासी" जैसे युवा कवि को प्रोत्साहित न करना अनमना सा लगता है । वजही ग़व्वासी को प्रोत्साहित न करते तब भी बात बन जाती थी, परन्तु वजही ने वहाँ अति अति ही करदी जहाँ कि उन्होंने "ग़व्वासी" के प्रति ईर्ष्या की नीति अपनाई । कभी यूँ लगता है कि वजही द्वारा ईर्ष्या प्रकट किए जाने के कारण "ग़व्वासी" साहित्यिक पृष्ठभूमि और भी प्रशस्त होती चली गई । "ग़व्वासी" के प्रति उनके समकालीन कवि वजही की निम्न पंक्तियाँ वजही की ईर्ष्याजन्य मानसिक ह्रास को दर्शाती है -

---

1. सम्पादक : मीर सआदत अली रिज़्वी, "ग़व्वासी" तूतीनामा, पृष्ठ सं० 2

"अगर ग़ोते लक बरस "ग़व्वास" खाए
तो यक गोहर इस धात अनोलक न पाए
भू मोती नईं वो "ग़व्वास" पाई
यू मोती नईं वो जो किस बात आई
ग़व्वासियाँ किते ग़ोते खा खाए कर
हुए हैं लो इस समुद्र नैं आए कर ।"[1]

वजही के उपरोक्त तीखे व्यंग का यथोचित उत्तर "ग़व्वासी" ने निम्न पंक्तियों में दिया -

"बचन के समन्द का हूँ "ग़व्वास" मैं
धरनहार हूँ मोतियाँ ख़ास मैं
जगत जौहरी सब मेरे पास आए
मेरे ख़ास मोतियाँ कूँ जोव कर लाजाए
मेरा दिल ख़ज़ीना जूँ मामूर है
बचन के जवाहर सूँ भरपूर है
मेरा ग्यान अजब शकरिस्तान है
जो इस थे मिठा सब हिन्दुस्तान है
जिते हैं जो तूती सब हिन्दुस्तान के
भिकारी हैं निज शकरिस्तान के
शकर खा मेरे शकरिस्तान थे
मिठे बोल उठे अो अपस ग्यान थे
जो मैं हम सूँ तबअ आज़माई करूँ
तो सारियाँ उपर पेशवाई करूँ ।"[2]

1· सम्पादक : मौलवी अब्दुल हक़ - मुल्ला वजही - कुत्बमुश्तरी - पृ सं0

2· सम्पादक : मीर सआदत अली रज़्वी - मुल्ला ग़व्वासी - सैफुल मुलूक व बदिउज्जमाल पृष्ठ सं0 14-15

2.14· ग़व्वासी के जीवन का अन्तिम चरण

गोलकुण्डा राज्य के छटे सुलतान अब्दुल्लाह कुत्बशाह का शासन समाप्ति होने के साथ ही (शासनकाल सन् 1625 - 1672 ई० तक) "ग़व्वासी" का नाम मानो गुमनामी के सागर में डूब गया। उनके नाम का सितारा साहित्याकाश से ग़ायब हो गया। वैसे स्वयं "ग़व्वासी" अपने साहित्यिक जीवन के अन्तिम दिनों में चाहते थे कि उसे सद्-पथ पर चलने की शक्ति मिले। उनके बारे में चाहे कोई कुछ क्यों न कहे वह गंभीर एवं तटस्थ बने रहने की इच्छा प्रकट करते हैं। उनकी अभिलाषा थी कि शेष जीवन स्वस्थ बीते। दीर्घ आयु की कामना कौन नहीं करता। "ग़व्वासी" ने भी की। वृद्धावस्था में परमात्मा के प्रति सभी का झुकाव रहता है। "ग़व्वासी" परब्रह्म परमेश्वर के प्रति दृढ़ आस्था रखने लगे। अतीत की भूलों के लिए वह ईश्वर से क्षमा चाहते हैं। उनमें ग्लानि का भाव जागृत होता है। वृद्धावस्था मृत्यु का स्वागत द्वार होता है। कष्टप्रद तथा यातना दायक मृत्यु की कामना कोई वृद्ध नहीं करता। "ग़व्वासी" सुखमय मृत्यु के लिए प्रार्थना करते हैं। अपने आचरण पर नियंत्रण रखते हुए "ग़व्वासी" अन्तिम समय तक नैतिक तथा चारित्रिक उत्थान चाहते हैं। इस प्रकार "ग़व्वासी" ने अपने जीवन के अन्तिम चरण में कुछ चौदह आकांक्षाएँ व्यक्त की हैं -

"अव्वल उम्मीद मेरे दिल में है यही हर सात
जो नित रफ़ीक़ हो तौफ़ीक़-ए-हक़ अछे मिंज सात
दो जिस उम्मीद यही है जो तन्दरुस्ती तूँ
मिंज इस जहाँन में ख़ुदा देवे बेशुमार हयात
बड़ी उम्मीद सू सदा ख़ुदा का इश्क़
मेरे सीने में झलका अछे सूरज की धात
उम्मीद चौथी यही है जो शियात थे हक़
नजात देवे इनायत मिंजे हलनात

बे मदाम मेरे मन में पाँचवीं उम्मीद
जो आक़िबत करे महमूद वा हुब्बलबरकात
छटी उम्मीद सो यू है जो दोनोदुनियाँ में
ज़ियाद होवे सदा निद ब दिन मेरा दरजात
हम इस पिछे थे कहूँ खोल सातवीं उम्मीद
जो इस और चिराग़त अछे मिंजे दिन-रात
खुदा के लुत्फ़ थे उम्मीद आठवी यूँ है
ज्यूँ आफ़ताब अछे जम बुलन्द मेरा हाथ
नवीं उम्मीद सो धरता हूँ इस सन सूँ जो
अछे मुकर्र म मनों यार हो सितारे सात
जने तलथ न है मेरी यू उम्मीद दसवीं सो
जो रूह बख़्शा अछे हर ग़ज़ल में मेरी बात
है इस तारीक़ सूँ उम्मीद इकारवीं मेरी
जो मुस्तजाब हुवे हर घड़ी मेरा दुआत
उम्मीद बारहवीं यू है जो मिंज कूँ बारह इमाम
हो दस्तगीर देवें जोक़ होर सेहत ज़ात
उम्मीद तेरवीं यू जो अछो दन्दी मक़्हूर
बहक़्क़े साक़िए कौसर अली अलेहुस्सलाम
उम्मीद चौदवीं यू है जो मिंज "ग़व्वासी" पर
दया सू चहारदह (14) मासूम का अछे हर सात ।"[1]

मसनवी "तूतीनामा" में "ग़व्वासी" सामाजिक जीवन से उदासीनता प्रकट करते हैं । वह खुदा की इबादत में लीन हो जाना चाहते हैं । "ग़व्वासी" संसार से अनासक्त होकर प्रार्थना करते हैं कि उनके मन में कोई सांसारिक इच्छ शेष न रहे । लगता है जैसे वह, अपने

1· मुल्ला ग़व्वासी : दीवाने ग़व्वासी, राजकीय पुस्तकालय, हैदराबाद,
हस्तलिपि संख्या - 1037

जीवन के अन्तिम दिनों में, सांसारिक सुख, समृद्धि एवं वैभव नहीं चाहते थे। वह ऐन्द्रिय बंधनों से मुक्ति की कामना करते हैं। सामाजिक सम्बन्धों में भी वह अपनी अभिरुचि खो चुकी थे। "ग़व्वासी" की यह पलायनवादी भावना "तूतीनामा" की निम्न पंक्तियों में, स्पष्ट, देखी जा सकती है -

"ग़व्वासी" अगर तू है सचला "ग़व्वास"
लगा इश्क अपने खुदा सात ख़ास
तेरे दर्द का तू अपे ही तबीब
ले गर्दानि अयहर्ज़ी गोई ते जीब
चलयेगा किता नफ़्स के कए मने
किता होएगा नाउं के पए मने
किता शायरी पर धरेगा ख़्याल
किता होवेगा दर पए खतो ख़ाल
अछेगां किता दर रियाई हनूज़
हो बेदार यक बार इस ख़ाब ते
निकल यार इस ग़म के गर्दाब ते
जो है रहनुमा पीर हैदर तेरा
हम अल्लाह वहै हम पयम्बर तेरा
हो मश्गूल उस सात हर सात तूं
फ़िदा उसपो कर आपी ज़ात तूं
जो कुच ख़्वास्त तेरा है सब उसपो छोड़
दुनिया के इलाक़े ते ले दिल कूं तोड़
तलबगार मौला हो मौला है तूं
है मौला की ख़िलक़त में औला है तूं
तू आरिफ़ है गर नुक्तादानी मने
निशा देक अपने म्आनी मने

जो है कौन आया है किस काम कूँ
शरफ़ किस बदल है तेरे नाम कूँ
जो कुच आफ़रीनश के आसार हैं
जो सब तुज में जलवा देवनहार हैं
अगर करने मंगता है कुच काम तूँ
तो फ़ुर्सत यही वक़्त है काम तूँ
अँखें खोल इज्ज़त को दरखवेश देक
अजब मंज़िल अँगे है अंदेश देक
नकर ऐतमाद इस गुज़रगाह का
यू फान्दा है दुर्वेश होर शाह का
संभाल अपनी अय यार इस दाम ते
न हो ग़ाफ़िल अछ आपने काम ते
उचा दम जम अल्लाह के नाम तूँ
मता रह सदा इश्क़ के जाम सूँ ।"[1]

उपरोक्त उद्धरण से सिद्ध हो जाता है कि इसके पश्चात् "ग़व्वासी" ने अज्ञातवास धारण कर लिया । इन पंक्तियों में कवि ने कविता न करने की बात की है । गोलकुण्डा हैदराबाद में कुत्बशाही की सुन्दर गुम्बदनुमा समाधियों में "ग़व्वासी" की क़ब्र कहाँ खो गई कोई नहीं जानता । बीदर के समीप नीलंगा नामक स्थान पर एक कुत्बशाही स्थापत्य कला युक्त क़ब्र को भ्रम स्वरूप "ग़व्वासी" की क़ब्र कहा गया है । इसका आधार, नीलंगा में "ग़व्वासी" के मुर्शिद की दरगाह बताया जाता है, यह सत्य नहीं है । नीलंगा की दरगाह "ग़व्वासी" के मुर्शिद की ही है यह भी संदिग्ध है । अब्दुल्लाह से नैकट्य के आधार पर शाह के बाद भी "ग़व्वासी" का सामाजिक महत्व

---

1. सम्पादक : सय्यद सआदत अली रज़वी - मुल्ला ग़व्वासी, तूतीनामा पृ सं० 286-288

था परन्तु खुदा से उनकी मुहब्बत ने उन्हें अन्ति दिनों में धार्मिक बना दिया । इस्लाम धर्म में सुन्दर क़ब्रों के निर्माण को धार्मिक दृष्टि रखने वाले उचित नहीं मानते । गुम्बद तो क्या क़ब्र पर तावीज़ बनाना भी उचित नहीं समझा जाता । यही कारण होगा कि "ग़व्वासी" ने अपना कोई निशान नहीं छोड़ा । यदि वह अन्तिम समय में सादगी पसंद संत रूप नहीं धरते तो अवश्य ही उनकी भी एक सुन्दर ऐतिहासिक क़ब्र ज़रूर होती । जो कुछ भी हो "ग़व्वासी" ने अपने पीछे वह साहित्य-निधि छोड़ी है कि जिससे हम स्तरीय हिन्दी-उर्दू के विकास के इतिहास को समझ सकते हैं और जो उनके नाम को बाकी रखने के लिए पर्याप्त है ।

द्वितीय अध्याय

गव्वासी और उनकी मसनवियाँ : वस्तु एवं स्रोत

खण्ड "अ"

1· दक्खिनी की मसनवी परम्परा

1·1 दक्खिनी मसनवी

1·2 गव्वासी की मसनवियाँ

खण्ड "ब"

1· सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल

1·1 स्रोत

1·2 कथा - सार

2· तूती नामा : स्रोत एवं कथा - सार

2·1 स्रोत

2·2 कथा - सार

3· मैना सतवन्ती : स्रोत एवं कथा सार

3·1 स्रोत

3·1·1 मैना सतवन्ती एवं मुल्लादाऊद-कृत चंदायन

3·1·2 मैना सतवन्ती एवं साधन-कृत मैना सत

3·1·3 मैना सतवन्ती एवं हमीदी-कृत इस्मत नामा

3·1·4 मैना सतवन्ती एवं दौलतकाज़ी-कृत सती मयना व लोर चंद्रानी

3·1·5 मैनासतवन्ती एवं खेमदास-कृत मैना का सत

3·1·6 मैना सतवंती एवं चतुर्भुजदास-कृत मधुमाली

3·1·7 मैना सतवन्ती का लोकाधार

निष्कर्ष

3·2 कथा-सार

द्वितीय अध्याय

ग़व्वासी और उनकी मसनवियाँ - वस्तु एवं स्रोत :-

खण्ड (अ)

काव्य-विधा, मसनवी का जो महत्व हिंदी काव्य में है, क्रमशः वही उर्दू काव्य में भी है । फ़ारसी साहित्य में यह विधा "ग़ज़ल" की भाँति ही चरम उत्कर्ष को छू चुकी थी । अरबी साहित्य में "मसनवी" लेखन को ऐसी सफलता नहीं मिली ।

1. दक्खिनी की मनसनवी परंपरा

हिंदी-उर्दू तथा दक्खिनी में "मसनवी" को प्रायः भक्ति की प्रेममार्गी शाखा के अंतर्गत सूफ़ी काव्य के रूप में स्वीकार किया जाता है । डॉ॰ धीरेंद्र वर्मा लिखते हैं -

"दक्षिण भारत में विकसित हिंदवी अथवा दकनी उर्दू साहित्य का प्रारंभ सन् 1326 ईस्वी में मुहम्मद तुग़लक़ के दक्षिण आक्रमण के

बाद हुआ इसके प्रारंभिक कवि मुसलमान सूफ़ी फ़कीर थे, जिन्होंने अपने धार्मिक विचारों के प्रचार की दृष्टि से ये रचनाएं लिखी थीं ।"[1] डॉ॰ धीरेंद्रवर्मा का मत विद्वत्तापूर्ण है । परंतु, यह भी सत्य है कि अधिकांश दक्खिनी मसनवियां सूफ़ी सिद्धांतों पर पूरी नहीं उतरतीं । दक्खिनी मसनवियों में भारतीय कथा-साहित्य का अंश अधिक है । "ग़व्वासी" की तीनों मसनवियां लौकिक हैं । सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, तूतीनामा तथा मैना सत्वंती में से यदि सूफ़ी-रहस्यवाद का आरोप लगाया भी जाता है तो वह केवल सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल पर । लेकिन वह भी इस्लाम धर्म जनित सूफ़ी काव्य की कोटि में नहीं रखा जा सकता ।

दक्खिनी मसनवी के विकास क्रम में हिंदी तथा उर्दू के प्रारंभिक तत्व, जिन्हें हम संस्कृत-अपभ्रंश, अरबी, फ़ारसी से उद्भूत कह सकते हैं, समानता रखते है । वैसे भी यह माना जाता है कि भारतवर्ष में आख्यानक काव्य अथवा मसनवी की कोई परंपरा नई नहीं है - "भारतवर्ष में प्रेमाख्यानों की परंपरा बड़ी प्राचीन है । ऋग वेद में यमयमी, पुरूरवा उर्वशी आदि कथा के बीज उपनिषद काल में, कथा के रूप में व्यक्त हुये, संस्कृत के ललित साहित्य में "कुमार संभव", "मेघदूत", "कादंबरी", "अभिज्ञान शाकुंतलम्" आदि प्रमुख प्रेमाख्यान उपलब्ध हैं । इसके पश्चात् अपभ्रंशकालीन जैन एवं बौद्ध साहित्य में प्रेमाख्यानों के द्वारा नीति और धर्मोपदेश देने का प्रयास दिखाई देता है । अंत में हिंदी साहित्य में प्रेमाख्यानों की एक पृथक परंपरा ही दृष्टिगोचर होती है ।"[2]

---

1) डॉ॰ धीरेंद्र वर्मा, हिंदी भाषा का इतिहास, पृ॰ 80

2) डॉ॰ सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती सूफ़ी कवि और उनका काव्य, पृ॰ 280

हिंदी प्रेमाख्यानों की यह परंपरा दक्खिनी प्रेमाख्यानों के उल्लेख के बिना अपूर्ण ही समझी जायेगी । क्योंकि दक्खिनी मसनवियों ने इनके विकास को बनाए रखा । दक्खिनी मसनवियों में अपभ्रंश के चरित काव्य की विशेषताएं भी मिलती है -

"प्रेमोदय के लिए, गुण श्रवण, चित्र-दर्शन अथवा साक्षात् दर्शन की अनिवार्यता, नायक प्रयत्न, प्रति नायक या दैवी शक्तियों के कारण बाधायें आदि चरित काव्यों में उपलब्ध है । उसी प्रकार अधिदेवी शक्तियों के अवतार राक्षस, अप्सरा, विद्याधर एवं स्वप्न-संयोग से नायक की कठिनाईयों का शमन होता है तथा नायक और नायिका का मिलन हो जाता है । .....प्रेमाख्यानों पर अपभ्रंश के चरित काव्यों का बड़ा प्रभाव है ।"[1]

"ग़ज़ल", "क़सीदह", "क़त्अ" और "रूबाई" की भाँति "मसनवी" भी दक्खिनी को फ़ारसी से मिली है । यदि हम ध्यान-पूर्वक बहमनी युग, उसके विश्रृंखलन से क़ुत्बशाहों के पतन तक के युग का ऐतिहासिक अध्ययन करें, तो ज्ञात होगा कि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से दक्षिण की दक्खिनी भाषी सल्तनतों पर ईरान का प्रभाव बना रहा । दक्खिनी भाषी राज्यों पर यह ईरानी प्रभाव राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक तो था ही, दक्खिनी कवियों के कारण इसने साहित्यिक रूप भी धारण कर लिया । परिणामस्वरूप दक्खिनी में एक ओर प्राचीन भारतीय संस्कृति से संबद्ध साहित्यिक तत्वों को स्थान मिला तो दूसरी ओर फ़ारसी साहित्य ने रूप और कथानक की दृष्टि से, कुछ कम प्रभाव नहीं डाला -

"दक्खिनी-हिंदी कवियों ने उन्हीं अरबी छंदों को अपनाया

- -

1. डा॰ सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती सूफ़ी कवि और उनका काव्य, पृ॰ 17।

था, जो फ़ारसी में भी एकाधिपत्य रखते थे। बाक़ी अलंकार आदि जो कविता को सजाने, गंभीर तथा चमत्कार पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक होते है, उनका ज्ञान उन्हें पुस्तकों तथा कवि दरबारों द्वारा हो जाया करता था। फ़ारसी कविता का जिसने रसास्वादन और अवगाहन न किया हो, ऐसा दक्खिनी कवि शायद ही कोई होगा।"[1]

फ़ारसी मसनवियों में फिरदौसी का "शाहनामा-ए-फिरदौसी" तथा "सिकंदर नामा-ए-निज़ामी" और "मसनवी मअनवी" विख्यात मसनवियां हैं। आलोचकों का मत है कि -

"दक्षिण भारत में बीजापुर और गोलकुण्डा के शासक मुग़लों की अपेक्षा अपने को ईरान से अधिक निकट मानते थे। इसीलिए वे साहित्य तथा संस्कृति के ईरानीकरण में मुग़लों से पीछे नहीं रहे।"[2]

दक्खिनी में, जो मसनवियां अधिकांश रूप से फ़ारसी तत्वों पर आधारित है उन्हें अधिक लोकप्रियता प्राप्त नहीं हुई। यह एक पृथक तथ्य है कि -

"दक्खिनी ने भाषा तथा भाव दो दृष्टियों से फ़ारसी का प्रभाव ग्रहण किया।"[3]

दक्खिनी हिंदी के एक अन्य आलोचक डॉ॰ इक़बाल अहमद का कथन है -

"वास्तव में दक्खिनी ऐतिहासिक कारणों से ईरानी प्रभावों

- -

1) राहुल सांकृत्यायन - दक्खिनी हिंदी काव्य धारा, पृ॰ 18
2) डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 26
3) " , " , " 196

को स्वीकार किए हुए है । किंतु इसका जन्म भारत में ही हुआ है । अतः स्वाभाविक सी बात है कि इसपर भारतीय संस्कृति का प्रभाव अधिक होगा । किंतु, बोल-चाल की भाषा का प्रयोग शेख़ फ़रीदुद्दीन शकरगंज एवं अमीर खुसरो ने अपनी हिंदी कविताओं में किया तथा जिस भाषा को उत्तर भारत के संतों ने भाषा (भाखा), हिंदी, हिंदवी और हिंदुई आदि नामों से पुकारा था, वही भाषा दक्षिण भारत में आकर दक्खिनी हो गई ।"[1]

भारतीय पृष्ठभूमि पर आधारित दक्खिनी मसनवियां, जिनका आधार पुराण, जातक कथाएं, पंचतंत्र, जैन तथा सिद्ध कथाएं थीं, दक्खिनी में लोकप्रिय हुईं ।

दक्खिनी मसनवियां शहज़ादे और शहज़ादी - राजकुमार और राजकुमारी के जन्म से, तदोपरांत, प्रेम वर्णन से आरंभ होतीं हैं । साथ ही मसनवियों के कथानक के माध्यम से, इनमें, नैतिक मूल्यों का प्रतिपादन किया जाता है । रहस्यवादी तत्वों के उद्घाटन के लिए भी मसनवी काव्य-विधा अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है ।

मसनवियों में आख्यान कहते हुए कवि, बिंब, प्रतीक और उपमा आदि का आश्रय लेता है । इसीलिए मसनवी की कथाओं को उपमित कथाएं भी कहा गया है ।

मसनवी की कथाओं में नायक-नायिका के परिवार अर्थात् माता-पिता का परिचय प्रस्तुत किया जाता है । नायक-नायिका के माता-पिता प्रायः राजा-रानी होते है । किसी प्रदेश के राजा-रानी को संतान की उत्पत्ति की इच्छा होती है । इस इच्छा की

- -

1) डा॰ इक़बाल अहमद, दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ॰ 4

तृप्ति के लिए उपचार हेतु ज्योतिषियों को आमंत्रित किया जाता है । ज्योतिष भविष्य वाणी करते है । यह भविष्यवाणी, मसनवियों में सत्य निकलती है । राजा-रानी को संतान होती है । बालक तरुणावस्था को पार करके कुमार तथा युवा अवस्था में पहुँचता है । उसके मन में प्रेम का बीज अंकुरित होता है । मन में प्रेम के जागृत होने का कारण क्रमशः नायिका-चित्र-दर्शन अथवा नायिका रूप-गुण श्रवण होता है । नायक का गुरू अपने शिष्य की समस्या के समाधान में सहायक होता है । कभी मित्र सहायता करता है और कभी तोता, मैना, हंस, दरिया आदि उसके मार्गदर्शक बनते हैं । किसी प्रकार, संकटों का सामना करने के पश्चात्, दोनों मिलते हैं । दोनों में प्रेम बढ़ता है । ऐसे प्रसंगों में मसनवीगो कवि नायिका का नख-शिख वर्णन प्रस्तुत करने से नहीं चूकता । नायक के मन में नायिका से विवाह करने की इच्छा जगती है । नायिका भी यही चाहती है । किंतु, अचानक परिस्थितियां बदल जाती हैं । प्रेम में विघ्न पड़ जाता है । नायक के लिए प्रेम मानो जीवन की सबसे बड़ी चेतावनी बन जाता है । उसे प्रेमिका की प्राप्ति के लिए असंभव को संभव कर दिखाना पड़ता है । यह उसके शौर्य के लिए बड़ी कठिन परीक्षा का समय होता है । अंत में किसी प्रकार वह परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करता है । तत्पश्चात्, शाहज़ादा-शाहज़ादी अथवा राजकुमार-राजकुमारी को सुखमय जीवन बिताने का अवसर मिलता है ।

दक्खिनी की वे मसनवियां जिनमें राजकुमार की मृत्यु अथवा राजकुमारी के सती होने के निष्कर्ष प्राप्त होते हैं, संख्या में अत्यंत कम हैं । उन्हें अपवाद ही समझना चाहिए । संस्कृत अथवा हिंदी के प्रबंध काव्यों की भांति मसनवी में सर्गों का प्रचलन नहीं होता । आख्यान गति से चलता रहता है । प्रसंग परिवर्तित होने पर शीर्षक बदल जाया करते है । स्थान वर्णन में यदि, परिवर्तन लाना हो तो

कवि मध्यस्थ पात्र से सहायता लेता है । मध्यस्थ पात्र तोता, मैना, हंस इत्यादि होते हैं ।

एक ही घटना वर्णन के लिए मूल छंद बदला नहीं जाता । जहां छंद बदला जाता है वहां घटना को भी बदल दिया जाता है । मसनवियों में दो पंक्तियों का एक शेर होता है । इसके लिए आवश्यक है कि यह हमक़ाफ़िया हो, अर्थात् इसका अन्त्यानुप्रास एक हो -

"जो दिसते अथे लोग पाताल के
कि ज्यूं मोतियां ढाल बीच थाल के "[1]

मसनवी के उपरोक्त शेर में "पाताल के" तथा "थाल के" आधार पर अन्त्यानुप्रास को मिलाया गया है । यह मसनवी छंद के लिए अत्यंत आवश्यक माना गया है । इसके अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं -

बस्या शह के इन्साफ़ ते यूं दक्खन
के बसता है पानी ते ज्यूं फूल बन

x x x x

तूं दानी तू ज्ञानी तूं दातार है,
तूं फाज़िल तूं कामिल तूं औतार है ।

x x x x

हर यक इल्म है शाह तूं माहर है सब
छुप्या राज़ तुज अगे ज़ाहर है सब ।[2]

- -

1) संपादक : डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी, गव्वासी - सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 158

2) संपादक : विमला वाफ्रे-नसीरुद्दीन हाशमी, वजही, "कुत्बमुश्तरी", पृ॰ 186, 87, 88

मसनवी की शैली वर्णनात्मक होती है । इसमें कल्पना की उड़ाने कम नहीं होतीं । ऐतिहासिक तथा पौराणिक पृष्ठभूमि पर लिखी जाने वाली मसनवियों में भी स्थान-स्थान पर कल्पना से काम लिया गया है ।

मसनवी में कुछ रूढ़िबद्ध अथवा परंपरागत तथ्यों का निर्वाह किया जाता है । यह निर्वाह बंधन न होकर "रिवायत" कहलाता है । उदाहरणार्थ मसनवी का कवि प्रारंभ में ईश्वर स्तुति करता है -

"इलाही जगत का इलाही सो तूं
करनहार जम बादशाही सो तूं
तेरे हुक्म तल नौ गढ़ आसमान के
रेय्यत मलक तेरे फ़रमान के
ख़ज़ीने बरचा ग़ैब के ग़ैब ते
हुआ तूं अपे पाक फिर ऐब ते
"ग़व्वासी" जो तुज दार का ख़ाक है
तेरी बाट का महज़ ख़ाशाक है ।"[1]

तत्पश्चात् वह पैग़ंबर साहब के प्रति श्रद्धा व्यक्त करता है -

"सचा तूं मुहम्मद सचा मुस्तफ़ा
सचा है तूं अहमद सचा मुरतुज़ा
तूं अव्वल तूं आख़िर तू ही है अमीर
तूं ज़ाहिर तूं बातिन नबी बेनज़ीर
ख़ुद हौर तुज में जुदाई नहीं
लिसे रब सूं तूं आशनाई नहीं

- -

1) संपादक - डा॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी, ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 1-2

"ग़व्वासी" जो सदक़ा है तुज नावं पर

फ़िदा जीव है इसका तेरे पांव पर ।"[1]

पैगंबर साहब के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के पश्चात् वह ख़लीफ़ाओं के लिए आदर प्रदर्शित करता है -

"नबी के अबाबक़ असहाब हैं

सो दूसरे उमर इब्ने खिताब हैं

सो उस्मान नबी के बड़े यार हैं

हमेशा वो उनके वफ़ादार हैं

तूं है सात जग का वली या अली

वलियां तेरे जग के कुली या अली",[1]

अबुबक़ सिद्दीक़, हज़रत उमर, हज़रत उस्मान तथा हज़रत अली को श्रद्धांजली अर्पित करने के बाद, मसनवी का कवि पीर के प्रति आत्मीयता प्रदर्शित करता है -

"वलियां में वली सो मुहीउद्दीन हैं

मक़रब वली सो मुहीउद्दीन है

मुहब्बां जिते है सगल तालेबां

यू महबूब के हैं वो सब मत्लूबां

तुहीं ग़ौसे आज़म सो मशहूर है

चराग़े नबी का तुहीं नूर है ।"[2]

---

1) संपादक - मीर सआदत अली रज़्वी - "ग़व्वासी" सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ० 5

2) संपादक - मीर सआदत अली रज़्वी - गव्वासी : सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ० 8

गुरु महिमा का बखान "ग़व्वासी" ने नहीं किया । वह गुरू के नाम का उल्लेख तक आवश्यक नहीं समझा है । उसके जीवन के प्रारंभिक काल से संबंधित काव्य में भी गुरू के नाम का संकेत नहीं मिलता । गुरू के आधार पर शिष्य के स्तर पर अनुमान लगाया जाता है । युवा अवस्था में ही उच्च कोटि का कवि हो जाने पर भी "ग़व्वासी" के होंट गुरू के लिए सिले ही रहे । "ग़व्वासी" का गुरू महान ही रहा होगा कि उसके समकालीन वरिष्ठ राजकवि वजही को कहना पड़ा -

"इस दकन के शाइरां में तुज शहिंशाह के नज़ीक है "ग़व्वासी" हौर वजही शाइर हाज़िर जवाब"[1]

मसनवी में कवि अपने समकालीन सुल्तान की प्रशंसा भी अनिवार्य रूप से करता है -

"जो सुल्तान अब्दुल्लाह आफ़ाक़गीर
सो लक्खन शहिंशाह गर्दूं सरीर
सगल पादशाहां में इसका है नावं
इसी कुत्बका कुत्बतारा है छांव
परियां देव आवें वतन छोड़ सब
खड़े हो रहें डरते हत जोड़ सब
नित इस शह के सेवक हों सेवें तमाम
देखन शाह कूं यूं के लेवें तमाम
"ग़व्वासी" जो शायर है शह का मदाम
करे यूं दुआ शाह कूं सुबह व शाम"[1]

सुल्तान की प्रशंसा के पश्चात् मसनवीगो आत्मपरिचय प्रस्तुत

---

1. संपादक : मीर सआदत अली रज़वी, ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृ. 9-11

करता हुआ मसनवी की कथा की पृष्ठभूमि बाँधता है । शैन: शैन: कथा प्रारंभ होती है । कथा का वेग बढ़ने पर घटनात्मक वर्णनों का तारतम्य सा बाँध दिया जाता है । इनके अतिरिक्त मसनवियों में संध्या, चंद्र, रात्रि, अंधकार, सूर्योदय, प्रात:काल, मौसम आदि का सजीव वर्णन किया जाता है । कवि आवश्यकतानुसार आखेट, पर्वत, ऋतु, वन, समुद्र, आदि को भी काव्य का विषय बनाता है । केवल इतना ही नहीं, वह मसनवी में नगर, गाँव, यात्रा, विवाह तथा संतानोत्पत्ति आदि के विवरण भी प्रस्तुत करता है तथा संग्राम, स्वर्ग और संभोग आदि का बखान बड़ी कलापूर्णता से करता है । अद्भुत चित्रण जिनमें जिन्न, परी, दरिया आदि के प्रस्तुतीकरण में तो कवि दक्षता रखता ही है । इनके अतिरिक्त वह भावों तथा जड़ वस्तुओं का मानवीकरण भी सफलतापूर्वक कर लेता है ।

दक्खिनी मसनवियों में सहज-पारिवारिक प्रसंग भी मिलते हैं । मायेके में राजकुमारियों की क्रीड़ा, राजकुमार के विदेश जाने अथवा आखेट पर जाने के अवसर पर माँ और पत्नी की वेदना, राजकुमार से राजकुमारी का स्नेह और सहानुभूति, प्रथम पत्नी की विरह दशा आदि का वर्णन दक्खिनी मसनवियों में हुआ है ।

मसनवी की कथाओं में रस की स्वाभाविक अभिव्यंजना बड़ी आकर्षक होती है । कथा की पौराणिकता कवि की मौलिक प्रतिभा का झीना आवरण बनती है । कहीं-कहीं मूल कथा के साथ-साथ छोटी-छोटी प्रासंगिक कहानियाँ भी आ जातीं हैं । इन प्रासंगिक कहानियों से मसनवी के सौंदर्य में चार चांद लग जाते हैं । हिंदी के प्रेमाख्यानों पर विचार व्यक्त करते हुए डॉ॰ सरला शुक्ल ने लिखा है -

"विदेश की यात्रा, मार्ग में बीहड़ वन, भयंकर तूफ़ानी समुद्र, पर्वतों एवं खोहों की चर्चा तथा ऐसे ही प्रयत्नों के बीच देवों, अप्सरा

रूपी राक्षसियों, भयंकर पशु एवं पक्षियों की योजना आश्चर्य एवं कुतूहल के लिए होती है ।"[1]

इसी संदर्भ में उक्त लेखिका का कहना है - "जब नायक नायिका के नगर, उपवन या किसी देव स्थान में पहुँच जाता है तो प्राप्त्याशा होने लगती है । संयोगवश प्रिय के दर्शन पाकर उसका पुन: बिछोह हो जाता है । तब तक प्रिय या नायिका के मन में नायक के लिए प्रेम भावना नहीं हो चुकी होती है, तो उद्भूत हो जाती है और वह भी नायक के वियोग में व्यथित रहने लगती है ।"[2] दक्खिनी कवियों ने मसनवियों को इसलिए अपनाया कि इनके माध्यम से किसी भी लोकप्रिय कथा को काव्य विषय बनाया जा सकता था । दक्खिनी मसनवियों के काव्य-विषय कहीं प्रेम पर आधारित हैं तो कहीं पौराणिक कथाओं पर आश्रित हैं और कहीं इनका फलक ऐतिहासिक घटनाओं पर निर्भर है । इसमें कोई संदेह नहीं कि अधिकांश दक्खिनी मसनवियां प्रेम कहानियों पर रची गई हैं । मसनवी लिखते समय कवि को यह स्वतंत्रता होती है कि वह किसी भी छोटी-बड़ी घटना का विवरण दे । सामान्य जीवन से संबद्ध छोटी सी बात से लेकर कल्पना की संभावित उड़ान तक कवि अपनी कलात्मक क्षमता का परिचय दे सकता है ।

<u>दक्खिनी मसनवी</u>

दक्खिनी मसनवियों का अध्ययन करते समय विचार आता है

---

1) डा॰ सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती सूफ़ी कवि और उनका काव्य, पृ॰ 208

2) डा॰ सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती सूफ़ी कवि और उनका काव्य, पृ॰ 208

कि क्या यह दक्खिनी प्रेमाख्यानक हिंदी प्रेमाख्यानकों से समता रखते हैं ? हिंदी प्रेमाख्यानक प्रतीकात्मक होते हैं, उनमें प्रत्येक लौकिक बात के आवरण में अलौकिक भाव छिपा रहता है । दक्खिनी की अधिकांश मसनवियां हिंदी की प्रेम मार्गी सूफ़ी धारा की आख्यानक परंपरा से भिन्न मानी गई हैं -

"यहां प्रेमाख्यानक शब्द का प्रयोग उस अर्थ में नहीं हुआ है, जिस अर्थ में वह हिंदी साहित्य के इतिहास में होता रहा है । हिंदी साहित्य में यह शब्द उन काव्यों के लिए प्रयुक्त हुआ है, जिनमें प्रेम का अलौकिक रूप लौकिक रूप से आच्छादित है । दक्खिनी में इस प्रकार के रहस्यगर्भित प्रेमाख्यान की रचना नहीं हुई ।"[1]

दक्खिनी मसनवियां धार्मिक धरातल की अपेक्षा नैतिक पृष्ठ भूमि पर रची गई हैं । इनमें धर्म के शुष्क, गूढ़ रहस्यवादी तत्वों के स्थान पर काव्यात्मक साहित्यिक मूल्य अधिक हैं । यह एक अन्य बात है कि दक्खिनी मसनवियों की कुछ कथाएं हिंदी के प्रेमाख्यानक काव्यों पर आधारित हैं, तो कुछ फ़ारसी कथा-काव्य पर, और कभी लोकप्रिय भारतीय कथा-प्रसंग दक्खिनी मसनवियों का आलंबन बने हैं ।

दक्खिनी की प्रमुख इश्क़िया मसनवी (प्रेमाख्यानक) के कवियों के नाम तथा उनकी मसनवियों का निम्नक्रम मोटे तौर पर निम्न-लिखित है -

- -

1) डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰सं॰ 197

क्रमांक	दक्खिनी कवि का नाम	दक्खिनी मसनवी का नाम
1.	वजही	कुत्बमुश्तरी
2.	"ग़व्वासी"	1. सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल 2. तूतीनामा, 3. मैना सत्वंती
3.	मुक़ीमी	चंदरबदन व माहियार
4.	नुस्रती	गुलश्ने इश्क़
5.	अमीर	बहरामो-बानू हसन
6.	सनती	क़िस्सा बेनज़ीरी
7.	इब्न-ए-निशाती	फूलबन
8.	मलिक खुश्नूद	1. यूसुफ़ ज़ुलैख़ा, 2. बाजार-ए-हुस्न 3. हश्त बहिश्त
9.	तबई	बहराम व गुलअंदाम
10.	सय्यद मीरां हाशमी	यूसुफ़ ज़ुलैख़ा

दक्खिनी के आलोच्य कवि "ग़व्वासी" ने कोई पौराणिक अथवा ऐतिहासिक मसनवी नहीं लिखी ।

ग़व्वासी की मसनवियां

पहले कहा जा चुका है कि दक्खिनी कवि "ग़व्वासी" ने कोई पौराणिक अथवा ऐतिहासिक मसनवी नहीं लिखी । अब तक "ग़व्वासी" की तीन मसनवियां प्रकाश में आई हैं -

1) डा॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 198

1. सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल
2. तूतीनामा
3. मैना सत्वन्ती ।

"ग़व्वासी" की उपरोक्त तीन मसनवियों में से केवल पहली मसनवी, "सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल," देवनागरी लिपि में, जनवरी 1955 ईस्वी में, छपी । इसका संपादन डा॰ राजकिशोर पाण्डेय तथा अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी ने किया । इनको उर्दू में, क्रम से मीर सआदत अली रज़वी तथा डा॰ गुलाम उमर खां साहब ने संपादित किया है । दोनों ही उर्दू में प्रकाशित हो चुकी हैं ।

: खण्ड (क) :

1. <u>सै, ब, ज एवं स्रोत</u>

1.1 <u>स्रोत</u>

ग़व्वासी ने मसनवी "सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल" में कहीं भी मसनवी की कथा के मूल स्रोत के संबंध में कुछ नहीं कहा । उसने यह भी नहीं बताया कि उसकी यह मसनवी एक फ़ारसी गद्य-रचना का क्रमश: दक्खिनी काव्यानुवाद है । इसके विपरीत ग़व्वासी ने इसे अपनी कृति बताने का प्रयास किया है -

मेरा जीब बुलबुल हो बोलन लग्या
छुपे ग़ैब के नग़्मे खोलन लग्या
हुआ अक़्ल का दस्त माया मुझे
तो इस धात खातिर में आया मुझे
के पंजाऊं ना दिल ने ताज़ा निगार
जो दुनियां में अपना अछे यादगार

मैं यू बोल पूरा किया नईं लगूं
निदा ग़ैब का आई या मुजकू यूं
के ए माजे़ नक्शा कूं पहचानहार
बचन ग़ैब के ढूंड-ढंड लया नहार
के सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल
यू दोनों हैं आलम मने बे मिसाल
इनन हूई का दास्तां बोल तूं
सो दफ्तर उनन इश्क़ का खोल तूं
मेरा दिल ख़ज़ीना जूं मामूर है
बचन के जवाहर सूं भरपूर है ।"[1]

सै॰ब॰ज॰

कथोल

"सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल" की कथा के संबंध में इसके मूल संपादक मीरसआदत अली रज़्वी ने लिखा है - "इसकी कहानी अलीफ़ लैला के फ़ारसी अनुवाद की एक प्रसिद्ध कथा है । इसमें मिश्र के शहज़ादे सैफुलमुलूक और अजन्ना की शहज़ादी बदी उज्जमाल के प्रेम कहानी है । यह फ़ारसी गद्य में है । ग़व्वासी ने उसी फ़ारसी गद्य से दक्खिनी में इसका काव्यानुवाद किया है ।"[2]

डा॰ श्रीराम शर्मा ने बदी उज्जमाल को चीनी राजकुमारी बताया है -

- -

1) मीर सआदत अली रज़्वी-ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 14-15॰

2) संपादक : मीर सआदत अली रज़्वी-ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 19

"सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल 14 हज़ार पंक्तियों का है। इसमें मिस्र के राजकुमार सैफुलमुलूक और चीनी राजकुमारी बदी उज्जमाल के प्रेम की कहानी है। इस कहानी को "अरेबियन नाइट्स" (सहस्र रजनी चरित्र) में देखा जा सकता है।"[1]

गव्वासी की यह मसनवी कालांतर में, औरंगज़ेब के युग में, "गुलदस्त-ए-इश्क़" के नाम से, शमशीर खाँ के अनुरोध पर, मिर्ज़ा बदी अस्फ़हानी ने फ़ारसी भाषा में काव्य-बद्ध की थी।

किंवदंती है कि सुल्तान महमूम ग़ज़नवी को कहानी सुनने का बड़ा चाव था। जो कोई सुल्तान के सम्मुख मनोरंजक कहानी अथवा आख्यानक प्रस्तुत करता उसे सुल्तान पुरस्कृत करता था। सुलतान महमूद के मंत्री हसन मैमंदी को मन ही मन शाह की यह शाहखर्ची पसंद नहीं आती थी क्योंकि इससे राज्य के कोष पर ह्रासात्मक प्रभाव पड़ता था। अत: हसन मैमन्दी ने सोचा कि वह स्वयं सुल्तान के लिए एक अनुपमेय आख्यानक प्रस्तुत करेगा। हसन मैमंदी ने यह प्रस्ताव सुल्तान महमूम ग़ज़नवी के सम्मुख रखा जिसे महमूद ग़ज़नवी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। सुल्तान ने यह भी कहा कि यदि हसन मैमंदी वास्तव में कोई अच्छी कहानी लाकर सुनायेगा तो वह उसे उपहार स्वरूप एक नगर देगा। यदि मैमंदी मनोरंजन क़िस्सा लाने में असफ़ल होगा तो वह उसे देश से निकाल बाहर करेगा। हसन मैमंदी एक वर्ष का अवकाश प्राप्त करके, अच्छी कहानी ढूंढ लाने के उद्देश्य से, यात्रा पर निकल पड़ा। घूमते-घूमते वह दमश्क़ के राज्य दरबार में पहुंचा। उसने पता चला कि दमश्क़ के सुलतान से अपनी दुविधा बताई। दमश्क़ का सुलतान बहुमूल्य उपहारों के प्रभाव में आ चुका था। शिष्टता के नाते उसने कहानियों

- -

1) डा॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 278

की एक पुस्तक सुलतान महमूद ग़ज़नवी के मंत्री हसन मैमंदी को प्रति उपहार स्वरूप भेंट की । कथित पुस्तक में तीन कहानियां थी - 1) क़िस्सा बूस्ताने इरम, 2) किस्सा सैफुल मुलूक तथा 3) क़िस्सा शाहपाल बिन शाह रूख़ ।

दूसरी किंवदंती के अनुसार सुलतान महमूद ग़ज़नवी ने एक पुस्तक "मजनुलहिकायत" से सैफुलमुलूक की अधूरी कहानी सुनकर यह आदेश दिया कि जो कोई इस कहानी को, पूरी, सुनाएगा उसे पुरस्कृत किया जाएगा । इस अवसर पर हसन मैमंदी नामक, सुलतान महमूद ग़ज़नवी के एक मंत्री ने उस कहानी का उत्तरार्ध ढूंढ लाने का प्रण किया । मैमन्दी यात्रा पर निकल पड़ा । उसे ज्ञात हुआ कि ऐसी एक पुस्तक दमश्क़ के सुलतान के शाही कोष में सुरक्षित है तथा उक्त पुस्तक का नाम "ज़ुबदतुलजवाब" है । वह दमश्क़ पहुंचता तथा किसी प्रकार वहां के दरबार तक उसकी रसाई हो गई । हसन मैमंदी के स्वभाव से प्रभावित होकर दमश्क़ के सुलतान ने उसे अपना मित्र बना लिया । हसन ने सुलतान को अपनी समस्या बताई । परंतु दमश्क़ के सुलतान ने हसन मैमंदी से कहा कि वह पुस्तक "ज़ुब्दतुलजवाब" उसके पुरखों की निशानी है अतः किसी को नहीं दी जा सकती तथा प्रतिलिपित भी नहीं की जा सकती । विशेष बात यह भी कि उस पुस्तक को दमश्क़ के शाही दरबार में, केवल रमज़ान के महीने में ही निकाला जाता । दरबार समाप्त होने पर शाह अकेले में उस पुस्तक की कहानियां किसी से पढ़वाकर सुनता था । हसन मैमंदी चतुर था । ठीक समय पर हसन ने गुप्तरूप से दो व्यक्तियों की सहायता से, पुस्तक पढ़े जाने के अवसर पर, पुस्तक की दो प्रतियां लिखवालें । यही प्रतियां हसन ने महमूद ग़ज़नवी को भेंट स्वरूप प्रस्तुत कीं ।

यह भी कहा जाता है कि सुलतान महमूद ग़ज़नवी ने इस कथा को फ़ारसी में लिखवाया जिसे कालांतर में पीर मुहम्मद बख्श ने पंजाबी भाषा में काव्यबद्ध किया ।

"सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल" को भले ही फ़ारसी का दक्खिनी काव्यानुवाद मान लिया जाए परंतु स्वीकार करना पड़ेगा कि ग़व्वासी ने -

> I§ शब्दानुवाद नहीं किया, II§ चुनी हुई घटनाओं को मौलिक ढंग से प्रस्तुत किया, III§ अनावश्यक तथा सुदीर्घ घटनाओं को घटाकर प्रस्तुत किया तथा IV§ आवश्यकतानुसार कहीं-कहीं पात्रों के नाम भी बदल दिये ।

यह ग़व्वासी की मौलिक रचना नहीं है किंतु मौलिक रचना से कम भी नहीं है । "सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल" की रचना सन् 1035 हिजरी अर्थात् सन् 1626 ईस्वी में हुई । ज्ञात होता है कि कवि ने इस मसनवी को एक मास के समय में पूर्ण किया -

> बहर हाल यू नज़्म इलहाम सूं
> लिया मैं नवल शाह के नाम सूं
> बरस थक हज़ार होर पंज तीस में
> लिखा ख़त्म यू नज़्म दिन तीस में
> पढ़िया कूं तो सब आवे यू काम कूं
> देवे ज़ौक़ अदिक ख़ास होर आम कूं ।"[2]

- -

1§ संपादक : मीर सआदत अली रज़वी-ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 21

2§ -वही- , " 179

सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल की कुछ प्रतियों में कवि ने शाह-ए-वक़्त की स्तुति में जो पंक्तियां लिखी हैं उनमें सुलतान मुहम्मद-कुत्बशाह का नाम लिखा है । सालारजंग पुस्तकालय की एक प्रति में आया है -

सो सुलतान मुहम्मद कुत्बशाह गंभीर
जग आधार है और जग दस्तगीर ।

कुलयात-ए-गव्वासी की भूमिका में डॉ. मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर ने लिखा है - "ऐसा ज्ञात होता है कि यह स्तुति केवल व्यावहारिक पूर्ति हेतु लिखी गई थी तथा सुलतान मुहम्मद कुत्बशाह के स्वभाव को देखते हुए ग़व्वासी ने यह पुस्तक उसकी सेवा में प्रस्तुत ही नहीं की । परंतु उस बादशाह की युवावस्था में अकस्मात मृत्यु के कारण उनको अवसर मिल गया कि स्तुति की पंक्तियां बदल दें तथा मुहम्मद कुत्बशाह के स्थान पर सुलतान अब्दुल्लाह कुत्बशाह का नाम लिख दें । अत: ग़व्वासीने स्तुति की पंक्तियों को बदलकर यूं लिखा -

जो सुलतान अब्दुल्लाह आफ़ाक़ गीर
सुलक्खन शहिंशाह गई सरीर
चंदा चौदवां खुसरवी बुर्ज का
अमोलक रतन हुस्न के दरज का
सकल बादशाहां में उसका है नांव
इसी कुत्ब का कुत्ब तारा है छांव ।[1]

विशेष बात यह है कि जिस समय ग़व्वासी ने, "जो सुलतान अब्दुल्लाह

- -

1) संपादक, मुहम्मद बिन उमर - कुलयात-ए-ग़व्वासी, भूमिका, पृ. 9

आफ़ाक़गीर, सुलक्खन शहिंशाह गई सरीर" कहकर तत्कालीन शाह की प्रशंसा की उस समय शाह की आयु केवल बारह वर्ष थी ॥ बारह वर्ष के समसिन शाह अब्दुल्लाह कुत्बशाह को राजगद्दी पर बिठाकर उसकी माँ ध्यात बख़्शी बेगम स्वयं राज-काज चलाती थी । अतः यदि ग़व्वासी ने पहले मुहम्मद कुत्बशाह की प्रशंसा में अपनी मसनवी की पंक्तियाँ लिखीं थीं तो फिर बारह वर्ष का शाह अब्दुल्लाह कुत्बशाह भला मसनवी की बारीकियों को क्या जानता था होगा ? सुलतान मुहम्मद कुत्बशाह की मृत्यु उसी वर्ष हुई जिस वर्ष ग़व्वासी ने "सैफ़ुल मुलूक व बदी उज्जमाल", सन् 1035 हिजरी में लिखा । (सन् 1626 ई॰) अतः मीर सआदत अली रज़्वी का विचार है -

"यदि मान लिया जाए कि यह रचना सुलतान मुहम्मद ही के काल की है परंतु उस समय क्यों कि ग़व्वासी की दरबार में पहुँच न हो सकी थी इसलिए वह ग़व्वासी के पास ही पड़ी रही । बाद में जब ग़व्वासी की पहुँच सुलतान अब्दुल्लाह कुत्बशाह के दरबार में हुई तो ग़व्वासी ने शाह के नाम का शेर बदल कर लिख दिया ।"[1]

वैसे ग़व्वासी ने मसनवी को तीस दिन में पूरा करने तथा सन् दस सौ पैंतीस में लिखने की बात सत्यतापूर्वक कही है -

बरस यक हज़ार होर पंच तीस में
किया ख़त्म यू नज़्म दिन तीस में [2]

- -

1) संपादक, मीर सआदत अली रज़्वी-ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 31

2) संपादक : मीर सआदत अली रज़्वी-ग़व्वासी-सैफुलामुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 179

डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय तथा अकबरुद्दीन सिद्दीकी द्वारा संपादित ग़व्वासी की मसनवी में नसीरुद्दीन हाशमी के संदर्भ से सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल के दो अन्य सन् प्रस्तुत किए गए हैं तथा इनके बारे में कहा गया है कि यह प्रतियाँ लंदन के इंडिया आफिस के पुस्तकालय में सुरक्षित है । रचनाकाल से संबंधित दो शेर इस प्रकार हैं -

1) बरस एक हज़ार होर पंज बीस में
किया ख़त्म यू नज़्म दिन तीस में
11) बरस एक हज़ार होर सत्ताईस में
किया ख़त्म यू नज़्म दिन तीस में ।[1]

"कुलियाते ग़व्वासी" की भूमिका में डॉ॰ ज़ोर ने इंगित किया है - "इसकी कुछ प्रतियों में रचना काल सन् 1025 हिजरी अथवा सन् 1027 हिजरी लिखा है वह अशुद्ध नहीं है । अत: इनमें बादशाहे वक्त की प्रशंसा में जो शेर हैं उनमें सुलतान मुहम्मद ही का नाम उद्धृत है । अत: सालारजंग पुस्तकालय में विद्यमान एक प्रति में यह शेर मिलता है -

सो सुलतान मुहम्मद कुत्बशाह गंभीर
जग आधार है और जग दस्तगीर ।"[2]

दक्खिनी के अधिकांश आलोचकों ने सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल का रचनाकाल सन् 1035 हिज्री (सन् 1626 ई॰) माना है । इनके अतिरिक्त जो अशार रचना को 1025 हिजरी अथवा 1027 हिज्री का सिद्ध करते हैं - इन सबकी दूसरी पंक्ति निर्विवाद रूप से समान है

- -

1) संपादक, राजकिशोर पाण्डेय, अकबरुद्दीन सिद्दीकी, ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृ॰ 3

2) संपादक : मुहम्मद बिन उमर-कुलयाते ग़व्वासी, भूमिका, पृ॰ 9

"किया ख़त्म यू नज़्म दिन तीस में" अत: इस बात से कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता कि इसे हम "बरस यक हज़ार होर पंज तीस में" कहें

अथवा

"बरस यक हज़ार हो पंज बीस में"

अथवा

"बरस यक हज़ार होर सत्ताईस में" मानें ।

क्यों कि हिज्री 1035 मानने पर अब्दुल्लाह कुत्बशाह की उम्र बारह वर्ष ठहरती है यदि हिज्री 1027 अथवा हिज्री 1025 मानी जाए तो अब्दुल्लाह कुत्बशाह बालक और शिशु हो जाता है । वास्तविकता यह है कि सैफुलमुलूक कवि की हिज्री 1035 में लिखी गई रचना है जिसका सन् ईस्वी 1626 ठहरता है । इस रचना में तत्कालीन शाह की प्रशंसा में लिखी गई पंक्तियों को कवि ने कालांतर में बदल दिया जबकि उसकी पहुँच अब्दुल्लाह कुत्बशाह के दरबार में हो गई थी ।

1.2 कथासार

प्राचीनकाल की बात है कि मिश्र देश में आसिम नवल नाम का बादशाह राज्य करता था । मिश्र के आसपास के कई एक छोटे बड़े नगर उसके आधीन थे । बादशाह बड़ा प्रतिभावान था । धन-दौलत, सेना आदि किसी चीज़ की कमी नहीं थी । परंतु संतान न होने के कारण वह दु:खी रहता था । दीन-दु:खियों की सेवा कर, सूफ़ी संतों का आदर करता तथा ईश्वर से प्रार्थना करता था कि वह उसे संतान धन से फलीभूत करे । वह अत्यंत उदास रहने लगा तथा एकांतप्रिय हो गया । राज्य के मंत्रियों को शाह की चिंता के कारण चिंता हुई । आपसी परामर्श के पश्चात् मंत्रियों के अनुरोध पर

ज्योतिषि बुलाए गए । एक ज्योतिषी ने बताया यदि बादशाह यमन देश की राजकुमारी से विवाह करे तो उसे संतान होने की संभावना है । यह भविष्य वाणी सुनकर शाह आसिम नवल प्रसन्न हुआ । उसने बहुत से मूल्यवान उपहार देकर एक दूत को शाह यमन के यहाँ, राजकुमारी से विवाह के प्रस्ताव सहित भेजा ।

यमन के राजा ने न केवल उपहार स्वीकार किए अपितु विवाह के प्रस्ताव को भी प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया । बड़ी धूमधाम से मिश्र के राजा आसिम नवल का विवाह यमन की राजकुमार के साथ संपन्न हो गया । ज्योतिषियों की भविष्यवाणी साकार सिद्ध हुई । आसिम नवल के विवाह के दस वर्ष के भीतर पुत्र उत्पन्न हुआ । पुत्र सुंदर था, उसका नाम सैफुलमुल्क रखा गया । संयोगवश राजा के एक मंत्री सालेह को भी उसी समय पुत्र उत्पन्न हुआ । मंत्री सालेह ने अपने पुत्र का नाम साअद रखा । बादशाह आसिम नवल ने अपने पुत्र सैफुलमुलूक तथा अपने मंत्री के पुत्र साअद की देखभाल का प्रबंध एक साथ किया । देखते ही देखते सैफुलमुलूक और साअद बड़े होने लगे । दोनों ने साथ-साथ शिक्षा पूरी की तथा युद्ध-कौशल में भी कला की बुलंदियों को छूने लगे । दोनों कुमारावस्था को पार कर जब युवावस्था को पहुंचे तो एक दिन बादशाह ने दोनों को दरबार में आमंत्रित किया तथा राज्यकोश से एक पेटी मंगवाकर उसमें से एक अंगूठी तथा एक ज़रदार कपड़ा निकाल कर सैफुलमुलूक को उपहार स्वरूप भेंट किया तथा साथ में एक सुंदर अश्व देते हुए कहा कि यह उपहार बादशाह को हज़रत सुलेमान ने दिए थे जिसे आज तक सुरक्षित रखा गया । अब क्योंकि राजा का कोई उत्तराधिकारी नहीं है इसलिए राजा यह उपहार सैफुलमुलूक को दे रहा है ।

सैफुलमुलूक अंगूठी तथा ज़रदार कपड़ा लेकर बहुत प्रसन्न हुआ । अपने महल को लौट कर रात भर प्रसन्न रहा । शाहज़ादे ने जब कपड़ा खोलकर देखा तो उस ज़रदार कपड़े की बुनाई में एक सुंदरी की तस्वीर झिलमिलाती हुई दिखाई दी । उस चित्र का सौंदर्य शाहज़ादे के लिए अभूतपूर्व तथा प्रभावकारी सिद्ध हुआ । अतः शाहज़ादा उस सुंदरी के चित्र पर इतना मुग्ध हुआ कि सुध-बुध खो बैठा । बादशाह को जब यह समाचार मिला कि शाहज़ादा सुंदरी के चित्र पर मर मिटा है तो उसने साअद को बुलाया और उससे ज़रदारी कपड़ा तथा अंगूठी प्राप्त होने की घटना सुनाई ।

एक दिन बादशाह आसिम नवल तख़्त पर बैठा हुआ था कि एक बवंडर उठा और झंझावात चलने लगी कि कुछ परियाँ यह वस्तुएँ लेकर राजा के सम्मुख प्रस्तुत हुई और कहा कि इन्हें हज़रत सुलेमान ने शाह आसिम के पास भेंट स्वरूप भेजा है । ज़रदार कपड़े की बुनाई में झिलमिलाती तस्वीर शहपाल इब्ने शाह रुख़ बादशाह अजनह की सुपुत्री बदी उज्जमाल की है । शहपाल इब्ने शाह रुख़ बादशाह अजनह गुलिस्ताने इरम का वासी है । उसकी कन्या बदीउज्जमाल को प्राप्त करना अत्यंत कठिन है ।

शाह आसिम नवल के देश मिश्र के अनुभवी हकीम, वैद्य बुलाए गए । उन्होंने राजकुमार सैफुल मुलूक की चिकित्सा के प्रयोजन किए । परंतु सब प्रयत्न विफल सिद्ध हुए । विवश हो बादशाह ने राजकुमार सैफुलमुलूक को सांत्वना दी तथा अपने विश्वासपात्रों को गुलिस्ताने इरम की खोज में भेज दिया । एक वर्ष के पश्चात् वे लोग निराश होकर लौट आये । गुलिस्ताने इरम का पता उन्हें नहीं मिला ।

राजकुमार सैफुलमुलूक गुलिस्ताने इरम की शहज़ादी बदी उज्जमाल के प्रेम में इतना पागल हुआ कि उसने स्वयं बादशाह से, गुलिस्ताने

इरम की खोज की अनुमति प्राप्त की और साअद को साथ लेकर अभियान पर निकल पड़ा । सैफुलमुलूक सर्वप्रथम चीन देश पहुँचा । चीन के राजा ने राजकुमार सैफुलमुलूक तथा साअद का स्वागत किया । राजकुमार की सहायतार्थ एक सौ सत्तर वर्ष के एक वृद्ध को बुलाया गया । वृद्ध ने कहा कि वह समस्त विश्व का भ्रमण कर चुका है परंतु उसने विश्व में इस नाम के किसी नगर को नहीं देखा और न इस नाम के किसी नगर के बारे में किसी से कुछ सुना है । राजकुमार को पता चला कि कुस्तुंतुनियां क्योंकि बहुत बड़ा व्यापारिक केंद्र है जहां विश्व भर से लोग आकर क्रय-विक्रय करते हैं । संभवत: वहां गुलिस्ताने इरम का पता मिल सके । सैफुलमुलूक चीन के बादशाह से आज्ञा प्राप्त करके कुस्तुंतुनियां की ओर चल पड़ा । मार्ग में भयंकर तूफ़ान आया समस्त नौकाएं पानी में डूब गईं । सैफुलमुलूक तथा साअद बिछड़ गए ।

सैफुलमुलूक एक लकड़ी के तख़्ते पर बहता हुआ एक द्वीप में पहुँचा । द्वीप में मानव-भाजक लोग रहते थे । उन्होंने शाहज़ादे को बंदी बनाकर अपने राजा के सम्मुख पेश किया । राजा ने शाहज़ादे को अपनी पुत्री के पास भेजा कि वह सैफुलमुलूक को भूनकर खाजाए । वह हब्शी राजकुमारी सैफुलमुलूक पर मर मिटी । हब्शान ने पाणिग्रहण का प्रस्ताव रखा । सैफुलमुलूक ने इन्कार किया तो वह बंदी बना लिया गया सैफुलमुलूक अपनी चतुराई के कारण किसी प्रकार मुक्त हुआ तथा एक ऐसी द्वीप में पहुंचा जहां दानवाकार जल पशु रहते थे । रात बिताई और सुबह होने पर वहां से भी चल पड़ा । वह कफ़्तारां द्वीप में पहुंचा वहां पर भी राजकुमारी उस पर आसक्त हो गई और उससे वही सब कुछ चाहने लगी-जो हब्शान राजकुमारी पहले चाह चुकी थी । शहज़ादा सैफुलमुलूक कफ़्तारां द्वीप से भी भाग

निकला तो सकसारों के नगर में आ फंसा । यहां के बादशाह ने उसे विचित्र जंतु समझकर कैद कर दिया । संयोगवश कुछ राक्षस भी सैफुलमुलूक की खोज में आ पहुंचे और सकसारों से उनका घमासान युद्ध हुआ । अवसर पाकर शहज़ादा निकल भागने में सफल हो गया । वह ऐसे द्वीप में पहुंचा जहां तस्मापा लोग रहते थे । यहां संकट उठाकर किसी प्रकार मुक्त हुआ और कैसरिया नगर में आ पहुंचा । इस नगर में वानरों का वास था । केवल एक मानव था जो कि इन वानरों पर शासन करता था । उसने सैफुलमुलूक का स्वागत किया और कई दिन शाहज़ादे को अपना अतिथि बनाए रखा । वहां से भी गुलिस्ताने इरम का पता न मिलने पर शहज़ादा चल पड़ा । वह एक द्वीप में आ गया । इस द्वीप में हाथी के बराबर के विचित्र मकोड़े देखकर वह सिहर गया । फिर किसी प्रकार एक वृक्ष पर चढ़ने में सफल हुआ, वहां से उसने देखा कि एक शुतर मुर्ग नदी के तट पर बैठा हुआ है । भागकर शुतर मुर्ग के पास पहुंचा और उसके पांव पकड़ लिए । शुतर मुर्ग शहज़ादे को लेकर ऊंची उड़ान भर अपने घोंसले में पहुंचा । वह शहजादे को अपने बच्चों के सम्मुख, भोजन स्वरूप डालना चाहता था । उतने में अचानक एक बड़ा थाला अजगर आकर शुतरमुर्ग के बच्चों को निगल गया । सैफुलमुलूक वहां से भागा-भागा एक जल-प्रपात के किनारे पहुंचा । कुछ देर विश्राम किया । वहां एक मीठा अनार पड़ा हुआ मिले उसे खाकर शहज़ादे ने कुछ राहत प्राप्त की । तभी सैफुलमुलूक को सुनाई दिया, एक पक्षी वृक्ष पर से दूसरे पक्षी से कह रहा था, शहज़ादा ने जो अनार खाया है वह एक देव का अनार था जिसकी खोज में देव ने बडे संकट झेले थे । वह देव यहां पानी पीने के लिए रुका था तभी यह अनार भूलकर चला गया । अतः वह देव कुछ ही देर में आएगा और अनार न पाकर क्रोध में शहज़ादे को कच्चा खालेगा । देव आया परंतु

सुलेमानी अँगूठी के चमत्कार स्वरूप सैफुलमुलूक देव के हाथों से मुक्त हुआ और चल पडा ।

शहज़ादा इस्कंद द्वीप में पहुँचा । इस्कंद द्वीप में शहज़ादे की भेंट एक शहज़ादी से हुई । एक देव शहज़ादी को सरांदील नामक नगर से उठा लाया था और इस्कंद द्वीप में बंदी बनाकर रखा था । सैफुलमुलूक ने चतुराई तथा सुलेमानी अँगूठी की सहायता से उस देव को मार डाला और शहज़ादी को साथ लेकर चल पड़ा ।

उसी शाहज़ादी से सैफुलमुलूक को बदी उज्जमाल का पता ज्ञात हुआ । सैफुलमुलूक उस शहज़ादी को उसके चिचा ताजुलमुलूक के पास ले आया । शहज़ादी का चिचा अपनी भतीजी को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ । वे दोनों सरांदील नगर पहुँचे । शहज़ादी ने शहज़ादे सैफुल मुलूक को वचन दिया कि वह उसके उपकार के बदले में उसे अवश्य बदी उज्जमाल से मिलाएगी । उसके अनुसार बदी उज्जमाल प्राय: उस शहज़ादी के नगर सरांदील आया करती है । शहज़ादा सैफुलमुलूक बदी उज्जमाल का पता मिल जाने तथा उसके सरांदील आते-जाते रहने की सूचना मिलने पर प्रसन्नचित्त सरांदील में घूमने लगा । एक बार सैफुलमुलूक सरांदील के बाजार में घूम रहा था कि उसकी भेंट साअद से हो गई । बिछड़े हुए बचपन के मित्र मिलकर अत्यंत ही प्रसन्न हुए । संयोगवश उन्हीं दिनों बदीउज्जमाल भी सरांदील आ पहुँची । दिये गए वचन के अनुसार सरांदील की शहज़ादी तथा उसकी माँ ने सैफुलमुलूक से बदीउज्जमाल की भेंट करवा दी । बदीउज्जमाल भी सैफुलमुलूक पर मर मिटी परंतु अपने अग्निवर्ण तथा सैफुलमुलूक के माटी के होने की समस्या पर विचार व्यक्त किया । तय हुआ कि शहज़ादा बदीउज्जमाल की दादी शहरबानों से विवाह संबंधी सम्मति प्राप्त करें और शहज़ादी बदीउज्जमाल की दादी की सहायता एवं

सहानुभूति से बदीउज्जमाल के पिता शहपाल इब्नेशाह रुख से विवाह संबंधी अनुमति प्राप्त करे । बदीउज्जमाल का विवाह उसके पिता शहपाल इब्ने शाह रुख की मर्जी के बिना संभव नहीं । सैफुलमुलूक सहमत हो गया । बदीउज्जमाल ने अपनी दादी को एक पत्र लिखा और एक जिन्न को बुलाकर जिन्न के साथ सैफुलमुलूक को पत्र सहित अपनी दादी के यहां भेजा । बदीउज्जमाल की दादी शहरबानो को भी यह संबंध भला लगा । वह शहजादा सैफुलमुलूक को साथ लेकर अपने पुत्र शहपाल इब्ने शाहरुख के पास पहुंची तथा विवेक-बुद्धि से काम लेती हुई बदी उज्जमाल के पिता को इस विवाह के लिए सहमत कर लिया ।

इसी मध्य सैफुलमुलूक, जिसे बाग में छोड़ कर बदी उज्जमाल की दादी शहरबानो विवाह की अनुमति हेतु शहपाल इब्ने शाहरुख के पास गई थी, बादशाह दरियाए कुलजुम के सिपाहियों द्वारा बंदी बना लिया गया । वे सैफुलमुलूक की खोज में, पहले ही से जुटे हुए थे । दरियाए कुलजुम का बादशाह अपने भाई की हत्या का बदला, सैफुलमुलूक से लेना चाहता था । उसके मंत्री के कहने पर उसने सैफुल मुलूक को मार डालने की अपेक्षा यातनापूर्ण कैद में रखा ताकि वह तड़प-तड़प कर मरे ।

इधर जब शहपाल इब्ने शहरुख के आदमियों ने सैफुलमुलूक की खोज आरंभ की और उसे ज्ञात हुआ कि सैफुलमुलूक शाह कुलजुम द्वारा बंदी बनाकर ले जाया गया है तो वह सेना लेकर कुलजुम नदी के तट पर पहुंचा और कुलजुम पर हल्ला बोल दिया । घमासान का युद्ध हुआ । युद्ध में शहपाल की विजय हुई । सैफुलमुलूक मुक्त हुआ । गुलिस्ताने इरम लौटकर शहपाल इब्ने शहरुख ने बड़ी धूम-धाम से सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल का विवाह कर दिया । कुछ समय गुलिस्ताने

हरम में सुखपूर्ण व्यतीत करके शहज़ादा सैफुलमुलूक व शहज़ादी बदी उज्जमाल सरांदील नगर आए । यहां इनके कहने पर साअद का विवाह शहज़ादी सरांदील से हुआ । सैफुलमुलूक व साअद अपने अभियान में सफल हो अपनी पत्नियां बदी उज्जमाल तथा शहज़ादी सरांदील सहित अपने देश मिस्र को लौट आए और आदरपूर्वक शाह आसम नवल के सम्मुख नत मस्तक हो गए । शाह आसम नवल अत्यंत प्रसन्न हुआ तथा राजपाट अपने पुत्र सैफुलमुलूक को सौंपकर स्वयं ईश्वर स्तुति में लीन हो गया ।

2· तूतीनामा – स्रोत एवं कथासार

2·1 स्रोत

"तूतीनामा", "ग़व्वासी" की द्वितीय मसनवी है । इससे पूर्व वह "सैफुलमुलूक व बदिउज्जमाल" नामक मसनवी लिख चुका था । "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" को संस्कृत-शुकसप्तति के फ़ारसी अनुवाद पर आधारित माना जाता है –

"यह संस्कृत रचना "हितोपदेश" के "शुकसप्तति" के फ़ारसी अनुवाद का दक्खिनी हिंदी में अनुवाद है ।"[1]

संस्कृत की "शुकसप्तति" का फ़ारसी अनुवाद मौलाना ज़िया उद्दीन बख़्शी ने किया । "सप्तति" का अर्थ होता है, सत्तर । अत: भारत से "तूतीनामा" की यह कहानियां, मौलाना ज़ियाउद्दीन बख़्शी के अनुवाद के माध्यम से फ़ारसी में गईं । परंतु मौलाना ने समस्त सत्तर कहानियों को न लेकर उनमें से केवल बावन कहानियों को फ़ारसी अनुवाद के लिए चुना ।

- -

1) डा॰ रहमतुल्लाह, दक्खिनी हिंदी और उसके प्रेमाख्यान, पृष्ठ 59

यह तथ्य अभी तक स्पष्ट नहीं हो सका कि फ़ारसी का "तूतीनामा" शुक-सप्तति का अक्षरशः अनुवाद है अथवा केवल भावानुवाद है । इस संबंध में, दक्खिनी-आलोचक डॉ॰ श्रीराम शर्मा का मत द्रष्टव्य है -

"फ़ारसी के "तूतीनामा" को शुकसप्तति का अनुवाद मानना उचित नहीं है । यह कहना उचित नहीं होगा कि भारत से फ़ारसी में जो कुछ गया, वह संस्कृत के माध्यम से ही गया है । भारत के अनेक फ़ारसी लेखकों का ध्यान लोक-कथाओं पर गया । उन लोगों ने लोक कथाओं को सीधे फ़ारसी में लिया । इन कथाओं के आधार पर काव्य रचे । भारत में तोते के मुँह से कथा कहाने की प्रथा पुरानी है ।"[1]

एक अन्य दक्खिनी-आलोचक मीर सआदत अली रज़वी ने "तूतीनामा" के मूल स्रोत के संबंध में जो विचार प्रकट किए हैं वह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है । उनका कथन है -

"शुकसप्तति नामक एक ग्रंथ संस्कृत भाषा में, प्राचीन काल में लिखा गया था । जिसका अर्थ "तोते की कही हुई सत्तर कहानियाँ" हैं । मुसलमान जब भारत में बस गए तो यहाँ के साहित्य तथा अन्य शास्त्रों एवं कलाओं पर विद्यमान ग्रंथों को अपनी भाषा अर्थात् फ़ारसी में अनूदित करना आरंभ किया । संस्कृत तथा हिंदी की उन असंख्य पुस्तकों में से, जिनका अनुवाद फ़ारसी में हुआ, तूतीनामा भी एक है । इसका अनुवाद फ़ारसी में सर्वप्रथम मौलाना ज़ियाउद्दीन बख़्शी ने 730 हिजरी में किया । परंतु उन्होंने सत्तर में से केवल बावन कहानियों को चुना ।"[2]

----

1) डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 287

2) संपादक : मीर सआदत अली रज़वी, तूतीनामा, पृ॰ 30-31

संस्कृत शुकसप्तति का अनुवाद केवल बख़्शी ने ही किया, ऐसा भी नहीं है। देशी-विदेशी विभिन्न भाषाओं में संस्कृत की शुकसप्तति के अनुवाद किए गए।

संस्कृत से हिंदी में शुकसप्तति का अनुवाद भैरवी प्रसाद ने किया। गुजराती भाषा में इसका अनुवाद कनाला भट्ट ने किया। संस्कृत शुक सप्तति के मराठी अनुवादकर्ता का नाम अभी अज्ञात है।

मौलाना ज़ियाउद्दीन बख़्शी द्वारा फ़ारसी, गद्य में अनूदित अनुवाद से अन्य विभिन्न अनुवाद तथा कथासार प्रस्तुत किए गए। "तूतीनामा" के बख़्शी के आधार पर, किए गए अनुवादों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है -

तुर्की अनुवाद अब्दुल्लाह सादी ने किया। दक्खिनी में मुल्ला "ग़व्वासी" ने किया। अंग्रेज़ी में जेराल्स ने, सन् 1792 ई॰ में तथा जर्मनी में जार्ज रासेन ने सन् 1858 में किया। अबुल फ़ज़ल ने उक्त "तूतीनामा" की कथा का गद्यात्मक सार फ़ारसी प्रस्तुत किया। कथा का दूसरा गद्यात्मक सार सय्यद मुहम्मद क़ादरी ने लिखा।

सय्यद मुहम्मद क़ादरी द्वारा रचित "तूतीनामा" के गद्य-सार से पुन: दक्खिनी, अंग्रेज़ी, उर्दू तथा जर्मन भाषाओं में किए गए अनुवादों का भी उल्लेख मिलता है। सय्यद मुहम्मद क़ादरी के "तूतीनामा" गद्य-सार का दक्खिनी अनुवाद हुआ। किंतु दक्खिनी अनुवादक का नाम अज्ञात है। क़ादरी के कथा-सार को अंग्रेज़ी में प्रस्तुत करने का श्रेय ग्लाडविन को मिलता है, जिन्होंने सन् 1800 ई॰ में यह कार्य किया। उन्हीं के (क़ादरी) कथा-सार का उर्दू अनुवाद हैदरबख़्श हैदरी ने सन् 1216 हि॰ में किया। जर्मनी में इसका अनुवाद सन् 1822 ई॰ में प्रोफ़ेसर एकन द्वारा हुआ।

हैदरबख़्श हैदरी द्वारा प्रस्तुत किए गए सय्यद मुहम्मद क़ादरी द्वारा रचित "तूतीनामा" गद्यात्मक कथा-सार पर आधारित उर्दू-कथा-सार के पुनः अनुवाद हुए । यह अनुवाद, अंग्रेज़ी में जीस्माल द्वारा, हिंदी में, "शुकबहत्तरी" नाम से, अंबा प्रसाद राला द्वारा तथा बांगला में, "तोता इतिहास" नाम से चंदीचरण द्वारा किए गए ।

इस प्रकार संस्कृत शुक सप्तति के आधार पर "तूतीनामा" की नानी एक सुदीर्घ शृंखला ही बन गई । इसको यदि ""तूतीनामा" की साहित्य परंपरा" कहा जाए तो अनुचित न होगा । "तूतीनामा" साहित्य परंपरा में तेलुगु कवि कदरीपति का योगदान भी चिर-स्मरणीय रहेगा । कहा जाता है कि शुक सप्तति की कहानियां, "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" से उन्तीस वर्ष पूर्व तेलुगु कवि कदरीपति द्वारा तेलुगु में आ चुकी थीं । कदरीपति ने सत्तर में से केवल तीस कहानियों का चयन किया था । कुत्बशाहों के काल में गोलकुण्डा की जन भाषा तेलुगु थी । मुहम्मद कुली कुत्बशाह स्वयं तेलुगु में कविता करता था । यह पृथक बात है कि उसका तेलुगु काव्य अभी तक शोध कर्ताओं की बाट जोह रहा है । अतः निश्चित रूप से परवर्ती सुल्तानों, मुहम्मद कुत्बशाह तथा अब्दुल्लाह कुत्बशाह के युग में तेलुगु का रिवाज रहा होगा और एक राजनीतिज्ञ के नाते "ग़व्वासी" भी तेलुगु से अनभिज्ञ नहीं रहा होगा । कदरीपति की रचना "शुकसप्तति कथलु" अवश्य ही "ग़व्वासी" के लिए आदर्श बनी होगी । क्यों कि जैसा सौंदर्य वर्णन, भाव चित्रण तथा चरित्र चित्रण "ग़व्वासी" ने किया है, कहते हैं कि कदरीपति ने तेलुगु में किया था ।"[1]

---

1. डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 288
   डॉ॰ वेद प्रकार शास्त्री, दक्खिनी का गद्य साहित्य, पृ॰ 208

उर्दू साहित्य के विख्यात एवं वरिष्ठ आलोचक श्री गोपीचंद नारंग ने "तूतीनामा" के संबंध में विचार व्यक्त करते हुए लिखा है -

"इसकी रिवायत शुकसप्तति तक पहुँचती है, इसकी कथाएं कुलटा स्त्रियों से संबंधित हैं। भारत की विभिन्न भाषाओं - मराठी, गुजराती इत्यादि के अतिरिक्त तुर्की, अंग्रेज़ी, जर्मन, फ्रांसिसी, ग्रीक आदि में इसका अनुवाद हो चुका है।"[1]

यह तथ्य निर्विवाद है कि संस्कृत की शुकसप्तति की सत्तर कहानियों में से मौलाना ज़ियाउद्दीन बख़्शी ने बावन कहानियों को अपने फ़ारसी "तूतीनामा" में स्थान दिया, बख़्शी के "तूतीनामा" के आधार पर "ग़व्वासी" ने अपने दक्खिनी "तूतीनामा" में कुल पैंतालीस कहानियों को काव्यबद्ध किया है।

"ग़व्वासी" की मसनवी "तूतीनामा" की कहानियों की संख्या के संबंध में दक्खिनी के कुछ आलोचकों में विरोधाभास भी पाया जाता है। डॉ॰ वेदप्रकाश शास्त्री का कथन है -

"तूतीनामा में 43 कहानियां हैं। कुछ कहानियां विस्तार-पूर्वक कही गई हैं, कुछ में चरित्र-चित्रण का प्रयास हुआ है। कुछ में दैवी कारणों से मनुष्य की असहायावस्था का, कुछ में जादू-टोने का और कुछ में भविष्य कथन का प्रयास है। उपदेश का पुट प्रायः सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। कुछ कुलटा स्त्रियों से संबद्ध कहानियां भी "ग़व्वासी" ने कही हैं। परंतु उसका मन पतिव्रता स्त्रियों के वर्णन में विशेषतः रमा है।"[2]

- -

1) गोपीचंद नारंग, हिंदुस्तानी क़िस्सों से माख़ूज़ उर्दू मसनवियां, पृ॰ 82

2) डॉ॰ वेदप्रकाश शास्त्री, दक्खिनी का गद्य साहित्य॰ पृ॰ 210-11

उक्त आलोचक ने, उसी ग्रंथ में, "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" की कहानियों की वास्तविक संख्या भी दी है -

""ग़व्वासी" के "तूतीनामा" में 45 कहानियां हैं।"[1]

"ग़व्वासी" की "तूतीनामा" की कहानियों की संख्या के संबंध में, श्रीराम शर्माजी की पुस्तक में, कुछ ऐसा ही विरोधाभास प्राप्त होता है। अंतर केवल इतना ही है कि शुद्ध संख्या पूर्व पृष्ठों में दी गई है तथा अशुद्ध संख्या बाद के पृष्ठों में है -

"ग़व्वासी के काव्य "तूतीनामा" में 45 कहानियां है।"[2]

श्रीराम शर्मा जी ने अपनी इसी पुस्तक में एक अन्य स्थान पर "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" की कुल कहानियों की संख्या 43 बताई है -

""तूतीनामा" में कुल 43 कहानियां है। बहुत सी कहानियां उपदेशपरक हैं। कुछ कहानियां कुलटा स्त्रियों से संबंधित हैं।"[3]

डॉ॰ इक़बाल अहमद का कथन है - "मुल्ला ग़व्वासी ने अपने काव्य "तूतीनामा में कहानियों की गणना नहीं दी है। प्रत्युत रातों की गणना दी है।"[4]

सभी हिंदी-उर्दू आलोचक "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" की कहानियों की गणना कमोबेश पैंतालिस मानते हैं। आश्चर्य की बात

- -

1) डॉ॰ वेदप्रकाश शास्त्री, दक्खिनी का गद्य साहित्य, पृ॰ 208
2) डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 284
3) " , " , " 291
4) डॉ॰ इक़बाल अहमद, दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ॰ 137

यह है कि इक़बाल अहमद ने प्रस्तुत रातों की गणना भी अशुद्ध दी है । उनके अनुसार - "उन्नीसवीं रात को कहानी के पश्चात् व्यापारी युवक घर वापस आया ।"[1]

"ग़व्वासी" के "तूतीनामा" में कहानियों की संख्या पैतालीस है तथा प्रस्तुत रातों की संख्या उन्तीस है । इस संबंध में मीर सआदत अली रज़वी का कथन है - "ग़व्वासी" ने केवल पैतालीस कहानियों का चयन करके काव्य-विषय को भी तनिक प्रभावित किया है ।"[2]

प्रस्तुत रातों के संबंध में रज़वी साहब का मत भी द्रष्टव्य है - "पैतालीस कहानियां क्रमशः उन्तीस रातों में कहीं । यहां तक के व्यापारी यात्रा से लौट आया ।"[3]

डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय तथा अकबरूद्दीन सिद्दीकी ने "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" में प्रस्तुत रातों की संख्या §35§ पैतीस बताई है जो कि अशुद्ध है । वे लिखते है -

"इसके बाद उस तोते ने वह कहानी सुनाई और रात बीत गई । इस प्रकार तोता पैतीस §35§ दिनों तक कहानियां सुनाता रहा और सौदागरिनी को टालता रहा । इसके बाद सौदागर आ गया और उसे तोते से सारी बातें मालूम हो गईं ।"[4]

- -

1§ डॉ॰ इक़बाल अहमद, दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ॰ 137

2§ संपादक, मीर सआदत अली रज़वी, ग़व्वासी, "तूतीनामा, पृ॰32

3§ " , " , " , " , पृ॰ 37

4§ " , डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय, अकबरूद्दीन सिद्दीकी- ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, भूमिका- पृ॰ 7

ज़ियाउद्दीन बख़्शी के "तूतीनामा" का संस्कृत शुकसप्तति तथा "ग़व्वासी" के "तूतीनामा" से तुलनात्मक अध्ययन किए जाने पर बहुत से तथ्यों का उद्घाटन हो सकता था । परंतु खेद है कि बख़्शी का "तूतीनामा" उपलब्ध नहीं है । बख़्शी के "तूतीनामा" की अप्राप्ति को दक्खिनी के मर्मज्ञ शोधकर्ताओं ने अनुभव ही नहीं किया बल्कि खेद भी प्रकट किया है । इस संबंध में रज़्वी साहब की निम्न पंक्तियां उद्धृत की जाती हैं - "बख़्शी का अनुवाद दुर्लभ है । ग़व्वासी के "तूतीनामा" का मूल स्रोत जैसा कि उसने स्वयं एक शेर में प्रकट किया है -

हुए हज़रत बख़्शी मुज मदद
दिया मैं इसे तो रिवा[illegible] इस सनद ।

लेकिन "ग़व्वासी" ने केवल पैंतालीस कहानियों का चयन करके काव्य विषय में भी तनिक परिवर्तन किया है ।"[1]

बख़्शी के "तूतीनामा" की दुर्लभता डॉ॰ श्रीराम शर्मा जी को भी अखरी है - "बख़्शी की रचना तुलनात्मक अध्ययन के लिए उपलब्ध नहीं है, किंतु "ग़व्वासी" द्वारा वर्णित कहानियों और संस्कृत शुक सप्तति की कहानियों की तुलना से इस निर्णय पर पहुँचा जा सकता है कि संस्कृत शुकसप्तति में संकलित सभी कहानियां कवित्व से अछूती हैं, जबकि "ग़व्वासी" की सारी कहानियां कवि कल्पना से विभासित होती रही हैं । "ग़व्वासी" की कहानियों में वे सभी तत्व हैं जो किसी रचना को काव्य का रूप देते हैं ।"[2]

- -

1) संपादक : मीर सआदत अली रज़्वी, "ग़व्वासी", तूतीनामा, पृष्ठ 3।

2) डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृष्ठ 287

डॉ॰ राहुल सांकृत्यायन ने "ग़व्वासी" की रचना "तूतीनामा" का केवल नाम भर लिया है। इसके मूल स्रोत पर उनकी पुस्तक "दक्खिनी हिंदी काव्य धारा" में कुछ नहीं लिखा गया।

"ग़व्वासी" के "तूतीनाभा" तथा "तूतीनाभा की परंपरा" के परिप्रेक्ष्य में निष्कर्ष स्वरूप निम्न-तथ्य निरूपित होते हैं -

1) "तूतीनामा" की कहानियाँ संस्कृत शुकसप्तति से फ़ारसी में, सीधे, अनुदित हैं।

2) संस्कृत की शुक सप्तति से सीधे अनूदित न होकर, लोक-कथाओं के माध्यम से फ़ारसी में गईं।

3) "तूतीनामा" के फ़ारसी अनुवाद को दक्खिनी में प्रस्तुत करते समय, "ग़व्वासी" ने पूर्व तेलुगु कवि कदरीपति के काव्यात्मक दृश्य अंकन तथा भावपूर्ण चरित्र-चित्रण से, संभावित, लाभ उठाया है।

4) विभिन्न भाषा अनुवादों से लाभ उठाया है।

5) सबसे लाभ उठाकर निजी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है।

2·2 कथासार

प्राचीन काल में, भारत में एक संपन्न व्यापारी रहता था। बड़ी प्रतीक्षा के पश्चात् उसको एक सुंदर सा पुत्र उत्पन्न हुआ। जब वह पुत्र युवा अवस्था को प्राप्त हुआ तो पिता की भाँति व्यापार में जुट गया। वह युवक एक सफ़ल व्यापारी बनने के स्वप्न देखने लगा।

उसका विवाह एक अत्यंत ही सुंदर सुंदरी के साथ संपन्न हुआ। एक बार व्यापारी युवक बाज़ार में घूम रहा था कि अकस्मात् ही उसकी दृष्टि एक तोता बेचने वाले पर पड़ी, जो तोते के असामान्य

गुणों का बखान करता जा रहा था । तोता भी अपने मुँह मियाँ मिट्ठू वाली कहावत को साकार-साक्षात् सिद्ध कर रहा था । युवा व्यापारी को यह ज्ञात होने पर तोता क्रय करने की इच्छा हुई कि वह तोता मनुष्यों की भाँति बोलने की क्षमता रखता है । तोते में यह अद्भुत लक्षण देखकर व्यापारी ने उस तोते को, उसके मालिक से, एक हज़ार हुन देकर ख़रीद लिया ।

घर लाकर पंछी की बड़ी आवभगत की तोता भी प्रसन्न रहने लगा था ।

तोते ने, एक दिन, अपने स्वामि-व्यापारी को यह बताया कि कुछ दिनों में एक बड़ा कारवाँ उसके नगर से होकर जाएगा । कारवाँ वालों को अंबर की अधिक आवश्यकता पड़ेगी । क्यों न उसका स्वामि अधिक से अधिक अंबर मोल ले ताकि नव आगंतुकों को मुँह माँगे दामों बेचा जा सके ।

तोते की बात सुनकर युवा व्यापारी ने किसी प्रकार, यथा संभव अधिक, अंबर जमा कर लिया । तोते की भविष्य वाणी के अनुसार कुछ ही दिनों में, वास्तव में, एक बड़ा कारवाँ वहाँ आया । व्यापारी का अंबर चौगुने दामों - सोने के तोल बिका ।

मालिक तोते से और भी अधिक प्रसन्न रहने लगा । युवा-व्यापारी का पुनः एक बार बाज़ार जाना हुआ । अबकी बार, बाज़ार से वह एक गुणवती मैना खरीद लाया । मैना भी तोते की ही भाँति, मनुष्य की तरह बात करने का विशेष गुण रखती थी ।

एक बार अपने मालिक को प्रसन्न देखकर तोते ने उसके सम्मुख समुद्री व्यापार का प्रस्ताव रखा और बताया कि ऐसा व्यापार करने से उसको लाभ होने की संभावना है । तोते की बात पर विश्वास

करते हुए वह युवा व्यापारी समुद्री यात्रा के लिए चल पड़ा ।

पति के प्रस्थान पर अकेला घर मानो काट-खाने लगता है । व्यापारी की युवा-सुंदर पत्नी एकांत से ऊबकर स्वच्छंद दृश्य निहारने ऊपर खिड़की में आखड़ी हुई । अभी कुछ ही समय बीता था कि उसके दृष्टि एक आकर्षक व्यक्तित्व रखने वाले सुंदर नौजवान युवक पर पड़ी । दोनों की आँख लड़ गई । दोनों के मन में वासनाजन्य प्रेम अंकुरित हुआ । प्रेमी ने एक वृद्धा को सुंदरी के पास मिलन-संदेश सहित भेजा । वह भी उस सुंदर व्यक्ति से संभोग हेतु मिलने के लिए उत्सुक हो रही थी । संध्या के समय पूर्व-निश्चित स्थान को जाने के पूर्व सुंदरी मैना से परामर्श करने लगी कि क्या उसका पर पुरुष के साथ मिलाप ठीक रहेगा ? मैना ने उसे सचेत किया और बताया कि सत्यव्रती स्त्री पतिव्रता होती है । पति के विदेश यात्रा पर होने के कारण, स्थिति से लाभ उठाकर, पर-पुरुष से संबंध स्थापित करना उसे शोभा नहीं देता । यह तो पाप है ।

मैना की उपदेशपरक बातें सुनकर काम वासना-उन्मुख स्त्री असभ्य हो गई । उसने क्रोधावेश में आकर मैना के पंख नोच डाले तथा उसकी गर्दन मरोड़ कर हत्या ही कर दी । तत्पश्चात् सुंदरी, तोते से संबोधित हुई ।

सुंदरी ने तोते से वैसे ही प्रश्न पूछे जैसे कि कुछ समय पूर्व मैना से पूछ रही थी । तोता बड़ा विवेकशील था । नैतिक उपदेश देने पर मैना का क्या परिणाम हुआ, देख चुका था । मैना उसके सामने ही तड़प-तड़प कर फड़ा-फड़ा कर ठंडी हुई थी ।

तोता कहने लगा कि तुम्हारी इच्छा है तो मिलने में कोई आपत्ति नहीं, परंतु याद रखना कि कहीं तुम्हारा परिणाम भी

वही न हो जाए जो एक रानी का पर-पुरुष-संभोग के फलस्वरूप हुआ था । इस पर सुंदरी यह जानना चाहती है कि आखिर उस रानी का क्या अंजाम हुआ था ?

तब तोता कहानी सुनाने लगता है । इसी प्रकार प्रति रात्रि जबकि सुंदरी उस पर-पुरुष से मिलने की इच्छा करती है, तोता कोई न कोई कहानी सुनाकर उसे कहानी सुनने में व्यस्त कर देता है । यहाँ तक कि उन्तीसवीं रात के समाप्त होने पर जब तोता पैंतालीसवीं कहानी पूरी करता है तो तीसवें सवेरे उस सुंदर नारी का पति परदेस से घर लौट आता है ।

मालिक द्वारा कुशलता पूछे जाने पर तोता कहता है कि यदि उसको मुक्त करने का वचन दिया जाए तो वह उसे सत्यतापूर्ण यथार्थ स्थिति से अवगत कराएगा । युवा व्यापारी तोते की शर्त मान लेता है । तब तोता सुंदरी के चरित्र तथा अपनी विवेकशीलता के संबंध में सभी बातें सत्य-सत्य बता देता है ।

युवा व्यापारी को अपनी पत्नी पर अत्यंत क्रोध आता है । परिणामस्वरूप वह अपनी पत्नी का परित्याग कर देता है । पत्नी का परित्याग करने के पश्चात् वह धन-संपत्ति दीन-दुःखियों में बाँट देता है और स्वयं ख़िर्क़ा लेकर सांसारिक सामाजिकता से विरक्त हो, अज्ञात स्थान को चला जाता है ।

दक्खिनी पर अब तक लिखे गए समस्त हिंदी-उर्दू शोध ग्रंथों में निर्विवाद रूप से आया है कि "तूतीनामा" में युवा-व्यापारी द्वारा उसकी सुंदर पत्नी की हत्या हुई । क्यों कि युवा-व्यापारी ने पत्नी के कुलक्षण होने के कारण शोकग्रस्त होकर उसे मार डाला ।

स्त्री पाप की ओर प्रवृत्त हुई थी, यह बात नायक को अच्छी नहीं लगी। अतः फिर यह कैसे हो सकता है कि उसने स्वयं पत्नी की हत्या का पाप किया। प्रस्तुत शोध में पहली बार यह निष्कर्ष निकाला जा रहा है कि युवा-व्यापारी ने "तूतीनामा" में पत्नी का परित्याग किया हत्या नहीं की। तर्क की पुष्टि स्वरूप "ग़व्वासी" की निम्न पंक्तियां उद्धृत की जाती हैं -

"सुन ए क़िस्सा ओ ख़्वाजा दिल सबसे ते तोड़
दिया उस क़फ़स में ते शरावीं कूं छोड़
जो ग़ैरत की आग उसके सीने लगी।
सटिया तोड़ औरत कूं यकबारगी।
लुटा घर फ़क़ीरां कूं सब एक बार
गले डाल ले ख़िर्क़ा सूफ़ी के सार।"[1]

3. मैना सतवंती - स्रोत एवं कथासार

3.1 मैना सतवंती का स्रोत

प्राचीन प्रेमाख्यानों अथवा मसनवियों का हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। इन मसनवियों ने जहां एक ओर सामाजिक समन्वय रूपायित करने में राष्ट्रीय भूमिका का निर्वाह किया वहीं दूसरी ओर हिंदी भाषा तथा हिंदी काव्य-शैली को अभूतपूर्व साहित्यिक संपदा भी अर्जित की। प्रत्येक निर्माण के परिपार्श्व में विरह जन्य प्रेम निहित होता है। इस विरह जन्य प्रेम की प्रतिक्रिया अनुरागमय संयोग का संकेत मात्र है। संयोग की स्थिति

---

1. संपादक : मीर सआदत अली रज़्वी-ग़व्वासी-"तूतीनामा", पृ. 82

आंशिक होती है जबकि विरह जीवन को परिपूर्ण अवस्था से अच्छादित कर देता है । अतः संयोग और वियोग के मध्य जो अत्यंत ही दुर्गम पथ है वह मनुष्य की नैतिकता का पथ है । नैतिकता उस समय तक निरर्थक होती है जब तक कि उसमें सहनशीलता, संयम, उच्च आचरण तथा आदर्श-शील के तत्व सम्मिलित नहीं हो जाते । यही कारण है कि भारतीय साहित्य में, प्राचीन काल से ही प्रेम कथाओं का आधार नैतिक रहा है । सूफी, साधक, संत तथा महात्माओं ने कमोबेश प्रेम का ही पाठ पढ़ाया तथा सत्य प्रेम की ही शिक्षा दी है । डॉ॰ सरला शुक्ल के अनुसार - "भारतीय प्रेमाख्यानों की परंपरा नवीन नहीं है । ऋग्वेद में यम-यमी के संवाद में भी प्रेम-कथा के बीज निहित है । पौराणिक युग में प्रेमाख्यानों के द्वारा नीति और धर्म का प्रचार किया जाता था । संस्कृत साहित्य में प्रेमाख्यानों की परंपरा अविरल रही । अपभ्रंश साहित्य में जैन मुनियों के चरित काव्य प्रेमाख्यान काव्यों के ही रूप हैं । जहाँ भारतीय प्रेमाख्यान पद्धति परंपरा के रूप में उपलब्ध हुई वहीं दूसरी ओर ईरान के सूफी कवियों की मसनवी रचनाओं ने भी प्रेरणा दी ।"[1]

भारतीय में विद्यमान नारी सतीत्व एवं एकनिष्ठा की भावना, विवाह के अटूट बंधन के प्रति अनुराग गृहस्थ जीवन के प्रति उत्तरदायित्व की दृढ़ आस्था एवं सामाजिक मर्यादा का पालन आदि ने मानो मसनवियों में "सत काव्य" की एक परंपरा ही खड़ी कर दी । सत काव्य की यह परंपरा भारतीय लोक चेतना के आधार पर लोक गीतों में भी मुखरित हुई । केवल स्तरीय भाषाओं में ही नहीं बोलियों में भी तथा नगरों में ही नहीं जन-पदों तथा ग्रामों में भी नारी सत को लेकर गीत गाये जाने लगे ।

- -

1§ डॉ॰ सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती सूफी कवि और उनका व्याख्य प्राक्कथन, पृष्ठ-क

क्रमशः दसवीं शताब्दी के पश्चात् अपने परिष्कृत रूप में, नारी सत को लेकर जो कथाएं लिखी गईं उनका विधिवत् विस्तृत विवरण एक दुष्कर कार्य है । प्रस्तुत शोध ग्रंथ में शोध-विषय को ध्यान में रखते हुए नारी सत परंपरा के अंतर्गत "मैना, लोरक तथा चंदा" पर आधारित "सत-काव्य" का अध्ययन ही हमें अभीष्ट है । "मैना सत काव्य" की यह विवृत्ति "गुव्वासी" के काव्य - "मैना सतवंती" के परिप्रेक्ष को दृष्टि में रखकर की गई है । अतः मैना सत से संबंधित मुख्य रचनाओं का अध्ययन प्रस्तुत उप शीर्षकों के अंतर्गत किया जाता है -

मुल्ला दाऊद कृत "चंदायन", कवि साधन कृत मैनासत, हमीदी कृत इसातनामा, दौलत काजी की "सती मैना व लोर चंद्रानी" तथा लोक आधारित रचनाएं ।

3.1.1 मैना सतवंती एवं मुल्ला दाऊद कृत चंदायन

हिंदी के प्रेमाख्यानक काव्यों में दाऊद दलमऊ की मसनवी चंदायन प्राथमिकता रखती है । चंदायन को सन् 1380 ई. की रचना माना जाता है । हिंदी के विख्यात आलोचकों श्री श्याम मनोहर पाण्डेय तथा परशुराम चतुर्वेदी आदि ने भी चंदायन को हिंदी का प्रथम प्रेमाख्यान स्वीकार किया है । चंदायन उस समय की रचना है जब दक्षिण भारत में ख़्वाजा बंदेनवाज़ सूफ़ीमत के सिद्धांतों पर विचार व्यक्त कर रहे थे ।

"जिस समय दक्खिन में ख़ाजा बंदेनवाज़ और उनके शिष्य सूफ़ी विचारों को सिद्धांत रूप में प्रचारित कर रहे थे, उस समय मुल्ला दाऊद ने अवध में हिन्दी सिद्धांतों को आख्यानक काव्य के रूप

ने डाला ।"[1]

सहदेव राय महर गोवर नगर का राजा था । उसकी 84 रानियाँ थीं । इनमें फूल रानी राजा की चहीती थी । रानी की कोख से राजकुमारी चांद ने जन्म लिया । बचपन सुख से बीत रहा था कि जीवन के चौथे वर्ष ही राजा जीत ने अपने पुत्र बावन से विवाह का प्रस्ताव रखा । चांद का विवाह बावन से हो गया । बारह वर्ष बीत गए चांद व्यस्क हो गई किंतु उसका पति उसकी ओर आकर्षित नहीं हुआ । विवश हो माता-पिता ने चांद को अपने यहाँ बुला लिया । मायके आने के पश्चात् चांद सखियों के साथ दिन बिताने लगी । एक दिन चांद के प्रसाद के निकट से एक साधु जा रहा था जब उसकी दृष्टि चांद पर पड़ी तो वह चांद के सौंदर्य को देखता का देखता रह गया । लोग एक-त्रित हो गए और साधु का इस प्रकार बेसुध खड़ा रहने का कारण पूछने लगे । तब उसने बताया कि वह चांद के सौंदर्य का देखना हो गया है । इसके बाद वह बजट साधु अपनी धुन में मस्त हो चांद की सौंदर्य प्रशंसा में गीत गाता घूमने लगा ।

किसी अन्य राज्य के राजा रूपचंद ने साधु की बेसुधी का समाचार सुना और उसको बुलाकर विवरण पूछा । साधु ने चांद की सुंदरता का ऐसा काव्यमय चित्र खींचा कि रूपचंद के मन में भी संभवतः चांद से प्रेम का बीज अंकुरित हो गया । रूपचंद अपनी सेना लेकर गोवर नगर पहुंचा और नगर को घेर लिया । उसने राजा सहदेव को संदेशात्मक न्योता भेजा कि राजा सहदेव अपनी कुमारी चंदा का उसके साथ ब्याह कर दे । राजा ने उत्तर स्वरूप कहला भेजा कि चांद विवाहिता है और अब उसके विवाह का प्रश्न ही नहीं उठता ।

1\) डा॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 298

रूपचंद उठ पर था । लड़ाई आरंभ हो गई । राजा सहदेव की सेना के पराक्रमी योद्धा मारे गए । सहदेव की पराजय निश्चित थी कि ऐसे में किसी ने राज्य को परामर्श दिया कि वीर लोरक को, जो इसी नगर का वासी है एवं ग्वालों का सरदार भी है दुश्मन का सामना करने के लिए बुलाया जाना चाहिए । एक भाट की सहायता से लोरक को आमंत्रित किया गया । लोरक युद्ध के लिए अपनी मां "खोलन" से आशीर्वाद लेने के लिए गया तो मां और उसकी पत्नी "मैना" ने उसे युद्ध से मना किया । परंतु लोरक न माना । वह अपने साथियों सहित रण भूमि में पहुंचा । रण भूमि में लोरक ने ऐसी वीरता का प्रदर्शन किया कि रूपचंद की सेना के दांत खट्टे हो गए । युद्ध में रूपचंद की पराजय हो गई । वीर लोरक जब विजयी होकर लौटा तो गोवर नगर में उसका सश्रद्धा भव्यस्वागत हुआ । हाथी पर लोरक का जुलूस निकाला गया । जुलूस जब राजमहल से गुज़र रहा था तो रानियां और लोरक की एक झलक देखने बाहर निकल आईं । इसी अवसर पर चांद ने उसे देखा और अपना मन हार गई । लोरक के प्रेम के कारण वह विरहाग्नि में जलने लगी । चांद उदास, खोई-खोई सी रहने लगी तो सखियों ने उसके मन का हाल पूछा । सखियों ने चांद से कहा कि चांद अपने पिता राजा सहदेव से कहकर स्वागतार्थ लोरक को राजमहल में बुलाए लोरक के स्वागत का प्रबंध किया गया । चांद भी सज-धज कर वहां पहुंची । लोरक ने जब चांद को देखा तो खाना-पीना सबकुछ भूल गया । घर लौटा तो उसका मन भी चांद के प्रेम के कारण विरहाग्नि में जल रहा था । लोरक की मां तथा उसकी पत्नी ने जब लोरक की ऐसी स्थिति देखी तो चिंतित हो उठीं । चांद की एक सखी किसी बहाने लोरक की मां से मिलने आई । लोरक ने जब उसके मुख से चांद का नाम सुना तो चांद की

सखी के चरणों पर सविनय गिर पड़ा कि वह उसे चांद से मिलवा दे । चांद की सखी ने लोरक को परामर्श दिया कि वह योगी के वेश में मंदिर में जा बैठे । चांद सखियों सहित दर्शनार्थ मंदिर को आया करेगी । इस प्रकार भेंट के अवसर निकल आया करेंगे । इस प्रकार कुछ दिन चांद और लोरक को मंदिर में मिलने का अवसर मिला । तत्पश्चात् सखी ने रात के समय राजमहल में आने का रास्ता लोरक को बताया । लोरक एक रस्सी के सहारे, ऊपर, चांद के शयन-कक्ष में पहुंचा । रात वहीं बिताई । सवेरे जब राजा सहदेव चांद के कमरे में किसी कारण आया तो चांद ने लोरक को पलंग के नीचे छुपा दिया । इसका प्रकार चांद और लोरक गुप्त रूप से मिलने लगे । प्रेम छुपता नहीं है । दोनों के प्रेम के चर्चे धीरे-धीरे नगर में होने लगे । लोग कानाफूसी करने लगे । लोरक की मां और उसकी पत्नी मैना को भी यह बात मालूम हो गई । लोरक को जब पता चला कि चांद के साथ उसके प्रेम के संबंध में मैना को पता चल गया तो उसने मैना को लुभाने की चेष्टा की । मैना और क्रोध में आ गई । मैना ने एक माली की सहायता से चांद की मां तक सत्य बात पहुंचा दी । इधर मैना इस संकट में पड़ गई थी कि उसका पति पर स्त्री के चक्कर में फंस गया है और उधर चांद को यह परेशानी थी कि उसके प्रेम पर संकट के बादल घिर आये थे । भाग्य की बात है कि दोनों एक ही समय भगवान को अपनी विपदा सुनाने मंदिर पहुंचीं । मंदिर में मैना तथा चांद ने एक दूसरे को देखा, पहचाना, आक्रोश प्रकट किया । स्थिति हाथापाई तक पहुंची । पता चलने पर लोरक वहां बीच बचाव करने पहुंच गया ।

लोरक तथा चांद ने आपसी परामर्श के पश्चात् निश्चय किया कि अब इस नगरी में जीवन-यापन संभव नहीं कहीं और चले जाएंगे ।

पूर्वयोजनानुसार एक रात लोरक चंदा के महल को पहुंचा । दोनों पर्याप्त मात्रा धन लेकर भाग निकले । मार्ग में लोरक का भाई कंवरू मिला । उसने लोरक को मना किया । परंतु लोरक यह कह कर चल पड़ा कि वह दो-एक महीना बाद वापस लौटेंगे ।

राजा के सिपाही लोरक और चांद का पीछा कर रहे थे । मार्ग में दोनों ने एक नाविक को धोखा देकर गंगा को पार किया । चांद का पति बावन भी पीछा कर रहा था । गंगा पार वह दोनों से भिड़ गया । लोरक तथा बावन के मध्य युद्ध हुआ । बावन की पराजय हुई । बावन ने कहा कि अब चांद से उसका संबंध टूट चुका । मार्ग में एक स्थान पर चांद को सांप ने डस लिया । एक योगी के मंत्र पढ़ने पर चांद को जीवन मिला । फिर एक अवसर पर जब वे दोनों पेड़ के नीचे सो रहे थे तो दूसरी बार सांप ने चांद को डस लिया । लोरक ने चांद के प्राण बचाने का बहुत प्रयत्न किया । दूसरे दिन जब वह चांद के शव की चिता जलाने और स्वयं भी साथ भस्म हो जाने की चिंता में था तब अचानक एक मदारी उधर आ निकला और उसने सांप का विष उतार कर चांद को जीवित किया । लोरक ने अपने समस्त आभूषण मदारी को श्रद्धा स्वरूप भेंट में दे दिए । उत्तर में मदारी ने भी लोरक को एक मंत्र सिखाया ।

लोरक तथा चांद एक अन्य नगर सारंगपुर पहुंचे । लोरक ने वहां के राजा के साथ जुआ खेला और जुए में सबकुछ यहां तक कि चांद को भी हार गया । परंतु मदारी द्वारा सिखाए मंत्र के कारण लोरक की इच्छानुसार एक राक्षस प्रकट हुआ और उसने लोरक के शत्रुओं का अंत कर दिया ।

लोरक और चांद चल पड़े । मार्ग में तीसरी बार एक सांप ने चांद को डस लिया । फिर एक साधु की सहायता से चांद ने

जीवन पाया । साधु ने लोरक को सावधान किया कि एक योगी चांद को अपने प्रेम के आलिंगन पाश में बांधने की चेष्टा करेगा । परिणामस्वरूप मार्ग में एक योगी की उनसे मुठभेड़ हुई । योगी ने अपने मंत्र से चांद की स्मृति छीन ली । परंतु लोरक ने योगी पर अपना प्रभुत्व सिद्ध किया । तत्पश्चात् उन में एक राजा से उनकी भेंट हुई जो कि आखेट के लिए उधर आ निकला था । जब लोरक ने राजा को अपनी विपदा सुनाई तो राजा ने उन्हें सांत्वना दी और उन्हें अपने नगर परिपाटन ले गया जहां लोरक और चांद दोनों शांतिपूर्वक वैभवपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे ।

इधर लोरक के चांद के साथ भाग जाने के पश्चात् लोरक की पत्नी मैना पर संकटों के पर्वत टूट पड़े ।

एक दिन मैना और लोरक की मां "खोलन" को मालूम हुआ के गोवर नगर में व्यापारियों का एक दल आया हुआ है । "खोलन" ने पता लगाया कि यह दल हरिपाटन जाने वाला है । "खोलन" ने व्यापारियों के नायक, ब्राह्मण को, अपने घर बुलाया । मैना उसके चरणों पर गिर पड़ी और याचना करने लगी कि व्यापारी "हरिपाटन" नगर में उसके पति लोरक का पता चलाये । साथ ही मैना की दु:ख भरी कहानी लोरक को सुनाकर उसे घर लौट आने पर बाध्य करे । ब्राह्मण "मैना" की शोचनीय दशा देखकर प्रभावित हुआ । "मैना" का यह विरह वर्णन जो कि सात-आठ माह पर आधारित है बारह मासा परंपरा के अंतर्गत आता है ।

व्यापारी क्रमश: चार महीने पश्चात् हरिपाटन पहुंचता है । लोरक का पता मिल जाने पर वह उसके घर जाता है तथा पोथी देखकर उसे बताता है कि वह गोवर नगर का वासी है, उसकी पत्नी का नाम मैना है जिसकी कि उसने उपेक्षा की है तथा चांद को आकाश

पर चढ़ा दिया है । "मैना" का नाम सुनकर लोरक का मन भर आता है । लोरक ने मैना को विस्मृत नहीं किया था । "मैना" का हाल जानने के लिए वह उत्सुक था । यदि ब्राह्मण उसे मैना का हाल बताएगा तो वह उसके चरणों की धूल अपने माथे पर लगा लेगा । जब ब्राह्मण ने "मैना" की विरह गाथा सुनाई तो उससे प्रभावित होकर लोरक रोने लगा । लोरक ने बहुत सा स्वर्ण तथा कुछ बैल ब्राह्मण को अर्पित किए और वचन दिया कि वह दूसरे ही दिन अपने नगर गोवर को लौट जाएगा ।

चांद को लोरक के प्रस्थान की पूर्व सूचना मिली तो वह विह्वल हो उठी । रात में बिना कुछ खाए सो गई । दूसरे दिन लोरक ने राजा से भेंट करके अपने संबंध में समस्त विवरण कह सुनाया तथा गोवर लौट जाने की अनुमति मांगी । राजा ने लोरक को जाने की अनुमति देदी तथा बहुत से सेवक उपहार तथा धन देकर सम्मान पूर्वक विदा किया ।

लोरक चांद सहित गोवर नगर की ओर चल पड़ा । नगर से तीन कोस दूर लोरक ने पड़ाव डाला । इधर नगर के आसपास के वासियों में यह समाचार फैला कि कोई राजा सेना लेकर आया है । नगर में खलबली मच गई । परंतु "मैना" के मन को आभास हुआ कि अवश्य ही लोरक आया होगा । अत: उसने लोरक की मां से कहा कि शायद लोरक आया है । मैना ने रात में सपना देखा कि लोरक ने स्वयं को प्रकट किये बिना एक मावी के माध्यम से यह ज्ञात करने की चेष्टा की कि मैना किस स्थिति में है तथा क्या वह वास्तव में अब भी उससे विश्वसनीय प्रेम करती है । सपने में मैना एक ग्वालन के रूप में अपनी सखियों के साथ इस उद्यान में गई जहां लोरक अपने साथियों के साथ ठहरा हुआ था । बातों ही बातों में जब चांद ने

मैना से उसका हाल पूछा तो मैना ने बताया कि बारह महीने पहले उसका पति लोरक चांद के साथ चला गया था और यदि चांद उसके हाथ लगे तो वह उसका मुंह काला करके गधे पर बिठा कर उसे नगर में घुमाएगी । चांद यह सुनकर उससे लड़ पड़ी । इस अवसर पर लोरक ने स्वयं को प्रकट किया । मैना को देखकर वह चांद को भूल गया । फिर उसने मैना और चांद दोनों को समझा-मनाकर इस बात पर बाध्य किया कि वे दोनों एक साथ मिल-जुलकर रहने का प्रयत्न करें ।

"खोलन" ने लोरक और चांद को अपने घर बुलाया और सब एक साथ मिलकर सुखपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे । खोलन ने लोरक को बताया कि उसके जाने के पश्चात् घर वालों को कैसी कठिनाईयों का सामना करना पड़ा । "मां" ने कहा कि उसके दिन रोने में तथा रातें जागते हुए बीतीं ।

3·1·2 <u>मैना सतवंती एवं साधन कृत मैनासत</u>

कवि साधन कृत "मैनासत" में चंदा का केवल नाम मिलता है । कहानी में कवि की दृष्टि मूलरूप से मैना पर ही केंद्रित रही है । कवि साधन द्वारा लिखित "मैनासत" की हस्तलिपि मनेरशरीफ की एक दरगाह में प्राप्त हुई थी । इसका रचनाकाल सन् 1506 ई॰ (911 हिजरी) बताया गया है । अनुमान किया जाता है कि साधन का जन्म क्रमशः 1450 ई॰ के आसपास हुआ होगा ।

लोरक मैना को छोड़, चला गया । मैना के सौंदर्य पर मुग्ध हो सातन कुंवर विरहणी मैना को सत के पथ से पथभ्रष्ट

करने की इच्छा से रतना नामक दूती को मैना के यहाँ भेजता है । रतना मालन मैना को सत से डिगाने कुटनी की भूमिका निभाती है । मैना को अपने विश्वास में लेने के लिए कहती है कि वह बचपन में उसकी धाय रह चुकी है, मैना ने उसका दूध पिया है । मैना चरित्रवान नारी होने के नाते दूती से शालीनता-पूर्वक व्यवहार करती है । कुटनी रतना मैना से पूछती है कि मैना ने योगिनों जैसी वेशभूषा क्यों धारण की है ? दु:ख में यदि कोई सहानुभूति प्रकट करे तो मन भर आता है । मैना का मन भी भर आता है । मैना रतना को अपनी विपदा सुनाती है तथा वह बताती है किस प्रकार उसका पति लोरक उसे छोड़ गया है ।

अवसर पाकर कुटनी रतना मैना के मन में सातन कुंवर के लिए वासनाजन्य प्रेम उत्पन्न करने का भरसक प्रयत्न करती है । वह हर महीने ऋतु परिवर्तन के झुकाव के आधार उत्तेजनापूर्ण गीत सुनाती है ताकि भावावेश में आकर मैना सत के मार्ग से डिग जाए । मैना को रतना का यह व्यवहार अनुचित लगता है । वह रतना को सतीत्व की महानता का उपदेश भी दे डालती है । कुटनी रतना चुप नहीं रहती वह हर महीना काम तृप्ति के लिए मैना को पुन: उत्तेजित करती है । शनै: शनै: मैना पर यह सत्य प्रकट होने लगता है कि रतना मालन एक नीच चरित्रहीन युवती है और उसका उद्देश्य मैना के सत को भंग करना है । कुटनी बारह महीने तक अपने प्रयत्न पर अडिग रहती है । यहाँ तक कि मैना मालन की वास्तविकता जान लेती है । परिणामस्वरूप मैना कुटनी-मालन-रत्ना का सिर मूंड कर तथा मुंह काला करके गधे पर बिठाकर नगर के रास्तों पर उसे घुमाती है । इस प्रकार दूती रूपी कुटनी रत्ना के चरित्र का भण्डा फूट जाता है । लोग कहने लगते है कि "जैसी करनी वैसी भरनी ।"

3·1·3 मैना सतवंती एवं हमीदी कृत इस्मत नामा

गव्वासी की मैना सतवंती के नाम के साथ ही हमीदी कृत इस्मत नामा का उल्लेख किया जाता है ।

हमीदी मुगल सम्राट जहाँगीर के युग का कवि है । उसने सन् 1016 हिजरी अर्थात् सन् 1607-8 ईस्वी में भारतीय प्रेमकथा पर आधारित फ़ारसी मसनवी इस्मतनामा की रचना की । यह समय दक्खिन में मु॰कुली कुत्बशाह के शासन का §1580-1612 ई§ अंतिम चरण कहा जा सकता है । मुहम्मद कुली कुत्बशाह ने गोलकुण्डा पर सन् 1580 से 1612 ईस्वी तक शासन किया । दूसरे शब्दों में अभी वजही की कुत्बमुश्तरी को पूरा हुए §1600 ई§ क्रमशः सात-आठ वर्ष ही बीते थे कि उत्तर भारत में हमीदी ने "इस्मत नामा" पूरा किया ।

कहा जाता है कि कुछ लोग बैठे अरब तथा ईरान के साहित्य की प्रशंसा के पुल बांध रहे थे । वे कहते जाते थे कि लैला, अज़्रा तथा शीरी के सौंदर्य एवं प्रेम भावना की समानता कोई नहीं कर सकता । हमीदी से न रहा गया उसने भारतीय प्रेम पद्धति पर आधारित एक भावात्मक कथा उन लोगों को सुनाई । उसने कहा कि लैला, अज़्रा क्या चीज़ है मैना के सत की दास्ताँ सुनो -

मन नेज़ दर सुख़न कशादम
शरहे ज़-उरूस हिंद दादम
यफूतम के च लैला व च अज़्रा
अज़् मन श्नोयह वस्फ़ मैना

उसने मैना सत की कथा सुनाई ।

वे लोग मैना सत की कहानी सुनकर अत्यंत ही प्रभावित हुए तथा हमीदी से अनुरोध किया कि वह इस कहानी को फ़ारसी भाषा में काव्यबद्ध करने की कृपा करे । हमीदी के फारसी इस्मत नामा की कहानी इस प्रकार है -

हिंदुस्तान के किसी राजा की एक लड़की थी । राजा ने लोरक नामक आकर्षक नवयुवक से उसका ब्याह कर दिया । मैना देखने में जितनी सुंदर थी उतनी ही शीलवती तथा गुणवती थी । भारतीय नारी पतिव्रता होती है । मैना भी पतिव्रता थी । परंतु लोरक को चांद नामक सुंदरी से प्रेम हो गया । लोरक मैना को छोड़ कर चांद के साथ किसी अन्य नगर को चला गया । विरहिणी मैना शोकातुर हो रोने लगी । मैना के अत्यंत रूपवान होने की बात सुनकर सातन नाम युवक मैना पर आसक्त हो गया । वह रात-दिन मैना के महल की परिक्रमा करने लगा । सातन ने एक चाल चलते हुए किसी बूढ़ी कुटनी को मैना के पास भेजा । बुढिया स्वयं को मैना के शैशवकाल की धाय बताती थी । दु:ख में लोग सुध-बुध खो बैठते हैं । मैना ने बुढ़िया की बात पर विश्वास कर लिया । बुढ़िया ने भी मैना को सान्त्वना दी । पति के विश्वासघाती होने के बदले, मैना से कहा, वह भी पति से विश्वासघात करे तथा जीवन के ऐश्वर्य को भोगे । बुढिया ने मैना को बताया कि सातन नामक युवक उस पर आसक्त हो गया है अत: वह भी सातन के साथ भोग-विलास का जीवन बिता सकती है । मैना को कुटनी की बातों

- -

1§ संपादक : गुलाम उमर खाँ, गुव्वाली-मैनासतवंती, भूमिका, पृ॰ 80

से आघात पहुँचा । उसे बुढ़िया पर क्रोध भी आया । परंतु कुटनी बराबर प्रयत्न में लगी रही कि किसी प्रकार मैना को सत के पथ से पथभ्रष्ट करे । अत: बुढ़िया ऋतु अनुसार महीनों के आधार पर मैना को उत्तेजनात्मक गीत सुनाने लगी । उन उत्तेजनात्मक गीतों का मैना के मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । बारह माह कुटनी ऐसे गीत गाती रही । मैना भारतीय नारी का साकार रूप थी । चाहे पति कैसा भी क्यों न हो वह उसका पति है । इसी भावना ने मैना को सत की रक्षा की शक्ति प्रदान की । बारह महीने बाद जब चाँद का देहांत हो गया तो लोरक स्वयं ही अपनी पत्नी मैना के पास लौट आया । मैना ने लोरक का स्वागत किया । मसनवी के अंत में हमीदी ने "इस्मत नामा" को रूपक का रूप देने का प्रयास किया है । उसने लोरक को ईश्वर, मैना को आत्मा, सातन को शैतान तथा बूढ़ी कुटनी को मानवी इच्छा बताया है ।

3·1·4 मैना सतवंती एवं दौलतकाजी कृत सती मैना व लोर चंद्रानी

सत्तरहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बंगला कवि दौलत काज़ी ने मैनासत पर आधारित मैनासतवंती की कथा को "सती मयना व लोर चंद्रानी" शीर्षक से प्रस्तुत किया । दौलत क़ाज़ी अराकान के राजा चंद्र सिद्धर्म (शासन काल : 1622-1638 ई·) के युग का कवि था । प्रारंभ में यह पुस्तक हमीदी प्रेस कलकत्ता से "सती मैना" के नाम से प्रकाशित हुई थी । कालांतर में विश्व भारती शांतिनिकेतन के श्री सत्येंद्र भूषण ने इसे संशोधित करके "सती मयना व लोर चंदानी" नाम से साहित्य प्रकाश के प्रथम खण्ड में प्रकाशित किया ।

दौलात क़ाजी की "सती मयना व लोर चंद्रानी" वास्तव में तीन भागों में विभक्त है । प्रथम भाग के अंतर्गत मैना और गैहार नरेश लोरक का ब्याह दर्शाया गया है । लोरक को मोहरा देश की राजकुमारी चंद्रानी से उस समय प्रेम हो जाता है जबकि एक साधु लोरक को चंद्रानी का चित्र दिखाता है । वह चंद्रानी को किसी कीमत पर प्राप्त करना चाहता है । परिणाम स्वरूप लोरक चंद्रानी के बौने पति को, जो कि नपुंसक बताया गया है, मार देता है । चंद्रानी उसे प्राप्त हो जाती है । मोहरा देश का राजा लोरक को जामाता के रूप में स्वीकार कर लेता है ।

द्वितीय भाग में गौहार देश का राजा लोरक चंद्रानी से ब्याह कर घर नहीं लौटता उसकी रानी मयना पति के विरह में खो जाती है । मयना के रूप-गुण पर आसक्त होकर पड़ोसी देश का राजकुमार सातन मालनकुटनी को दूती के रूप में मयना के पास भेजता है । दूती ग्यारह मास तक ऋतु परिवर्तन के अनुसार मैना को सत से डिगा कर सातन से संबंध स्थापित करने के लिए उत्तेजित करती है । मैना षड्यंत्र की तह तक पहुँच जाती है तथा दूती को निकाल दूर करती है ।

तृतीय भाग में मैना को उसकी एक सखी सलाह देती है कि क्यों न वह, संदेशवाहक के साथ, एक तोता अपने पति लोरक के पास भेजे । तोता लोरक को मैयना की स्थिति को बाबत बताएगा । तोता लोरक को मैयना की विपदा सुनाता है । तोते के मुख से मैना का नाम सुनकर तथा स्थिति जानकर लोरक चंद्रानी सहित घर लौट आता है । मैना अपने पति की इच्छा का आदर करती हुई चंद्रानी के सहचर्य को सहन करने तय्यार हो जाती है ।

3·1·5 मैना सतवंती एवं खेमदास कृत मैना का सतु

खेमदास की कृति मैना का सतु "ग़व्वासी" कृत मैना सतवंती के बाद की रचना मानी जाती है। अतः "ग़व्वासी" द्वारा "मैना का सतु" से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप लाभ उठाये जाने का प्रश्न नहीं उठता -

"खेमदास की मैना का सतु "ग़व्वासी" की "मैना सतवंती" के पश्चात् लिखी गई।"[1]

"मैना का सतु" के आधार पर इतना अवश्य स्वीकार किया जा सकता है कि "ग़व्वासी" के बाद भी "मैनासत" विषयक काव्यधारा की गति में व्यतिरेक नहीं आया।

3·1·6 मैना सतवंती एवं चतुर्भुजदास कृत मधु मालती

खेमदास की रचना, "मैना का सतु" की भाँति चतुर्भुजदास की कृति "मधु मालती" भी "ग़व्वासी" की "मैना सतवंती" के बाद लिखी गई। अतः "ग़व्वासी" ने "मैना सतवंती" की रचना के समय चतुर्भुजदास की "मधुमालती" से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से लाभ उठाया हो, ऐसा संभव नहीं है -

"अनुमान लगाया गया है कि चतुर्भुजदास की "मधुमालती" "ग़व्वासी" की "मैना सतवंती" के बाद की रचना है।"[2]

---

1) डॉ॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 300

2) डॉ॰ " , " , " 300

"ग़्वासी" के पश्चात् "मैनासत" विषयक काव्य परंपरा को बनाए रखने में खेमदास की भाँति चतुर्भुजदास की भूमिका "मधुमालती" के रूप में, अविस्मरणी है ।

3·1·7 <u>मैनासतवंशी का लोकाधार</u>

मैनासत विषयक भारतीय लोक कथाओं पर विचार करते हुए डॉ· गुलाम उमर खां साहब ने लिखा है -

"चंद्रायन, मैनासत, इस्मत नामा तथा सती मैना व लोर चंद्रानी के अतिरिक्त उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों की स्थानीय बोलियों में भी यह कहानी प्राप्त होती है । उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल तथा छत्तीसगढ़ आदि के निकटवर्ती क्षेत्रों में मैना लोरक और चंदा की प्रेमगाथाएं लोक गीतों में मिलाती है । अत: भोजपुरी, मिर्ज़ापुरी, छत्तीसगढ़ी तथा मैथिली आदि में यह लोक गाथा आंशिक परिवर्तन के साथ विद्यमान है ।"[1]

डॉ· श्रीराम शर्मा ने भी उक्त प्रेम गाथा के विभिन्न लोक रूपों की पुष्टि की है -

"गया वाले रूप में लोरक को अहीर या रावत बताया गया है । उसकी पत्नी मंजरिया {मैना} प्रेमिका चंदेनी {चांद अथवा चंदा} और चंदेनी का पति वीर बावन कथा के मुख्य पात्र हैं । छत्तीसगढ़ी कहानी के आधार पर लोरी को धोबी बताया गया है । इस काव्य का बहुत बड़ा अंश चंदेनी के पति वीर बावन

- -

1} संपादक : डॉ· गुलाम उमर खां, ग़्वासी - तूतीनामा, भूमिका, पृ· 83-84

से संबंधित है । वह छः महीने सोता था । चँदैनी लोरी के साथ भाग गई ।"[1]

निष्कर्ष

गव्वासी की मैना सतवंती का मूल स्रोत हमीदी कृत फ़ारसी रचना "इस्मतनामा" (सन् 1608 ई.) माना जाता है । हमीदी के इस्मतनामा की कहानी मुल्ला दाऊद की मसनवी चंदायन से ली गई है । इस संबंध में उर्दू आलोचक श्री गोपीचंद नारंग का मत है -

"चंदायन की कहानी पर इस समय तक केवल एक ही फ़ारसी परंपराकृति अर्थात् हमीदीकृत "इस्मतनामा" प्राप्त हुआ है । परंतु "गव्वासी" की मसनवी (मैना सतवंती) "इस्मतनामा" पर आधारित नहीं है । "इस्मतनामा" में चंदा (अंत में, मर जाती है जबकि "गव्वासी" के यहाँ ऐसा नहीं होता । इसके अतिरिक्त इसमें बारह मासा भी नहीं है जो "चंदायन" की कथा का महत्वपूर्ण अंश है तथा फ़ारसी "इस्मतनामा" में भी विद्यमान है । "इस्मतनामा" वास्तव में एक सूफ़ियाना रूपक है जिसमें स्पष्ट कर दिया गया है कि लोरक ईश्वर, सातिन, शैतान, मैना आत्मा है और दलाल इच्छा है । "गव्वासी" की मसनवी में ऐसी कोई व्याख्या नहीं की गई है । इन तथ्यों से सिद्ध होता है कि कथा चंदायन से संबंध फ़ारसी में हमीदी के अतिरिक्त कोई और परंपरा भी रही होगी जिसे "गव्वासी" ने अपना काव्यस्रोत बनाया होगा ।"[2]

---

1) डॉ. श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ. 30।

2) गोपीचंद नारंग, नवाए अदब, अक्तूबर, 1965 ई. पृ. 25

"गव्वासी" के काव्य मैना सतवंती" के स्रोत के संबंध में गोपीचंद नारंग के उक्त कथन का "मैना सतवंती" के संपादक डा॰ गुलाम उमर खां ने खण्डन किया है -

कवि "गुव्वासी" की मसनवी "इस्मतनामा" में आई बातों की पूर्ति नहीं करती तो इससे यह निष्कर्ष निकालना कि वह "इस्मतनामा" पर नहीं अपितु किसी अन्य अज्ञात फ़ारसी मसनवी पर आधारित है, पुनर्विचार योग्य है ।[1]

डा॰ गुलाम उमर खां साहब ने यह भी लिखा है कि -

"जहां तक कहानी का संबंध है यह तथ्य स्पष्ट है कि "इस्मतनामा", "चंदायन" पर नहीं बल्कि मैनासत की कहानी पर आधारित है और कहानी का यही रूप गुव्वासी की मसनवी का विषय है । स्वयं "चंदायन" और मैनासत के जो बिखरे पन्ने और प्रतियां प्राप्त हुई हैं । उनकी कहानी में भी उल्लेखनीय अंतर दृष्टिगोचर होता है ।"[2]

केवल चंदायन ही नहीं अपितु मैनासत पर लिखे गये काव्यों की परंपरा के पक्ष में परशुराम चतुर्वेदी ने विचार व्यक्त किया है -

"रचयिताओं ने इसके लिए विभिन्न स्रोतों को अपनाया था तथा उन्हें अपने ढंग से रूप-रंग देकर सजा दिया था । "चंद्रायन" मूलत: एक लोक गाथा के लोकगीत पर आधारित है ।

- -

1) संपादक : डा॰ गुलाम उमर खां, गुव्वासी - मैनासतवंती, भूमिका, पृ॰ 86

2) संपादक : डा॰ गुलाम उमर खां, गुव्वासी - मैना सतवंती, भूमिका पृ॰ 85

उसकी मूलकथा के केवल उत्तरांश अथवा मैना की विरह पीर और उनके द्वारा सत की रक्षा मात्र को लेकर की अनेक रचनाएं प्रस्तुत की जा चुकी है।"[1]

"ग़व्वासी" के काव्य मैनासतवंती की गणना, संक्षेप में, सत् संज्ञक काव्यों की कोटि में की जा सकती है -

""ग़व्वासी" का काव्य सत संज्ञक काव्यों के साथ रखा जा सकता है।"[2]

साहित्यिक शोध में संभावनाओं का महत्व अवश्य रहता है। परंतु जब संभावनाएं प्रमाण खोज लेती हैं तब ही उनका मूल्य होता है। "ग़व्वासी" ने अपने समस्त साहित्य में ऐसा कहीं उल्लेख नहीं किया कि जिससे यह अनुमान लगाया जा सके कि "चंदायन" अथवा "इस्मतनामा" के अतिरिक्त और कोई, संभावित, मसनवी उसकी मैना सतवंती का आधार भी। अतः "ग़व्वासी" मैना सतवंती का आधार वे सभी भारतीय कथाएं हैं जिनका आधार नारी सत का अथवा जो नारी के चरित्र को आदर्श एवं गौरवशाली बनाती थी। "ग़व्वासी" की मसनवी एक अत्यंत ही उद्देश्यपूर्ण कृति समझी जाएगी जिसका आधार सहनशीलता, शालीनता एवं पवित्रता पर निर्भर है। उर्दू में प्रकाशित मैना सतवंती के संबंध में विचार किया तो ज्ञात होता है कि मैना सतवंती की दो हस्तलिपियां, प्रारंभ में, नसीरुद्दीन को लंदन के इंडिया आफ़िस पुस्तकालय में प्राप्त हुई थीं। इन हस्तलिपियों का उल्लेख नसीरुद्दीन हाशमी ने अपनी पुस्तक

- -

1) परशुराम चतुर्वेदी, हिंदी के सूफ़ी प्रेमाख्यान, पृ॰ 69

2) डा॰ श्रीराम शर्मा, दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 302

"यूरोप में दक्खिनी मख़्तूतात" में शोधनीय हस्तलिपियों की सूची के अंतर्गत किया है ।

ब्लूम हार्ट की बनाई दक्खिनी हस्तलिपि सूची में भी "मैनासत्वंती" की कथा के समकक्ष "कव्वा और मैना" की कहानी का संकेत मिलता है । ब्लूम हार्ट ने "मैना सत्वंती" की कहानी को जो कि "मैना और ग्वाल" की कहानी भी है । "ग्वाल" का उर्दू लिपि में क्वाल उच्चरण करते हुए मैना की जोड़ पर "क्वाल" से "कव्वा" अर्थ ग्रहण किया । कहानी का नायक लोरक "ग्वाला" अथवा "ग्वाल" माना जाता है । इस संबंध में मैना सत्वंती के संपादक डॉ॰ गुलाम उमर खाँ का मत है -

"मैना अथवा मैनासत्वंती कहानी की नायिका का नाम है । कहानी का नायक लोरक एक "ग्वाला" है जिसके लिए प्राचीन दक्खिनी में "ग्वाल" शब्द प्रयुक्त हुआ है और जो हस्त-लिपियों में "क्वाल" के रूप में प्राप्त होता है । मैना के समकक्ष, संभवत:, इस शब्द को कव्वा समझा गया और कथा को कव्वा और मैना की कहानी समझ लिया गया ।"[1]

"यूरोप में दक्खिनी मख़्तूतात" में प्रकाशन के कई वर्ष बाद नसीरुद्दीन हाशमी साहब ने सालारजंग म्यूज़ियम हैदराबाद में विद्यमान दक्खिनी पाण्डुलिपियों की सूची तय्यार की । इसी मध्य उन्हें "मैना सत्वंती" की पाँच पाण्डुलिपियाँ मिलीं । मसनवी के कुछ द्विपदों अथवा अशार में कवि के उपनाम "ग़व्वास" के आधार पर हाशमी साहब की यह धारणा बनी कि संभवत: यह मसनवी "ग़व्वासी" की ही है । इसका कारण यह था कि

- -

1. संपादक : डॉ॰ गुलाम उमर खाँ, ग़व्वासी - मैना सत्वंती, भूमिका, पृ॰ ।

ग़व्वासी ने अपनी अन्य रचनाओं विशेषकर, "सैफ़ुलमुलूक व बदी उज्जमाल" में, विभिन्न स्थलों पर, अपना उपनाम "ग़व्वास" प्रयोग किया है । "मैना सत्वंती" में उपनाम "ग़व्वास" सहित प्राप्त होने वाले दो अशार यहां उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किए गए हैं -

मेरे सत के दरिया का लोरक ग़व्वास
न ले से कोई इस बज मोतियों की रास

यथा

बजा नूर "ग़व्वास" आदिया कमर
डुबिया जावे मग़रिब के दरिया भितर

उपरोक्त द्विपदों में "ग़व्वास" शब्द के अभिधार्थ के कारण कुछ आलोचकों के मन में शंका उत्पन्न हुई कि यह शब्द कवि के उपनाम को प्रदर्शित नहीं करता । अतः यह अशार "ग़व्वासी" के नहीं अपितु किसी अन्य दक्खिनी कवि के हैं । परंतु सन् 1961 ईस्वी में नसीरुद्दीन हाशमी साहब ही ने जब हैदराबाद के राजकीय पुस्तकालय में विद्यमान पाण्डुलिपियों की सूची तय्यार की तो वहां उन्हें "मैना सत्वंती" की अन्य चार प्रतियां प्राप्त हुई । इनमें से दो प्राचीन पाण्डुलिपियों में भी जिनकी कहानी के अंतिम भाग में वे द्विपद मिले जिनमें कवि का उपनाम स्पष्ट रूप में मौजूद था । "मैना सत्वंती" के संबंध में विचार व्यक्त करते हुए स्वयं नसीरुद्दीन हाशमी ने अपनी पुस्तक "उर्दू मख़्तूतात कुत्बख़ाना आसफ़िया" में लिखा है -

"कुछ लोगों का विचार है कि यह मसनवी - {मैना सत्वंती} "ग़व्वासी" की नहीं है । अतः कवि के उपनाम सहित कुछ द्विपद

यहाँ उद्धृत किए जाते हैं । क्यों कि सालारजंग पुस्तकालय की पाण्डुलिपियों में उपनाम सहित अशार नहीं हैं ।"[1]

राजकीय पुस्तकालय, हैदराबाद अथवा कुतुबखाने आसफ़िया की प्राचीन प्रतियों में "ग़व्वासी" के अधोकथित अशार यह है -

किया नज़्म क़िस्से का नाबात बोल
देखो चूक पारों तो राखो न बोल
बड़े फहमदारों में हुँ कम फ़हाम किया हूँ यूँ महानगर हूँ तमाम
"ग़व्वासी" कमीने पे करना नज़र
हुआ हक़ सूँ मंगल मेरे हक़ उमर ।

उर्दू में प्रकाशित मैना सत्वंती के संवाहक डॉ॰ गुलाम उमर खाँ साहब ने मुख्य रूप से सालारजंग पुस्तकालय की पाँच हस्तलिपियों तथा राजकीय पुस्तकालय, हैदराबाद में उपलब्ध अन्य चार हस्तलिपियों से लाभ उठाया है । परंतु "मैना सत्वंती" की कहानी पर आधारित "इंडिया आफिस" लंदन की दो प्रति यो अंजुमन तरक्की उर्दू हिंद, अलीगढ़-पुस्तकालय की एक प्रति से सीधे लाभ उठाने का उन्हें अवसर नहीं मिला । अपितु इन दो पर जो टीकाएं छपी उनके आधार पर खान साहब ने प्रकट किया है वे हस्तलिपियां भी "सालारजंग पुस्तकालय" की हस्तलिपियों पर आधारित हैं -

"इंडिया आफ़िस की दो प्रतियों तथा "अंजुमन तरक्की उर्दू अलीगढ़" की एक प्रति को देखने का मुझे अवसर नहीं मिला । परंतु इन प्रतियों से संबंधित आलोच्य विषय तथा उनके सुदीर्घ

- -

1. नसीरुद्दीन हाशमी, उर्दू मख़तूतात, कुतुबख़ाने आसफ़िया, जिल्द अव्वल, पृ॰ 94

उद्धरणों का अवलोकन करने से अनुमान होता है कि यह तीनों प्रतियां भी मूल रूप से "सालारजंग पुस्तकालय" की प्रारंभिक प्रतियों से संबंध रखती है ।"[1]

हैदराबाद के दोनों उपर्युक्त पुस्तकालयों में प्राप्त कुल नौ प्रतियों में से "मैना सतवंती के उर्दू संपादन के लिए, संपादक डॉ॰ गुलाम उमर खाँ ने वस्तुत: प्रथम दो प्रतियों को मूल रूप से अपने अध्ययन का विषय बनाया है । अत: उर्दू में प्रकाशित "मैना सतवंती" मुख्य रूप से सालारजंग पुस्तकालय में प्राप्त प्रथम दो हस्तलिपियों पर आधारित है । यह पृथक बात है कि विभिन्न हस्तलिपियों का संपादक ने तुलनात्मक अध्ययन अवश्य किया ।

3·2 कथासार

भारत के किसी नगर में एक राजा राज्य करता था । राजा का नाम बाला कुंअर था । बाला कुंअर की अत्यंत ही सुंदर पुत्री राजकुमारी चंदा थी । एक बार गोधूली के समय चंदा अपने महल के छज्जे पर खड़ी सूर्यास्त का रमणीय दृश्य निहार रही थी । सूर्य की अंतिम स्वर्णिम किरणें उसके मुखमंडल को और भी शोभा प्रदान कर रही थी । राजकुमारी चंदा की एकांतमय दृष्टि दूर से घर लौटते ग्वाले पर पड़ी ।

था उस बादशाही में गव्वाल एक
इस्म उसका लोरक अथा नांव नेक

1। संपादक : डॉ॰ गुलाम उमर खाँ, गव्वासी - मैना सतवंती, भूमिका, पृ॰ 32-33

गुरु हाक एक दिन ओ आता अभा
शहर की गली में सूं जाता अभा
शहिंशाह की बेटी छज्जे के उपर
खड़ी थी सो देखी उसे लर बसर
कही मन में, क्या खूब पैदा है जान
गुरु रांकता कर हुई पशेमान ।

ग्वाला लोरक अपनी गईयों को हांकता हुआ मस्त चला आ रहा था । राजकुमारी चंदा लोरक को निकट से देखी तो मुग्ध हो गई । गठी हुई मांस पेशियाँ, सुंदर शरीर, आकर्षक मुखमण्डल तथा भोली-भाली भावमुद्रा किस नारी को भली नहीं लगती । चंदा लोरक के प्रेम में अपना मन हार गई ।

एक दिन अवसर पाकर चंदा ने लोरक को बुलाया तथा अपने मन का हाल कह सुनाया ।

खड़ी बट में आ इशारत सूं धर
बुलाई नज़िक उसकूं गव्वाल कर
मेरा दिल लग्या उज सूं, तू राज है
तुजे सरफ़राज़ी बायू साज है ।
x x x
छबीला तूं है जान, जानी मिंजे
लग्या जीव मेरा कती हूं तु के
वो ले माल सारा यहां ते हल्लूक
हमें और तुमें मिलको जाएं परमलोक
कती हूं सदा सुखसूं मिलकर रहना
में आरूस जारी, तूं नौशू बना ।

ग्वाला पहले तो घबराया परंतु चंदा के विश्वासमय आश्वासन, सहयोग के प्रस्ताव तथा भाग निकलने की योजना पर लोरक ने अपना आत्मपरिचय दिया । उसने चंदा को बताया कि बाला-वस्था में ही उसका ब्याह हो चुका है । पत्नी मैना अत्यंत सुंदर एवं सुशील युविति है । हीरे जवाहरात क्या यदि चंद्र एवं सूर्य भी आकाश से उतार कर उसे मैना के बदले दे दिए जाएं तो उसे नहीं चाहिए । जब स्वयं उसको अत्यधिक सौंदर्यपूर्ण स्त्री प्राप्त है तो वह क्यों चंदा को चाहे ।

> यू सुनकर ब्रहिया, मेरे घर नार है
> ओ सतवंत नारियां में अवतार है
> छबीली ओ ओ नार कुच हूर है
> सहेली कूं यूसुफ़ केरा नूर है
> खुदाने उसे नूर ऐसा दिया
> चतर सार ख़ासियां में उसकूं किया
> महाजन मिले चांद और सूर का
> मेरे घर में शोला है कुछ सूर का
> सितारे उस अगे यूं दिसते अहैं
> के ज्यूं देस कूं देवटियां लाए हैं
> इस्म-ए-पाक उसका कहूं मैं टुक एक
> पतिव्रता मैना सो है नांव नेक ।

चंदा ने व्यंग्याहास करते हुए कहा कि लोरक वन में गईयां हांकने मवा घांस-फूस के घर में जीवन बिताने का आदी है वह जीवन के विलासपूर्ण सुख-वैभव को क्या जाने । वह क्या जाने कि चंदा उसे क्या कुछ नहीं देना चाहती । चंदा के, इस प्रकार के, प्रलोभनों में फंसकर मैना की उपेक्षा करता हुआ लोरक चंदा के साथ नगर से भाग गया ।

दूसरे दिन राजा को जब समाचार मिला कि चंदा लोरक नगर से भाग निकले है तो राजा ने अपने सहायक एवं विश्वसनीय मित्रों को बुलाया । उसने अपने विश्वासपात्रों से कहा कि जो हो चुका सो हो चुका । चंदा लोरक के साथ चली गई । उसने लोरक के घर एक आकर्षक सुंदरी को देखा है और किसी तरह वह उसे प्राप्त करना चाहता है ।

राजा बालाकुंवर एक अनुभवी दूती को बुलाकर मैना को मना कर लाने के लिए कहता है । दूती को अपने आप पर गर्व है कि वह किसी सुंदरी को, चाहे वह महल के सात पर्दों में भी छिपी क्यों न हो मना कर ला सकती है । दूती में वह क्षमता है कि वह प्रहरियों की आंख में धूल झोंक कर भी ऐसे कार्य कर सकती है । ग्वाले की पत्नी मैना को वाक्जाल में फंसाना कुटनी दूती बांए हाथ का खेल समझती है । मैना को मनाना वह इतना साधारण काम समझती है कि इससे, अन्य दूतियों के आगे जो कि ऐसे ही व्यवसाय में लगी हुई हैं, वह अपना अनुभव करती है । बालाकुंअर दूती से कहता है कि मैना को मनाना साधारण कार्य नहीं है क्यों कि मैना कोई सामान्य स्त्री नहीं है । वह लाजवंती है उसे किसी भांति ले आना स्वयं अपने आप में दुश्कर कार्य है । कुटनी दूती बालाकुंअर से मैना के बारे में इतना सुनने पर भी मैना को पटाना छोटा काम समझती है । वह राजा से कहती है कि यदि इतना सा काम न कर सकी तो वह अपना चोंडा मुंडवा देगी ।

उधर जब मैना को ज्ञात होता है कि उसके पति लोरक ने उसके साथ विश्वासघात किया है तथा चांद के साथ भाग निकला है तो वह इसे अपना दुर्भाग्य समझती है । भारतीय नारी पतिव्रता

होती है । सहनशील होने के कारण उसमें जीवन की भावी स्थितियों से समझौता करने की अपार शक्ति होती है । अपनी पवित्रता बनाए रखने के लिए सत्यवती एक लज्जावती भारतीय नारियों की कितनी ही कहानियाँ मिलाती हैं । यहाँ मैना के जीवन का सर्व सुंदर श्रृंगार लोरक चला गया, मैना ने हर प्रकार के श्रृंगार का परित्याग कर दिया । उसने योगिन का वेष धारण कर लिया । जीवन के समस्त सुख भुला बैठी । सूत कात कर जीवन की एकांतमय घडियाँ बिताने लगी ।

ऐसे ही अवसर पर वृद्धा कुटनी दूती मैना के घर पहुँची । दूती ने यह कहकर मैना को विश्वास में लिया कि वह मैना के लिए मातातुल्य है क्यों कि उसने मैना को शैशव में दो वर्ष तक अपनी छाती का दूध पिलाया है । वह उसकी धाय रही है । भाग्य के फेरने ~~ने~~ दोनों को अलग कर दिया । भाग्यचक्र पूर्ण हुआ । अब वह मैना के साथ रहेगी । दुःख में किसी की मीठी बात ही बहुत बड़ी बात होती है । मैना वाचाल दूती की बातों को सच समझ बैठी तथा बड़े ही आत्मीयता पूर्णरूप से उसका स्वागत किया । मन ही मन सोचने लगी कि चलो जब कि अकेलापन खा रहा है, लोरक छोड़कर चला गया, कोई साथी-संगी नहीं ऐसे में धाय का माँ के रूप में मिल जाना किसी वरदान से कम नहीं है ।

एक दिन अवसर पाकर दूती ने मैना से अत्यंत ही सहानुभूति-पूर्ण भाव से कहा कि विश्वासघाती लोरक को भूल जाना ही मैना के लिए अच्छा है । मैना रूपवान है, यौवना है, उसकी जवानी लावण्य से भरपूर है । अब भी उसका भविष्य उज्जवल हो सकता है, वह क्यों लोरक को यहाद करती रहती है । मैना के कपोलों

पर अश्रुरूपी मोती ढुलक आए । मानो धरती के बंजर हृदय से जलप्रपात फूट पड़े हों ।

मैना ने दूती से कहा माँ जो हो चुका उसे भूलजा । कुछ नीति की बात बता, कुछ भविष्य के संबंध में परामर्श दे । इस तरह बार-बार लोरक को बुरा न कह । वह भोला-भाला है । ईश्वर न्याय करेगा । मैंने तो उसे क्षमा कर दिया । मैना कहने लगी कि ईश्वर उसे लोरक की पत्नी बनाया है वह तो लोरक नाम पर हर प्रकार के संकट को झेलने तत्पर है । यदि नारी के पाँव डगमगा जाएं तो फिर सभी लोगों में वह कलंकित ही रहती है । दूती सुनकर दूती ने कहा अभी तू अबोध है मुझ से ही ज़बान लड़ाती है । लोरक गँवार तेरा मूल्य क्या जाने । वह मूर्ख पत्थर तथा हीरे का अंतर तक नहीं जान सकता । यह मैना के मौज-मस्ती करने के दिन है, मैना के यौवन का वसंत बीता जा रहा है उसे विवेक बुद्धि से काम लेना चाहिए । दूती ने कहा कि वह मैना के लिए एक सुंदर वर ढूँढेगी जोकि उसके मूल्य को परख सके ।

कुटनी दूती की बातें सुनकर मैना क्रोधाग्नि में जलने लगी । क्रोधावेश में मैना ने वृद्धा को फटकारा और कहा कि वह उसे अपना समझती रही और बुढ़िया उसे बर्बादी के गढ़े में ढकेलना चाहती है । मैना की डाँट-डपट के उत्तर में दूती ने भी मैना को फटकार कहने लगी विरहाग्नि में जलना ही तेरा भाग्य है जब जवानी ढल जाएगी, अवसर निकल जाएगा तो मेरी बातें याद आएंगी । तू मेरी आत्मीयता पर शंका करती है वह तो दूध पिलाने के कारण तेरा दु:ख देखा नहीं जाता । तेरे यौवन पर तरस आता है । लोरक की विरहाग्नि में तेरा सौंदर्य

झुलसने लगा है । तुझ जैसी सौंदर्य की प्रतिमा के लिए ग्वाले का जोड़ स्वयं विरोधी था ।

मैना की पतिव्रता प्रवृत्ति को पागलपन घोषित करते हुए वृद्धा ने कहा कि यदि मैना चाहे तो वह मैना को राजा बाला कुंअर मिलाएगी । मैना के दिन फिरेंगे । अमूल्य वस्त्र धारण किए, केशों में सुगंधित फूलों के गजरे लगाए तथा आंखों में कजरा लगाए मूल्यवान आभूषण धारण किए जब वह राज महल पर राज करेगी और उद्यानों में सैर को निकलेगी तब उसके जीवन का रूप ही कुछ और होगा ।

बुढ़िया के चरित्रहीन प्रलोभनों के उत्तर में मैना ने कहा कि नारी का सत ही सर्वश्रेष्ठ धन होता है तथा पति के साथ का संभोग जीवन का सबसे बड़ा सुख होता है । वह लोरक की हो चुकी । लोरक ही उसके मन का राजा है । बाला कुंअर जैसे असंख्य राजाओं को वह लोरक पर से निछावर कर देगी । लोरक यदि उसका सर मांगे तो वह दे देगी । यदि वह उसके शारीरिक अंग प्राप्त करना चाहे तो मैना काट कर दे देगी और फिर भी मैना का मन लोरक के प्रेम में धड़कता रहेगा । जो स्त्री किसी पर पुरुष को अपने शारिक यौवन का वसंत देने तत्पर हो जाए उसे पर पुरुष से मिलने के पहले भस्म हो जाए । जिन मूल्यवान वस्त्रों तथा आभूषणों का प्रलोभन दिया जा रहा है उससे तो कहीं अच्छा है कि लोरक की मैना कफ़न ओढ़ कर सो जाए ।

स्वयंकथित वृद्धा धाय कोई पैतरा शेष रखना नहीं चाहती थी । उसने मैना से कहा कि मैना केवल यौवन को ही नहीं अपितु अपने जीवन को भी संकट में डाल रही है । संभवत: वह

ग्वाले के माधवी प्रभाव में आ गई है । सुखमय वैभवपूर्ण जीवन शायद मैना के भाग्य में नहीं लिखा है । इसलिए मैना को संकटमय दरिद्र जीवन ही बिताना पड़ेगा और वह अंत में पछताएगी । ग्वालों के प्रेम ने उसे कहीं का नहीं रखा, उसे अविवेकशील बना डाला । सत्संग का लाभ उतना प्रभावशील नहीं होता जितना कुत्संग का होता है । वृद्धा कहती है कि लोरक के कुत्संग में रहने के कारण मैना पर उसकी धाय का सत्संग अप्रभावकारी हो गया है । वृद्ध कुटनी दूती मैना को एक कहानी सुनाती है ।

गव्वासी ने मैना सतवंती में कुल छः कहानियां दूती तथा मैना के मुख से कहलवाई हैं । पहली, तीसरी तथा पांचवीं कहानी दूती के मुख मुखरित हुई हैं तथा दूसरी, चौथी एवं छठी मैना से कहलवाई गई है । मैना छठी कहानी की समाप्ति के पश्चात् नीति परक उपदेशात्मक तथ्यों का प्रतिपादन करती है यह तत्य सत काव्य परंपरा की अन्य कृतियों में वर्णित नहीं हैं ।

पहली कहानी : दूती के मुख से

मैना की काम वासना को उत्तेजित करने की इच्छा से दूती एक भिखारिन और राजा की कहानी सुनाती है -

एक राजा किसी भिखारी की भिखारन पुत्री पर रीझ जाता है तथा ब्याह करके उसे राज महल में ले आता है । राजा अपने सिंहासन के बराबर, रानी के रूप में, उस भिखारिन को स्थान देता है । परंतु मनोवैज्ञानिक प्रभाव के फलस्वरूप वह प्रत्येक दिन कहीं न कहीं से कोई कोई रोटी ले आती है और महल में बने किसी न किसी ताक में छिपा देती है । जब कोई नहीं देख

रहा होता है, अवसर पाकर वह रोटियों वाले ताक तक जाती है और भिखारिन की भांति बंधे हुए संवाद अलापती है। जब भीख मांगने से संबंधित संवाद पूरी हो जाते हैं तब वह अपने आपको रोटी खाने के समर्थ पाती है। राजमहल में प्रत्येक प्रकार का भोजन तथा सुख स्मृद्धि होने के बाद भी भिखारिन रानी का इस प्रकार परोक्ष रूप से भीख माना उसके नीच होने का परिचायक था।

कहानी सुनाकर दूती मैना से कहती है कि मैना की स्थिति भी उस भिखारिन जैसी ही है। राजा बाला कुंअर के मन पर छाने के पश्चात् भी वह संभावित स्मृद्ध जीवन को ठुकरा कर, व्यर्थ ही लोरक के नाम की रट लगाए बैठी है।

<u>दूसरी कहानी : मैना सत्वंती के मुख से</u>

दूती की व्यंग्यात्म कहानी समाप्त होने के पश्चात् मैना भी दूती को तीन मित्रों की उपदेशात्मक कहानी सुनाती है-

किसी नगर के तीन मित्रों में घनिष्ट मित्रता थी। एक बार तीनों मिलकर यात्रा पर निकले। गंतव्य तक पहुंचने के लिए उन्हें जंगल से गुज़रना पड़ता है। वहां उन्हें सोने की दो ईंटे कहीं पड़ी हुई मिलती हैं। तीनों मित्र प्रसन्नता पूर्वक उन स्वर्ण ईंटों को उठा लेते है और एक कुंऐ के समीप जाकर परस्पर उन ईंटों का विभाजन करना चाहते है। पहला मित्र दूसरे मित्र को आदेश देता है कि वह निकटवर्ती गांव को जाए और कुछ भोजन के लिए खाद्य सामग्री ले आए। गांव जाते हुए मित्र ने सोंचा कि क्यों न भोजन में विष मिला दिया जाए। अन्य दो मित्र विषैला भोजन खाकर मर जाएगे तो वह स्वयं सोने की ईंटों का अकेला

स्वामि हो जाएगा । उसने खाद्य सामग्री में विष मिला दिया ।

इधर अन्य दो मित्रों ने षड्यंत्र रचा कि गांव से भोजन लाने वाले मित्र को आते ही मार डालेंगे और दोनों एक-एक सोने की ईंट के स्वामि बन जाएंगे । जैसे ही मित्र निकटवर्ती गांव से भोजन ले आया अन्य दो मित्रों ने उसकी हत्या करदी तथा प्रसन्नता पूर्वक भोजन करने बैठे । भोजन में विष मिला हुआ था अतः खाते ही यह दोनों मित्र भी चल बसे ।

मैना ने दूती से कहा संसार के भौतिक सुख की लालच में पड़ने वालों का यह परिणाम होता है । हाथ कुछ नहीं आता । अतः मैना गरीबी में, ग्वाले की यादों को मन में बसाए किसी पर पुरुष के साथ फूलों की सेज की अपेक्षा मिट्टी के बिस्तर पर ही प्रसन्न-चित्त है ।

मैना की कही तीन मित्रों की कहानी ने दूती पर कोई प्रभाव नहीं डाला । दूती ने कहा मान भी यदि लोरक लौट आया और चंदा को भी साथ लिवा लाया और राजकुमारी चंदा मुझे धक्के मार कर घर से निकलवा दे अथवा दासी बनाकर रखे तब मैना क्या करेगी ? क्या तब भी वह लोरक से सत्य प्रेम निभाएगी ? दूती भी अड़ियल थी उसने पुनः नवीन प्रहार करते हुए मैना को दो पत्नियों वाले व्यक्ति की कहानी सुनाई ।

तीसरी कहानी : दूती के मुख से

किसी नगर में एक सिपाही निवास करता था । सिपाही की दो पत्नियां थीं । पहली पत्नी घर के ऊपरी माले पर रहती थी । दूसरी जो आयु में पहली से कम थी नीचे रहती थी ।

एक रात सिपाही रात के पहरे पर गया । अवसर पाकर अंधेरे में एक चोर सिपाही के घर में घुसा । चोर सीढ़ियों पर चढ़ ही रहा था कि आहट पाकर नीचे रहने वाली सिपाही की पत्नी जागी उसने सोचा कि संभवतः उसका पति आ गया है और चुपके से ऊपरी माले पर पहली पत्नी के पास जाना चाहता है । नीचे वाली ने अंधेरे में चोर को पति समझ कर उसके पैर पकड़ लिए । इस हड़बड़ाहट में पहली पत्नी की निद्रा टूटी । वह भी सीढ़ियों पर आ पहुंची तथा अंधेरे में चोर को पति समझ कर अधिकार स्वरूप उसके सर पर हाथ फेरा और बाल मज़बूती से पकड़कर ऊपर खींचने लगी । पहली पत्नी क्रोध में दूसरी पर चिल्लाई कि दूसरी ने उसके पति के साथ इतने दिनों संभोग किया अब जबकि उसका पति उसके पास आना चाहता है तो दूसरी उसे क्यों नीचे खींच रही है । क्या अभी पति से उसका मन नहीं भरा । नीचे वाली पत्नी ने कहा कि वह आज पति को किसी मूल्य पर ऊपर नहीं जाने देगी यदि वह फिर भी ऊपर जाने का प्रयत्न करेगा तो वह पति के पैर तोड़ डालेगी । इस प्रकार दोनों ने यथाशक्ति चोर को ऊपर-नीचे और नीचे-ऊपर खींचना आरंभ किया । इस संघर्ष में चोर का कलेजा मुंह को आ रहा था । चोर को इतना कठोर दण्ड मिला कि उसने मन ही मन प्रण लिया कि वह अब कभी चोरी करने नहीं जायेगा । इसी बीच सिपाही, पहरा समाप्त होने पर, घर लौट आया । दोनों स्त्रियों ने जब वास्तविक पति की आहट पाई तो डर कर अपने-अपने स्थान को भाग गई । चोर मूर्छित होकर गिर पड़ा । सिपाही ने चोर को बांध लिया । जब चोर को राजा के दरबार में लाया गया तो राजा ने चोर को मृत्यु दण्ड दिया । चोर ने

कहा राजन् ! मुझे क्षमा कर दीजिए मुझे अपने किए का दण्ड पहले ही मिल चुका है । यदि मैं फिर कभी भविष्य में चोरी करूं तो मुझे दो पत्नियों का पति बना दीजिए । चोर के मुंह से विचित्र बात सुनकर राजा की जिज्ञासा बढ़ी । राजा ने चोर को विपदा सुनाने का आदेश दिया । चोर ने रात वाली घटना का विवरण सुनाया । राजा तथा दरबारी खूब हंसने लगे । राजा ने चोर का मृत्युदण्ड वापस लेकर उसे मुक्त कर दिया ।

कहानी सुनाकर दूती ने मैना से कहा कि एक पति के साथ दो पत्नियों का रहना एक म्यान में दो तलवार रखने की चेष्टा करना जैसा है । यदि सगी बहन भी सौतन बन जाय तो वह भी किसी विषैली नागिन से कम नहीं होती । अतः मैना का यह सोचना कि वह लौट आने पर लोरक को उसी भाँति चाहेगी जैसे पहले चाहती थी, उसकी भूल है ।

दूती के मुंह से अपशब्द सुनकर मैना भावुक हो उठी । कहने लगी कि वह दूती को बुरे समय का साथी समझने लगी थी । धाय होने के कारण माँ जैसा व्यवहार किया । सोचती थी कि संकट के दिन बुढ़िया की सहानुभूति उसे आत्मीय रूप से सशक्त बनाएगी । परंतु बुढ़िया मैना के लिए सिरदर्द सिद्ध हो रही थी । मैना कहने लगी कि उसके लिए ईश्वर सबसे बड़ा सहारा है अवश्य ईश्वर उसके सत की रक्षा करेगा । उसने बुढिया को चेतावनी दी कि यदि आकाश से चंद्र-सूर्य भी धरती पर उतर कर उसके सत की परीक्षा लेंगे तब भी वह सत से नहीं डिगेगी । चंद्र-सूर्य भी उसके लोरक के आगे हीन हैं । चंदा जैसी राजकुमारी ही क्या यदि लोरक किसी दासी को भी साथ लिवा लाये तो

मैना लोरक के सुख के लिए दासी की सेवा के लिए तत्पर हो जाएगी । मैना दूती से फिर कहने लगी सब स्त्रियां एक जैसी नहीं होती संभवत: तूने एक सत्यवती स्त्री की कहानी नहीं सुनी । मैना दूती को कहानी सुनाती है ।

<u>चौथी कहानी : मैना के मुख से</u>

किसी नगर में एक सुंदरी रहती थी । उसका पति सेनानी था । पति सुंदरी से अत्यंत ही प्रेम करता था । एक बार उसे किसी यात्रा पर जाना था । जाते हुए पति ने अपने विश्वसनीय मित्र अपने घर पर रहने के लिए कहा तथा पत्नी को समझाया कि वह मित्र को पराया न समझे । सुंदरी ने पति के मित्र को भाई माना तथा भाई की भांति उसकी सेवा की । पति का मित्र अपने मित्र की पत्नी पर आसक्त हो गया तथा संभोग का प्रस्ताव रखा । उसकी यह बात सुनकर सुंदरी की आंखों से अश्रुधार बह निकली । स्त्री ने पति के मित्र पर क्रोध प्रकट किया और कहा कि उसको यह नीच बात शोभा नहीं देती । मित्र चुप रहा । सुंदरी ने भी उस बात को विस्मृत करने की चेष्टा की । फिर एक दिन मित्र ने कहा कि तुम्हारा मन बहुत दु:खी लग रहा है शायद तुम्हें पति की याद आती होगी । बाहर कहीं सैर को चलें । मन बहल जाएगा । मित्र अपनी वाचालता स्वरूप बाहर ले चलने में सफ़ हो गया । वह उस स्त्री को एक वन में ले गया तथा एकांत का लाभ उठाते हुए उससे आत्म-समर्पित होने के लिए कहा । परंतु स्त्री यह कह कर तय्यार नहीं हुई कि सत् की रक्षा के लिए यदि प्राण भी चले जाएं तो कोई बात नहीं । वह अपने पति के अतिरिक्त और किसी को समर्पित नहीं हो सकती । पति का मित्र उसे विवश करना ही चाहता

था कि दूर से एक कारवाँ उस ओर आता दिखाई दिया । वह व्यक्ति सुंदरी को छोड़, जान बचा, भाग खड़ा हुआ । व्यापारियों के कारवान का सरदार सुंदरी की विपदा सुनने के पश्चात् उस पर तरस खाकर तथा यह कह कर कि उसकी कोई संतान नहीं है, युवती को पालकी में बिठाकर अपने साथ ले गया । घर जाकर उस सरदार ने सुंदरी की बाबत कहानी सुनाई । व्यापारी की पत्नी ने सुंदरी को आश्रय दिया । इसी बीच व्यापारी को पुत्र हुआ । शिशु की देखभाल का उत्तरदायित्व घर की मालकिन ने सुंदरी को सौंपा ।

दुर्भाग्यवश व्यापारी के घर का एक दास सुंदरी पर आसक्त हो गया और कहने लगा कि जब एक घर में रहते हैं तो क्यों न एक हो जाएं । न करने पर उस घर के दास ने उसे धमकाया कि वह सुंदरी को किसी भारी संकट में फंसा देगा । अत: एक रात वह उस स्थान पर पहुँचा जहाँ सुंदरी व्यापारी के शिशु को लिए निद्रा निमग्न थी । दास ने मालिक के शिशु के मुँह पर हाथ रखा और उसका पेट काट कर हत्या करदी । रक्त की फ़व्वारे को सुंदरी के हाथों की ओर मोड़ वहाँ से चलता बना तथा ऐसा अबोध बना जैसा कि वह कुछ जानता ही न हो । सवेरे जब इस दुर्घटना का समाचार व्यापारी को मिला तो उसे विश्वास नहीं आया कि शिशु की हत्या सुंदरी के हाथों हुई है । फिर भी उसने सुंदरी को कुछ रुप्या-पैसा देकर वहाँ से निकाल दिया । वहाँ से चली तो मार्ग में देखा कि कुछ लोग किसी व्यक्ति चोरी के आरोप में मौत के घाट उतारने ले जा रहे हैं । उसने अपने पास से पैसा देकर उस व्यक्ति को मुक्त कराया । चोर ने उसके उपकार के बदले सुंदरी की सेवा का व्रत लिए । परंतु एक रात उसने भी

अन्य पुरुषों की भाँति उसे कामासक्त करने की चेष्टा की । चोर व्यक्ति को अकेला छोड़ रात के समय सुंदरी वहाँ से भाग निकली और एक दुकान के साए में शरण ली । सवेरे चोर उसे ढूंढता हुआ वहाँ आ निकला तथा शोर मचाने लगा कि यह स्त्री उसकी मोल ली हुई दासी है जो भाग गई थी । चोर ने सुंदरी को एक व्यापारी के हाथों बेच डाला । व्यापारी व्यापार का माल लेकर सुंदरी सहित पानी के जहाज पर सवार होकर यात्रा के लिए निकल पड़ा । सत्यवती सुंदरी ने मन में सोचा कि सत की रक्षा के समस्त उद्योग धरे के धरे रह गये और आज यह दिन देखना पड़ा कि वह एक व्यापारी की दासी बन गई ।

रात के समय व्यापारी ने इच्छा प्रकट की कि सुंदरी उसकी सेवार्थ पाँव दबाए । परंतु जैसे ही वह व्यापारी के निकट गई अनायास ही व्यापारी के प्राण पखेरू उड़ गए । सवेरे उसने देखा कि जहाज पर सवार अन्य व्यक्ति भी मृत्यु को प्राप्त हो गए हैं और जहाज किसी नगर के तट पर आ लगा है । सुंदरी ने पुरुषों का वेश धारण किया, व्यापारियों जैसी पगड़ी बाँधी तथा जहाज पर लदा माल लेकर नगर में पहुँची । पड़ाव डाला । वहाँ एक दुकान खोल ली तथा एक भव्य भवन बना कर सुखमय जीवन बिताने लगी । सत्यवती एवं चरित्रवान होने के कारण उसके नेत्रों में सत्य की ज्योति दीप्तिमान होने लगी । मुख मण्डल पर अलौकिक तेज उत्तर आया । यदि वह किसी रोगी पर दृष्टि डालती तो रोगी के रोग का स्वत: निवारण हो जाने लगा । उसके तेजस्वीपन का चर्चा दूर-दूर तक फैल गया ।

उधर जब उसका पति घर पहुँचा तो पत्नी को न पाया । मित्र से हाल-चाल पूछा तो उसी मित्र ने कहा कि उसको कोढ़

फूटने के कारण वह उसे अकेला छोडकर कहीं चली गई । सुंदरी के पति सेनानी ने पत्नी की उद्दण्डता पर दुःख प्रकट किया और कहा कि अपने नगर को लौटते समय उसने किसी नगर के एक व्यापारी के तेजस्वीपन का चर्चा सुना है जो रोगियों के रोग का निवारण अपने तेजस्वी व्यक्तित्व के फलस्वरूप कर देता है । अतः लशकरी अपने कोढ़ी मित्र के रोग की चिकित्सा हेतु उस नगर को चल देता है । जहाँ वास्तव में उसकी पत्नी व्यापारी के वेश में यह कल्याणकारी सामाजिक कार्य कर रही थी । मार्ग में उसे पिछले व्यापारी का दास तथा वह चोर भी मिला यही वे तीनों लोग थे (कोढ़ी मित्र, व्यापारी का दास तथा चोर) जिन्होंने उसकी पत्नी सुंदरी के साथ बलात्कार करना चाहा था । व्यापारी का दास तथा चोर भी कोढ़ का शिकार हो गए थे । अतः सेनानी ने उन दोनों को भी चिकित्सार्थ साथ ले लिया । वे सब सामूहिक रूप से तेजस्वी व्यापारी लशकरी की पत्नी, सुंदरी जिसने तेजस्वी व्यापारी का वेश धारण किया) के महल पहुँचे । तेजस्वी व्यापारी ने रोगियों को देखकर सबको पहचान लिया । लशकरी की उपस्थिति में उसने, क्रम से, हर एक रोगी से पूछा कि वे इस बुरी बीमारी का शिकार क्यों हुए, उन्हें चाहिए कि वे स्वयं अपने पाप के बारे में सत्य-सत्य बता दें । सच बताने पर ही रोग का उपचार हो सकेगा अन्यथा वे अत्यंत ही गंभीर संकटों में फंस जाएंगे । तीनों ने अपने पाप के संबंध में सत्य-सत्य बता दिया । तेजस्वी ने तीनों को अपनी आँखों की झलक दिखाई । उनका रोग देखते ही देखते दूर हो गया । तत्पश्चात् तेजस्वी ने, जो कि वास्तव में लशकरी की सुंदर पत्नी थी, पुरुष-वस्त्र के स्थान पर नारी-वस्त्र धारण किए तथा एक सुंदर सत्वंती पतिव्रता भारतीय नारी के रूप में पति लशकरी के

चरण छुए । उसने पति को अपनी विपदा सुनाई । पति के रहते भारतीय नारी किसी सिंहिन से कम नहीं होती । सुंदरी अपने पति के साथ सुखमय शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगी ।

उपरोक्त कथा सुनाकर मैना ने दूती से कहा कि जब परमेश्वर बिछड़ों को मिलाना चाहता है तो कोईन कोई मार्ग निकल ही आता है । अत: मैना यह विश्वास प्रकट करती है कि उसका पति लोरक एक न एक दिन उससे मिलने अवश्य आएगा । दूती निराश होकर वहां से चल पड़ी । मैना को लुभाने के इन प्रयत्नों में दूती ने अपना छ: महीने का समय नष्ट कर डाला ।

मैना के घर से निकल कर दूती राजा के पास गई । उसने राजा से अपने प्रयत्नों का विवरण कह सुनाया तथा अपनी पराजय को स्वीकार कर लिया ।

राजा बाला कुंअर ने दूती से अनुरोध किया कि "एक बार और प्रयत्न करके देखें । राजा ने कहा कि अबकी बार वह स्वयं भी दूती के साथ चलेगा और छिपकर मैना तथा दूती की बातचीत सुनेगा । अत: एक रात बुढ़िया कुटनी दूती राजा बाला कुंअर सहित मैना के घर पहुंची । राजा बाला कुंअर एक ओर छिप गया ।

दूती हाहाकार मचाती मैना के घर के भीतर पहुंची । कहने लगी कि वह उसके यहां आना तो नहीं चाहती थी परंतु क्या करे दूध के संबंध में जोर मारा तो उसे मैना के लिए आना ही पड़ा । मैना ने दूती से कहा कि वह उसे उसी समय पसंद करेगी जबकि वह उसे उत्तेजित न करे । दूती ने कहा कि मैना का दु:ख उससे देखा नहीं जाता वह मैना को सुखपूर्ण आनंदमय

जीवन व्यतीत करता हुआ देखना चाहती है । उसने कहा प्रत्येक काम का एक समय निश्चित रहता है । अतः निश्चित समय पर यदि मैना मान जाए तो मैना का भला होगा । क्या मैना ने यह कहानी नहीं सुनी ! दूती मैना को एक कुलक्षणा की कथा सुनाती है ।

पाँचवीं कहानी : दूती के मुख से

किसी नगर में मैना जैसी एक ढीठ सत्वंत स्त्री रहती थी । किसी पुरुष ने दूती के माध्यम से उसे प्रेम संदेश भेजा । सत्वंती ने उसके प्रेम को ठुकरा दिया । दूती के लाख मनाने पर भी जब उस पुरुष से संबंध स्थापित करने के लिए राज़ी नहीं हुई । कुछ दिन पश्चात् जब वह अपने पति से मिलने घर के ऊपरी माले पर गई तो उसने देखा कि उसका पति किसी पर स्त्री के साथ घनिष्टता दिखा रहा है । स्त्री क्रोधावेश में चुपके से नीचे लौट आई । फिर दूती को बुलवाया तथा इच्छा प्रकट की कि वह उस पर पुरुष से संबंध स्थापित करना चाहती है जिसने कि प्रारंभ में दूती के माध्यम से उसे प्रेम-संदेशा भेजा था । दूती ने यह समाचार उस पुरुष को दिया परंतु उस पुरुष ने यह कह कर स्त्री का प्रस्ताव ठुकरा दिया कि अब काफ़ी समय बीत चुका है स्त्री में कोई लावण्य शेष नहीं रहा । अतः वह उससे संबंध स्थापित नहीं करना चाहता । प्रत्येक वस्तु का विशेष समय तथा अवसर पर ही मूल्य रहता है । समय बीतने पर वस्तु मूल्यहीन हो जाती है ।

बुढ़िया कुटनी दूती ने कहानी सुनाकर मैना से कहा कि अब भी समय है वह अपने निर्णय पर पुनर्विचार करे एवं बालाकुंअर

को समर्पित हो जाए । मैना ने उत्तर दिया कि उपरोक्त कथा की स्त्री सतवंत नहीं अपितु कुलटा थी । मैना ने कहा कि वह उस सतवंती की तरह है जिसको किसी ने प्रेम-संदेश भेजा था उसका पति भी उसको छोड़ कर कहीं चला गया था । मैना कहानी सुनाने लगी ।

छठी अथवा अंतिम कहानी : मैना के मुख से

एक बार एक सतवंती स्त्री को अकेला अनुभव करके किसी दंभी उपदेशक राजा ने दूती के माध्यम से प्रेम-संदेश भेजा । दूती विरहणी के घर पहुँची तो देखा कि वह [illegible] रोती ही जा रही थी । दूती राजा के पास लौट आई तथा उससे कहा कि युवती का रुदन कम ही नहीं होता । वह क्या उसे समझाए अथवा किस प्रकार मनाए । राजा ने कहा कि उस सुंदरी को किसी भी मूल्य पर उसके सामने प्रस्तुत किया जाए इसके लिए चाहे शक्ति का प्रयोग ही क्यों न करना पड़े । राजा ने दूती को धमकाया कि असफल लौटने पर वह उसको मौत के घाट उतार देगा । जब तक कि दूती पुनः उस सत्यवती के घर पहुँचती सत्यवती के प्राण पखेरू उड़ गए । दंभी राजा ने उसका शव मँगवाया तब ही परिपार्श्व के शून्य से ज़ोर-दार आवाज़ आई । अज्ञात आवाज़ ने राजा को सचेत किया कि वह ऐसा नीच कर्म न करे । पाश्चात्ताप करते हुए राजा ने प्रण किया कि वह भविष्य में कभी पर स्त्री पर दृष्टि नहीं डालेगा । इतना सबकुछ होते हुए भी दूती ने अपनी लुभावनी बातों से मैना को फिर बहलाना-फुसलाना शुरू किया तो मैना ने दूती से पूछा कि दूती ने अपने जीवन में क्या ऐसा कार्य किया था ? दूती ने उत्तर दिया कि

हाँ उसने भी अल्हड़ उम्र में दो-चार तथा युवावस्था में आठ-दस पुरुषों के साथ संभोग किया था। उसे बुढ़ापे में जवानी के उन रस भरे मधुर दिनों की याद आती है, तो उसका हृदय गद्गद् हो उठता है।

मैना ने कहा कि यदि उसने वास्तव में बुढ़िया का दूध पिया होता तो उसका मन भी दूती की बातों में फंस गया होता। उसे विश्वास हो गया कि उसकी पूज्य माँ ने कभी इस बुढ़िया का दूध नहीं पिलाया होगा। बुढ़िया के धाय होने में मैना को शत प्रतिशत शंका हुई। मैना ने कहा कि गुणवान माता-पिता जानते है कि बच्चों के लिए चार कर्तव्य महत्वपूर्ण होते है।

मैना के अनुसार बच्चों के लिए माता-पिता के वह चार कर्त्तव्य, क्रम से इस प्रकार है -

1) किसी पवित्र-चरित्रवान स्त्री का दूध पिलाएं।
2) सतसंग में पालन-पोषण करें।
3) सत्य पर चलना और सत्य बात कहना सिखाएं।
4) बड़ो-छोटों के प्रति सदाचार, शील तथा उच्च चरित का व्यवहार सिखाएं।

मैना ने दूती पर रोष प्रकट करते हुए कि वह और उसका राजा दोनों मिलकर उसके सत् को तोड़ना चाहते है परंतु मैना ऐसी नि:श्वास भरेगी कि वे दोनों जलकर भस्म हो जाएंगे।

मैना की नीतिपरक बातें सुनकर राज बाला कुंअर अत्यंत प्रभावित हुआ। प्रकट होकर राजा ने मैना से क्षमा मांगी तथा

सरकारी आदेश जारी करके लोरक और चंदा को वापस बुलवाया । दूती का सर मुँडा कर तथा गधे पर बिठा कर नगर में घुमाने का दण्ड दिया ।

तृतीय अध्याय

1• गुव्वासी की मसनवियाँ : कथ्य और शिल्प

1•1 सौंदर्य वर्णन

1•1•1 मानव सौंदर्य

1•1•2 प्रकृति सौंदर्य

1•2 सामाजिक मूल्य

1•3 नैतिकता

1•4 गुव्वासी का जीवन दर्शन

1•5 मानवीकरण

1•6 रस-योजना

1•7 वीर-रस

1•8 रौद्र-रस

1•9 वीभत्स - रस

1•10 भयानक-रस

1•11 श्रृंगार रस

1•11•1 विप्रलम्भ-श्रृंगार

1•11•2 संयोग-श्रृंगार

1•12 हास्य-रस

1•13 करुण-रस

1•14 अद्भुत-रस

1•15 शिल्प

1•15•1 भाषा

1•15•2 फ़ारसी प्रभाव

1•15•2•1 हम्द

1•15•2•2 दुआ

1•15•2•3 खलीफाओं की प्रशंसा

1•15•2•4 मीराँ मुहीउद्दीन के सम्बन्ध में

1•15•2•5 अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा

1·15·3 सरल अभिव्यक्ति

1·15·4 खड़ी बोली हिन्दी का रूप

1·15·5 वर्णनात्मकता

1·15·6 चित्रात्मकता

1·15·7 बिंबात्मकता

तृतीय अध्याय

1. गुव्वासी की मसनवियाँ : कथ्य और शिल्प

कथ्य और शिल्प की दृष्टि से अध्ययन करने पर यह तथ्य सामने आता है कि गुव्वासी इन दोनों आधारों पर एक महाकवि था। क्योंकि मसनवी अपने आप में एक गेय कथा होती जिसमें संगीतात्मकता के साथ शब्द विन्यास एवं अर्थ विस्तार आदि पर बल दिया जाता है इसलिए मसनवी में प्रभाव उत्पन्न करने हेतु कवि कथ्य और शिल्प पर विशेष ध्यान देता है। किसी भी सफल मसनवी का आधार प्राय: कथ्य और शिल्प ही में निहित रहता है। काव्य-कृति में यदि कोई विशेष कथ्य नहीं पाया जाता तो सहृदय के लिए वह कृति नीरस हो जाती है। वैसे ही यदि रचना की अभिव्यक्ति हेतु यदि कवि शिल्प पर ध्यान न दे, तो रचना में झोल पड़ने के कारण वह सहृदय के लिए अपना आकर्षण खो बैठती है।

1·1 सौंदर्य वर्णन

1·1·1 मानव सौंदर्य

गव्वासी ने मसनवी सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल में बदी उज्जमाल के रूप का अत्यंत मार्मिक एवं सुंदर वर्णन किया है -

"अजब नूर केरा अथा मुख पे ताब
कि कुरबान उस मुख पे लख आफ़ताब

भऱ्या नूर उसका अथा पूर यूं
उबलते थे असनों पे संदूर ज्यूं

मुनव्वर हुए थे मकानां तमाम
अर्श हौर कुर्सी के थावां तमाम

सुगन मद भरी है अधिक नाज़ तन
सहेली कमल यूं है नाज़ुक बदन

सो रूखसार रोशन अनोलक हिलाल
सो है नांव जिसका बदी उज्जमाल ।"[1]

सैफ़ुलमुलूक का मधुर गायन सुनकर बदी उज्जमाल अपनी सखी से विनम्र निवेदन करती है कि वह उसे सैफुलमुलूक के डेरे तक ले जाए उसकी सखी सरांदीप (सिंहल) की शहज़ादी बदी उज्जमाल को वहां ले चलती है । इस अवसर पर उनकी उपस्थिति से बेख़बर सैफुलमुलूक अपने गीत की मधुर तान में लीन है । बदी उज्जमाल

---

1) सं॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी, गव्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 159

के माध्यम से गव्वासी ने सैफुलमुलूक के सौंदर्य को दर्शाया है -

"जो आशिक़ के डेरे के नज़दीक आई
ख़बर होय ना त्यों उसे ख़ुश निभाई

सो देखा देखी मस्त उस ठार उसे
चढ़्या है मदन का सो ख़ुश लहार उसे

तजल्ला उपर मुख बरसाता है ख़ुश
लिया अँखियाँ नाज़ों हँसता है ख़ुश

लगे हैं शमे बोबदन नूर के
झमकते हैं रुख़सार ज्यूं सूर के

अपन मन में झलता अया मस्त ख़याल
सो ढलकी है पगड़ी खुल्या है जमाल ।"[1]

मसनवी "मैना सतवंती" में चंदा का सौंदर्य वर्णन भी कवि के मानव सौंदर्य वर्णन में चार चांद लगा देता है -

"झलक चांद का ज्यूं उजाला दिसे
सुघड़ चुलबुली नार दिल में बसे

सरू के नमन नार, नाज़ुक निछल
यू पानी उपर ज्यूं खिला है कंवल

चढ़ी इश्क़ के आवे मैदान में
रह्या नईं है ताक़त दिल-ो-जान में

---

1) सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय-अबरारुद्दीन सिद्दीक़ी : गव्वासी-सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ 157

सदा इश्क् लई दिल में धरती अथी
पढ्ठे जान आशिक् दूं जपती अभी

राजा वाला कुंवर मैना के सौंदर्य[1]

पर रीझ जाता है । गव्वासी ने मैना के सौंदर्य का संक्षिप्त परंतु आकर्षक वर्णन किया है -

"चढ्या था महल पर पड़ी थी नज़र
अंखियां ताब ना ल्या गया सुद बिसर

सूरत अलबेली चक दिसा है मिंजे
देख्या सप दूं लो चुटपुटी है मिंजे

चढ़े हाथ मेरे जो वो माहताब
न निस दू गुरूब होवे लो आफ़ताब ।"[2]

गव्वासी की मसनवी तूती नामा की नायिका, व्यापारी की विरहणी पत्नी, पति की अनुपस्थिति में पर पुरुष पर रीझ जाती है । पर पुरुष के सौंदर्य का संक्षिप्त वर्णन गव्वासी ने निम्न पंक्तियों में किया है -

"जो थी घर में म्हाड़ी सो जा वां चढ़ी
उल्लू खोल खिड़की निभाती खड़ी

सो ऐसे मने यक छबीला जवान
परी उसको देखे तो देवे प्रान

बड़े दबदबे साथ आता देखी

- -

1) सं॰ गुलाम उमर खां : गव्वासी - मैना सत्वंती, पृष्ठ 123
2) " : " - " , " 128

सो अपने तरफ़ ख़ुश निभाता देखी ।"[1]

सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल की एक पात्र, शहज़ादी का रूप वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है -

"न उस सार सूरत मनें हूं कहीं
न वैसी तजल्ली सती नूर कहीं ।"[2]

1·1·2 प्रकृति-सौंदर्य

प्रकृति सौंदर्य के क्षेत्र में ग़व्वासी अत्यधिक सफल रहा है । उसने चंद्र, रात्रि, सूर्य, दिवस, फल-फूल, चराचर आदि के सुंदर सौंदर्यमय चित्र प्रस्तुत किए हैं । समुद्र में तूफ़ान उठने का दृश्य निम्न पंक्तियों में सफलतापूर्वक काव्यबद्ध हुआ है -

"अचानक उठा बाव तूफ़ान का
दर्या यूं पकड़्या ताव तूफ़ान था

निपट आए थे डाट काले अभाल
छिपा सूर, होर चांद पकड़्या पाताल

बरसने लग्या मेंग उपराल थे
न बरस्या कधीं यूं बरशगाल थे

पकड़्या गिर्द चारों तरफ़ अंधकार
कड़कने लग्यां बिजलियां ठार-ठार

- -

1) सं॰ मीर सआदत अली रज़्वी : ग़व्वासी-तूतीनामा, पृष्ठ 15

2) सं॰डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ 118

न दिन फ़ाम होता समजते न रात
हुआ रात और दिवस मिल एक बात

खुदा दूं पकुया आगे सारूयां कूं कान
भरोसा सटे जीवने का तमाम

कि दरिया उबलने लग्या शोर सूं
उठे मौज तूफ़ां के ज़ोर सूं ।"[1]

सूर्योदय का रम्य सौंदर्यमयी चित्र गव्वासी के प्रकृति-चित्रण को एक महान रूप प्रदान करता है -

"नूरानी सुबह का जो बारा हुआ
चंदर का झलक टुक उतारा हुआ

सितारे लगे डूबने ठार-ठार
पंखी उठ लगे गुल करन सूं पुकार

अर्श का मुर्ग़ बांग कहने लग्या
सुबह का ठण्डा बाव बहने लग्या ।"[2]

x x x

चंद्र जब निकल रफ़्त बांद्या तमाम
शफ़क़ में खड़ा रह किया उस सलाम

---

1) सं॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 71।

2) -वही- , पृष्ठ 83

ज़माना जो हर दाय निकली बहार
ज़मीं का बदन पार थार बार दार

सती हात की नार के हात सों
शफ़क़ ख़ून में थे उवा हात सों

मुरग़ अर्श का हाँक मारन लग्या
परिंद्यां सूं अपने विचारन लग्या

परिंदे लगे कूकने ठार-ठार
दरिंदे चले सैर करने कू भार

रैन जिउं जनी सुबह की पूत कूं
सो रोशन हुआ सुबह की रूत सूं

प्रकृति सौंदर्य की दृष्टि से मैना सतवंती के अंतर्गत विभिन्न कथ्यों का आश्रय ग्रहण करके गव्वासी ने सूर्योदय के दृश्य को अंकित किया है। परंतु वह अंकन प्रायः संक्षेप में ही है -

"वज़ा सूर गव्वास कांद्या कमर
डूब्या जाके मग़रिब के दरिया भितर

तिजारत अंदर रैन का झाड़ चढ
सितारे सूं गौहर चल्या उसमें भर।"[2]

x x x

"रैन का चंदा जब छुपिया एक ठार

---

1) सं॰ डॉ॰ रामकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 99-100
2) सं॰ गुलाम उमर खां : गव्वासी - मैनासतवंती, पृष्ठ 183-184

उठ्या सुबह का वईं सो मुर्गा पुकार ।"[1]

प्रकृति सौंदर्य के अंतर्गत दिए गए उपरोक्त उद्धरणों में कवि गव्वासी ने सूर्योदय के अधिकांश वर्णन प्रस्तुत किए हैं । इसके विपरीत तूतीनामा में कवि ने सूर्यास्त के दृश्यों को अधिक महत्व प्रदान किया है -

"जो सब दिवस फिर अशदहा सूर का
किया गुर्ब के ग़ार में ठांव जा

ग़म-अंजाम उगलन चांद का के बदल
अंधारे ते मशिरक़ ते आया निकल ।"[2]

x x x

"जहां गर्द खुरशीद ज्यूं वक़्त-ए-शाम
किया गुर्ब के घर मने जा मुक़ाम

निकल चांद मशिरक़ के बाड़े ते भार
जूं आया सो को दिल सभा बेक़रार"[3]

बादशाह शहपाल के नगर "गुलिस्ताने इरम" के एक उपवन में बदीउज्जमाल की दादी शहरबानो सैफुलमुलूक को कुछ देर घूमने के लिए छोड़ कर अपने पुत्र शाहपाल से पौत्री बदीउज्जमाल और सैफुलमुलूक के ब्याह की बात-चीत हेतु जाती है । इस अवसर पर सैफुलमुलूक उपवन में भ्रमण करता हुआ प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद लेता है -

- -

1) सं॰ गुलाम उमर खां : गव्वासी-मैनासत्वंती, पृष्ठ 184

2) सं॰ सआदत अली रज़्वी : गव्वासी-तूतीनामा, पृष्ठ 103

3) " " -" , " 110

"खिले थे बिबेक जिन्स के फूल वाँ
बू के बिन न थी नाउँ कूँ धूल वाँ

छुटे थे बगन सरबसर फूल में
बिबे जिन्स की बास हर फूल में

पवन बाज वाँ कोई माली न था
किती फूल थे जो बन खाली न था

कहीं राई चंपा कहीं सेवंती
कहीं मोगरा और कहीं रेवती
कहीं यासमीन और मदनबान कहीं
कहीं ताज़े जुई और रैहान कहीं

कहीं लाल और कहीं रंगीले गुलाब
कहीं फूल नरगिस के बेहिसाब

बिबेक रस भरे फूल खिले कलियाँ
देखे तो नयन कूँ उठे गुदगुलियाँ"।

इस स्थल पर ग़व्वासी ने फलों का भी वर्णन किया है -

"कहीं तख़्ते अंगूर के बेबदल
कहीं अंजीर-ओ-अनार शीरीं निछल

कहीं सेब और कहीं अनन्नास ख़ूब
बिबेक जिन्स के मेवे ख़ुश बास ख़ूब

- -

1. सं. डॉ. राजकिशोर पाण्डेय अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी-सैफ़ुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ 18।

कई अखरोट बादाम पिस्ते नफ़ीस
कई ज़ोज़ चिलग़ोज़ दिसते नफ़ीस

खुश ऐसे अच्छे गुलिस्तान में
लग्या सैर करने अपन ध्यान में ।"[1]

1·2 सामाजिक मूल्य

गव्वासी की मसनवियों में दो मसनविया, तूतीनामा तथा मैना सतवंती मूल रूप से सामाजिक सुधार के उद्देश्य को प्रकट करती है । एक में नायिका सत् से डिगाना चाहती है परंतु प्रत्येक रात्रि जब वह परपुरुष से मिलने की कामना करती है तो शुक उसे रोकने के लिए कोई न कोई कहानी सुनाता है । कहानी की समाप्ति पर सवेरा हो जाता है एवं वह स्त्री रात्रि के अंधकार से लाभ नहीं उठा सकती । "मैना सतवंती" में राजा बालाकुंवर लोरक की पत्नी मैना को लुभाने के लिए दूती को मैना की नकली दूध-मां बनाकर तथा संपत्ति के सपने दिखाकर सत् से डिगाना चाहती है परंतु मैनासत् से नहीं डिगती । उसका पति लोरक पर स्त्री के साथ कहीं चला गया है, किंतु भारतीय नारी के रूप में मैना यह मानती है कि पतिव्रता नारी पर पुरुष से संबंध स्थापित नहीं करती । अतः मैना का विश्वास है कि उसका पति लोरक एक दिन अवश्य लौटेगा और उसके पास लोरक एक दिन अवश्य लौटेगा और उसके पास आएगा । गव्वासी का यह कथ्य भारत के अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण सामाजिक मूल्य को

1§ सं॰डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी-सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 182

दर्शाता है । इन से पूर्व लिखित मसनवी सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल में भी सामाजिक मूल्य स्थान पा सके हैं परंतु उनकी मात्रा अन्य मसनवियों में विद्यमान सामाजिक मूल्यों से, अपेक्षाकृत, कम है ।

भारतीय समाज में पिता को अपने पुत्र से स्नेह होता है । पुत्र की सुख-सुविधा हेतु वह सामर्थ्य से अधिक साधन जुटाने का प्रयत्न करता है । ग़व्वासी ने एक पिता के इसी स्नेह को निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त किया है -

उबलने लगा प्यार का दिल में शौक़
मँगाया ख़ज़ीने में ले एक संदूक़
सो दों धर जड़त यूं जड़े थे उसे
जो ताक़त न था उस निभाने उसे

यो संदूक़ खोल एक अंगुश्तरी
भलता नगीना सो ज्यूं मुश्तरी

निछा ज़र ज़री ख़ूब ज़रबफ़्त एक
यू दो वस्त यूं काढ़े अपे शाह देक

सो सैफुल मुलूक के दिया हात में
हो ख़ुशहाल बहुत हीच इसी बात में

मँगाया उतम ज़ात तेज़ी अनूप
पवन हार जल्दी में अपरूप रूप

किया पेशकश हौर नवा ऊँया बहुत
बुलाकर दिया ओ मेरे मन के पूत ।"[1]

- -

1) सं॰डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ 44-45

भारतीय समाज में पारिवारिक मित्रता का चलन प्राचीन काल से रहा है । अपना मन बहलाने के लिए गुलिस्तानेइरम की रानी प्रायः सरांदील नगर की यात्रा किया करती थी । वह उस उपवन में भी भ्रमणार्थ जाया करती थी जहां पर कि सरांदील की रानी भी घूमने के लिए आती थी । हमारे समाज में महिलाएं यदि किसी कार्य से स्थान विशेष पर जाती हैं तो सामाजिक सौम्यता स्वरूप एक दूसरे को अपना परिचय देती हैं । इस प्रकार एक घराने का दूसरे घराने से घरोबा समाज में कोई नई बात नहीं है । ग़व्वासी ने अधोलिखित सामाजिक मूल्य को सफलतापूर्वक दर्शाया है -

"सो एक दिन ले संगात हमना कूं नाई
खुशी सात एक बाग़ में लेकर आई

फिरेक दिवस वां शादमानी किये
अदिक जश्न वां खुश जानी किये

एकाएक औरत एक इस ठार पर
हरे झाड़ पर थे उतर आय कर

कही हो मेरी मां कूं करती सलाम
उठी बोल इस धात हो हम कलाम

कि परियां के राजा की औरत हूं मैं
दरशन आई हूं तेरी बेटी के तई

सकल शाह परियां में मेरा नांउ है
मेरा गुलिस्तान-ए-इरम ठांव है

जो है मुझ कने एक बेटी नन्हीं
सो है मेरे नैन की रोशनी

रख्या नाउं उसका बदी उज्जमाल
है उस सात मेरा मुहब्बत कमाल ।"[1]

जब घनिष्टता बढ़ती है तो भारतीय समाज में महिलाएं अपनी सम-आयु संतानों को परस्पर स्वस्तन दुग्ध-पान कराने से भी नहीं चूकती -

"तू बेटी सो तेरी है बेटी मेरी
तू बेटी सो मेरी तू बेटी तेरी

पिला प्यार से दूद तेरा उसे
कि मैं देऊंगी दूद मेरा उसे

कर इस कज़ा यूं बाल एक यूं एक
रहे दो जने मिल अपस क्यों एक ।"[2]

कुलीन व्यक्तित्व को समाज में लोग पहचान लेते है । उसकी सम-सामाजिक स्थिति चाहे किसी प्रकार रहे, समाज उससे विनम्र व्यवहार करता है । ताजुलमुलूक के लिए सैफुलमुलूक एक संकट-ग्रस्त युवक था । परंतु शालीनता के कारणवश सम्मान का पात्र बना -

- -

1) सं॰डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी :
ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ 125

2) सं॰डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी :
ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ 126

बड़ा बख़्तवर कोई है बर पठान
नज़िक बैसला उस कहया है जवान

कहो काँ ते आया है ऐ ज्वान तूं
सो मँगता है जाने कूं किस ठाव तूं

क्यों आना हुआ था तेरा बोल मुंज
जो कुछ है तेरा माजरा खोल मुंज ।"[1]

ग़व्वासी के समय में, संभवत: गोलकुण्डा राज्य में बहु विवाह का प्रचलन था, इसलिए ग़व्वासी जन्मदायित्री माँ के महत्व बार-बार दुहराता है -

"दिया भेज क़ासिद कूं वई भाई पास
मेहरबान उसकी जनी भाई पास ।"[2]

x x x

हुआ फ़रह रोज़ी जनी भाई कूं
तमाम उसके बहनां कूं हौर भाई कूं ।"[3]

x x x

"जम्या दिल कूं हम भान हम भाई की
जो फिर कर जने पेट ते भाई की ।"[4]

x x x

---

1) सं॰डा॰ राजकिशोर पाण्डेय-अब्दुस्सुद्दीन सिद्दीकी : ग़व्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 133
2) -वही- पृष्ठ 136
3) -वही- पृष्ठ 138
4) -वही- पृष्ठ 139

"जनी माँ हो फ़रज़ंद पाई उसे
दे दस धात तक़वा पिलाई उसे ।"[1]

दक्खिन में विवाह के समय "जलवा" नामक एक प्रथा है । वर और वधू को सुसज्जित मण्डप में लाया जाता है जहाँ पर, वधू का मुखमण्डल देखता है –

"बदी उज्जमाल अप्सरी नार थूं
दुखायाँ ज़माने में झनकार थूं
जो जल्वा दिखाने हो याँ मुस्तइद
उस जलवे कारन किया मुस्तइद

जवाहिर के मंड़वे सो छाया तमाम
मुरस्सा के परदे बंधाया तमाम

हर एक महल सूप्याँ मने रंग-रंग
जड़त के रखे त्याके ऊपर पलंग

मिल्याँ खुश हो नायाँ वो दायाँ तमाम
शौ आरूस के पास आयाँ तमाम

दुनियाँ उस घड़ी जाँ हुए सीर ते
फुले बहुत मोत्याँ के एक धीर ते ।"[2]

- -

1) सं॰डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-बदायूद्दीन सिद्दीक़ी : गव्वासी-सैफ़ुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 180

2) -वही- , पृष्ठ 208

शादी-ब्याह के अवसर पर लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार व्यय करते हैं । धनवान लोग भोज एवं दान इत्यादि का आयोजन करके आनंद अनुभव करते है । गुलिस्ताने इरम का राजा शाहपाल दान इत्यादि देकर प्रसन्न हुआ -

भवाबाँ धगाँ जग के सुद जाय त्यूं
लख्या बाँटने माल मन भाये त्यूं
किते नौरतन हौर किते मोतियाँ
किते हलकड़ूक हौर पदक जोतियाँ

किते यूं जड़त के उतम कण्ठमाल
किते यूं जड़त की पटी जग उजाल

किते ज़रत तेज़ी, किते मस्त हस्त
किते ख़ूब तौ हफ़े, किते ख़ूब वस्त

किया दान बेनिस्त यक धीर से
किया खिलअताँ सबकूं यूं तीर से ।"[1]

पति की अनुपस्थिति में पर पुरुष पर आसक्त होना एवं मन में संभोग की इच्छा को स्थान देना एक सामाजिक बुराई है । ग़व्वासी ने तूतीनामा की विभिन्न कथाओं द्वारा इस सामाजिक समस्या के निवारण का प्रयत्न किया है । तूतीनामा की नायिका को, मनुष्यों की भाँति बात करने वाली मैना पर-पुरुष के पास जाने से रोकती है तो वह स्त्री उस मैना की मुण्डी मरोड़ डालती

- -

1. सं॰डा॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी-सैफ़ुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 208

है । परंतु तोता उसे प्रति रात्रि किसी न किसी कहानी में व्यस्त रखता है यहाँ तक कि एक दिन उसका पति घर लौट आता है -

"न मैना देखत थ तूती हैरान हुई
मुसल्लिम अपस में परेशान हुई

जो भी घर में झगड़ी सो जा वाँ चढ़ी
हल्लू खोल खिड़की निभाती खड़ी

सो देखे मने एक छबीला जवान
परी उसको देखे तो देवे प्रान

पड़े दम-दमे साथ आता देखी
सो अपने तरफ़ कुछ निभाता देखी

जो था मर्द का इश्क़ मन में अव्वल
जो देखी उसे सो गया जो निकल

निशाना रख उसका जो चंचल जवाँ
सो मारया वहीं इश्क़ का तेज़ बान ।"[1]

पर-पुरुष लोरक को रिझाने एवं तत्पश्चात् भगा ले जाने में "मैना सतवंती" की चेष्टा सफल हो जाती है -

"छबीला तू है जान, पानी मिले
लम्बा जीव मेरा कती हूँ तुझे

---

1. सं० मीर सआदत अली रज़्वी : गव्वासी - तूतीनामा, पृष्ठ 15

वो ले नाल सारा यहाँ से सलूक
हमीं होर तुमीं मिल को जाएं प्रेम लोक
कहीं हूं सदा सुख सूं मिलकर रहना
मैं अलबेली प्यारी, तू नौशू बना ।"¹

गव्वासी के युग में कुटनी अथवा दूती की प्रथा रही होगी । यही कारण होगा कि उन्होंने तूतीनामा तथा मैना सतवंती में दूती की भूमिका को बनाए रखा -

"बहरहाल उस इश्क़ फांदे में मेल
चला अपने अंधीर ताज़ी कूं ठेल
बोला यक कुटनी नकर जन कूं शिताब
बुदिया उस टके खुश किया दे हिसाब
कहा खोल राज़ आपना उसके धीर
सो मिन्नत से मिन्नत किया फेर-फेर
जो वो नकरज़न उस सुजन के घर आई
वो अहवाल सारा सुख जो उसका निभाई
दिवानी हो उसकी चलाखी उपर
चलि जान कर उसके क़ामत उपर
लगा ले हल्लू वै रिझाने लगी
बचन नकर के सो चलाने लगी ।"²

मसनवी मैना सतवंती की दूती, लोरक के चले जाने पर, बहला-फुसला कर मैना को बाला कुंवर के पास ले जाना चाहती है । दूती इस प्रकार के कार्यों में बहुत कुशल है । परंतु मैना बाला कुंवर का नाम सुनना भी नहीं चाहती -

- -

1) सं॰ गुलाम उमर खाँ : ग़व्वासी-मैना सत्वंती, पृष्ठ 125

2) सं॰ मीर सआदत अली रज़्वी : ग़व्वासी-तूतीनामा, पृष्ठ 16

"बता क्यों तू ख्याल पर मन धरी
बता क्यों तेरा जान उस पर वरी
अजब है तेरा दिल न उससे भग्या
किस तहर क्यों ध्यान उसका लग्या
तू आख़िर है बंदी जनम खोएगी
बुरा सोचेगी नज़दीक उस शाह के
दिले सूरज्यों गोद में मार दे ।"[1]

x x x

"कही, भाई गम छोड़ दे अब तमाम
इत्ता पंद दे पुत, तूं निकला फ़हाम
नको सोच औरत तूं हरगिज़ [illegible]
सहना तेरा अब हुआ पार माल ।"[2]

संभवतः गुव्वासी के समय लोग संयुक्त-परिवार में रहना पसंद करते थे । संयुक्त परिवार भारतीय समाज की प्राचीन परंपरा का प्रतीक है -

"न माँ, भाई की कोई निज साथ है
न बेटी न फरजाना कोई ज़ात है
न दादी फुप्पी कोई पिजानी निजे
न नानी न ख़ाला कहूँ क्या तुझे
न नंदाँ, न भावज, भतीजी न बहन्नी
करी हूँ तेरा दिल में सबसे गुनी
अकेली हूँ मैं इस वतन में ग़रीब
करम तू करी तो मुझे निज नसीब ।"[3]

---

1) सं० गुलाम उमर खाँ : गुव्वासी-मैना सतवंती, पृष्ठ 146
2) -वही- , " 135
3) -वही- , " 133-134

1·3 नैतिकता

गव्वासी के काव्य में नैतिक मूल्य गोलकुण्डा के अन्य किसी भी कवि से अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। मसनवी सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल का नायक सरान्दीप की शाहज़ादी के साथ एकान्त महल में न केवल रात बिताता है बल्कि दो-तीन दिन साथ रहकर भी कर्मठ पुरुष की भाँति मर्यादा से बाहर नहीं होता -

"कहो यूँ कि बेटी हूँ मैं लाज की
सरांदीप के मुलक के राज की
x x x
न्को जा, दो दिवस अछ मेरे पास तूँ
न को लया ले कुच दिल में वस्वास तूँ।"[1]

तूती नामा की प्रायः प्रत्येक कहानी का उद्देश्य व्यापारी की पत्नी को नैतिक बन्धन में बाँधे रखना है -

"वलेकिन एती बेकरारी न कर
तू टुकड़े अपस ज्यूँ तुपारी न कर
के जो काम होता अछे सबरूँ
उताला न करना उसे जबर तूँ।"[2]
x x x
"बहरहाल खुशहाल अछ ग़म न कर
तेरा प्यार उस यार ते कम न कर।"[3]

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ सं० 122-123

2· सं० मीर सआदत अली रज़्वी : गव्वासी - "तूतीनामा" पृ सं० 120

3· -वही- -वही- पृ सं० 153

मनुष्य का नैतिक उत्तरदायित्व है कि वह निज दुःख दर्द को अपने मन में रखे। गव्वासी मानव को सहनशील प्राणी मानता है। संसार में दुःखों को हँसते हुए झेलना पड़ता है -

"तू ग़म कूँ भी ग़म कर नको, जान ले
खुश कर सरकार उसे मान ले
अगर तू मेरा आज सुनतो है बोल
तो राज़ अपना किस के आगे न खोल।"[1]

मसनवी "मैना सतवन्ती" कथ्य की दृष्टि से नीति प्रधान काव्य है। आरम्भ से अन्त तक मैना नैतिक रूप से पतिव्रता स्त्री है। वह राजा बालाकुंअर की रानी बनने के लालच में नहीं आती है। मैना के लिए उसका पति लोरक ही सब कुछ है -

"के क्या बोलतो तूँ मेरे यार कूँ
मेरे मन के आधार दिलदार कूँ
बुरी बोलतो सो कना क्या उसे
जो आदमी न्हन्ना हर किसी कूँ दिसे।"[2]

x x x

"मँगादे जो भू सीस लोरक उताल
मुहब्बत छुरी सूँ उतारूँ उताल
तबक़ दिल, हया का ओ सरपोश कर
पटा आऊँ लोरक अछे जिस नगर।"[3]

गव्वासी के अनुसार सांसारिक जीवन नश्वर है। वास्तव में मानव ~~म~~ के नैतिक मूल्य ही शाश्वत होते हैं। मैना के माध्यम से कवि कहता है -

---

1. सं0 मीर सआदत अली रज़्वी : गव्वासी - तूतीनामा, पृष्ठ सं0 219
2. सं0 गुलाम उमरखाँ : गव्वासी - मैना सतवन्ती - पृ सं0 142
3. -वही- -वही- 143

"यूँ दुनिया भरी नई वाई किसे
न भावेगी यू आश्नाई किसे
भला है जो कायम अछो अपनी खाट
सलामत अछो तूफड़ी होर ताट ।"[1]

भारतीय हिन्दु नारी होना मैना के लिए गर्व एवं गौरव की बात है । भारतीय सत्‌व्रता मानती है कि एक दिन उसे चिता में जलना है । अतः वह जीवन भर सत-कर्म करना चाहती है । मैना का कथन है कि यहाँ अनगिनत सत्‌व्रताएँ हुई हैं और वे मैना के लिए आदर्श भी हैं । मैना उन सतव्रताओं की पग-रज भी नहीं है -

"सती हिन्दुओं की जले एक दिन
हमारी उम्र सारी जलना कठिन
के जेते सतियाँ की सो हूँ गर्द में
न को पड़ तूँ निज आह के दर्द में ।"[2]

1·4 गव्वासी का जीवन दर्शन

गव्वासी मानता है कि संसार में मनुष्य को सतकर्म करने चाहिए । ईश्वर हमारे कर्मों का फल अवश्य देता है । परमात्मा ही मानव को संकटों से बचाता है । परिश्रम का फल देने वाला भी ईश्वर ही है -

"कि रहमान अपने बन्दयाँ के उपर
दया को जो मँगता है करने नज़र
उवा आपने प्यार के हाथ सूँ
बचाता है आफ़त थे हर घात सूँ
करीमी जहाँ पर करनहार वे
मशक्कत कूँ राहत देवनहार वे ।"[2]

1· सं0 गुलाम उमरखाँ : गव्वासी - मैनासतवन्ती - पृ सं0 152
2· -वही- 153
3· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय -अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी-सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं0 116

मानव को चाहिए कि वह क्षण-क्षण परमात्मा को स्मरण करे । मनोकामना की पूर्ति पर अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए ।

"कर अल्लाह का शुक्र वहां बेशुमार
हुए खुश दोनों मिलके होड़ी सवार
कज़ा पर नज़र रख तवक्कल सती
दरिया पर चढ़े मौज के बल सती ।"[1]

गव्वासी प्रेम में पवित्रता पर बल देता है । पवित्र-प्रेमी अनायास ही उत्पन्न होनेवाली वासनाजन्य परिस्थितियों से प्रभावित नहीं होता । उसके लिए आराध्य की प्राप्ति अभीष्ट है -

"जो कोई पाक आशिक़ है बावल नहीं
वो संगीन है कुच उतावल नहीं ।"[2]

गव्वासी के अनुसार योग्य व्यक्ति यदि गर्व करता है तो उसे आदर मिलना चाहिए -

"के जिसके सदफ़ में रतन साफ है
करे लाफ़ अगर उन तो इन्साफ़ है ।"[3]

सत्य प्रकट होकर ही रहता है -

"छुपाऊं केता आपसी कुण्ड में
के छुपती नहीं फूल की बास कईं ।"[3क]

x x x

"जिता चांद बादल में अपली छुपाए
रहे ज्योति उसका म बिन भार आए ।"[4]

1· सं०डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी - गव्वासी- सैफुल मुल्क व बदीउज्जमाल - पृ सं० 130
2· -वही- पृ सं० 171
3· सं० मीर सआदत अली रज़वी : गव्वासी - तूतीनामा-पृ सं० 285
3क· -वही- 285
4· -वही- 285

यह मायवी संसार आज तक किसी को समझ में नहीं आया । गव्वासी भी संसार के रहस्य को जानना चाहता है -

"दुनिया किस वज़ा की है दिखल मिंजे
है उस देखने का तमन्ना मिंजे ।"[1]

मौलिकता के आधार पर अभिव्यक्ति होगी -

"कि पनपे है खिलकत में जिस ज़ात सूँ
ओ दिखलाई देगी उसी धात सूँ ।"[2]

जीवन नश्वर है । वह किसी को प्रतीक्षा नहीं करता । समय बीतता जाता है । अवसर रहते कार्य कर लेना चाहिए । अन्तर-नयनों को खोलकर गन्तव्य का बोध रखना मनुष्य के लिए आवश्यक है । इस जग का कोई भरोसा नहीं । संसार मानो दुर्वेश, साधु-सन्त एवं बादशाहों का फंदा है, अतः मनुष्य को चाहिए कि वह स्वयं जाल से बचा रहे । धर्म पर ध्यान देना मनुष्य के लिए उचित है -

"अगर करने मांगता है कुछ काम तूँ
तो फ़ुर्सत यही वक़्त है फ़ाक तूँ
आंखि खोल इज़्ज़त की दरवेश देख
अजब मंज़िल आगे है अंदेश देख
न कर एतमाद इस गुज़रगाह का
यू फान्दा है दुर्वेश होर शाह का
संभाल अपसी अय यार इस दाम ते
न को गाफ़िल अछ आपने काम ते ।"[3]

x x x

"दो दिन की दुनियां कूँ न कर एतबार
कि जीना हमारा है दो दिन उधार

---

1. सं० मीर सआदत अली रज़वी : गव्वासी - तूतीनामा, पृष्ठ सं० 285
2. -वही- 285
3. -वही- 289

हैं आगे पीछे जान हारे हमीं
समज लेवें आपस में बारे हमीं ।"[1]

1·5 मानवीकरण

गव्वासी ने पक्षियों एवं प्रकृति में मानवीय प्रवृत्तियों का आरोपण करते हुए मानवीकरण का प्रयत्न किया है । तूतीनामा की संपूर्ण कहानियाँ शुक के मुख से कहलाई गई हैं । मसनवी "सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल" में मसनवी का नायक हिंसक पक्षी से छूट कर झरने के पास आपहुँचता है । वहाँ वह उस अनार को खा लेता है जिसे दैत्य भूले से छोड़ कर गया था । वृक्षों पर बैठे पक्षी फल खाने का परिणाम जानते हैं । पक्षियों का पारस्परिक वार्तालाप मानवों जैसे ही है -

"पंखी एक ऐसे में नरगोल उठा
यू उस झाड़ उपराल थे बोल उठा
जोता है जहाँ यू जो आफ़्ताब-ए-जमाल
हुआ है जो फिरते के गुन में निढाल
बड़ा दुख बला एक याँ आवेगा
जो इस बेगुनह ज्वान कूं खावेगा
पंखी दूसरा सुन बुरा मान कर
दरेगे अंखियाँ नम नमे नाम कर
लगा पूछने उसकूं यू क्या है कहा
कि इस बेगुनह का क्या है गुनाह ।"[2]

गव्वासी ने प्रकृति का मानवीकरण भी सफलतापूर्वक किया है । आकाश से बादल रूपी वस्त्र फाड़ कर चाँद अपनी गर्दन तेढ़ी करके देखता है । सितारे चन्द्रमा के सौंदर्य के आगे अपने आपको तुच्छ अनुभव करने लगे । कलियाँ भी हीन भावना से ग्रस्त होने लगी । सरू के पेड़

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अब्दुलुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 127

2· - वही - पृ सं० 112

भी उसके कद को देख कर हिचकियाने लगे । नर्गिस के फूल उसकी आँखों की ताब न लाकर खिस-खिसाने लगे । पवन, नायिका के सौंदर्य को देख भ्रमर बन कर मण्डराने लगा -

देख्या ज्यूँ बंदर उस मुँडो काढ़ कर
सट्या पैरहन आसमान के फाड़ कर
सितारे देख उसका निछल नूर सब
लिये हात शर्मिंदा हो दुर सब
कलियाँ सब चमन के देख उस भान कूँ
कियाँ चाक अपने गिरह बान कूँ
जिते सरो वाँ के गुलन हार थे
फ़िदा उसके कद पर वो सारे अथे
देख उसके नयन, बन के, नर्गिस तमाम
हो बेहोश लड़ते थे खिस-खिस तमाम
पवन उस गुल-ए-अंदाम की ख़ास बास
भँवर होके फिरता अछे आस पास
दिखाने हो फाडाँ के पाताँ तमाम
दुवा कूँ उचाके थे हाताँ तमाम ।"[1]

गुव्वासी ने सूर्योदय के दृश्य को रात्रि की प्रसूति स्वरूप जन्म शिशु के रूप में देखा है -

"जमाना जो हर दाम निकलो बहार
जमीं का बदर पार था बार दार
सतो हात को नार के हात सों
शफ़क़ खून में थे उचा हाल सों
तुरग अर्श का हाथ मारन लग्या
परिंदयाँ कूँ अपने पिचारन लग्या
परिन्दे लगे कूकने ठार-ठार
दरिन्दे चले सैर करने कू भार

---

1. सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी - गुव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल पृष्ठ सं० 159-160

रैन जिउँ जनी सुबह की पूत कूँ
सो रोशन हुआ सुबह की रुत सूँ ।"[1]

तूतीनामा में ग़व्वासी ने सूरज को बादशाह एवं पश्चिम दिशा को उसका घर और चन्द्रमा को बाड़े में निवास करने वाला सम्मोहय व्यक्ति बताया है -

"जहाँ गर्द खुर्शीद जूँ वक्त-ए-शाम
दिया ग़र्ब के घर मने जा मुकाम
निकल चाँद मशिरक़ के बाड़े ते भार
जूँ आया सो ओ दिलरुबा बेक़रार ।"[2]

1·6 रस-योजना

ग़व्वासी की मसनवियों में क्रमशः सभी रसों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया गया है । किंतु गंभीर स्वभाव का व्यक्ति होने के कारण संभवतः ग़व्वासी हास्य रस को विशेष महत्त्व नहीं दिया । ग़व्वासी की रस योजना का अध्ययन निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत करना संगत होगा -

1·7 वीर रस

बदीउज्जमाल की दादी शाहर बानो अपने पुत्र शाहपाल इब्न शाह रुख को इस बात के लिए मनाने जाती है कि वह अपनी पुत्री बदीउज्जमाल का विवाह सैफ़ुलमुलूक से करदे । जाते समय शाहर बानो सैफुल मुलूक को एक उद्यान में छोड़ जाती है । सैफुल मुलूक के हाथों दरियाए कुल्ज़ुम के राजा का भाई दैतय, पहले ही, मारा जा चुका था ।

1· सं० राजकिशोर पाण्डेय - अब्बदुद्दीन सिद्दीकी : ग़व्वासी - सैफ़ुलमुलूक व बदीउज्जमाल-पृष्ठ सं० 99-100
2· सं० मीर सआदत अली रज़्वी : ग़व्वासी - तूतीनामा, पृष्ठ सं० 110

दरिया कुलज़ुम के कराजा के सिपाही शाहज़ादे का अपहरण ~~हर~~ कर उसे कुलज़ुम ले जाते हैं । सूचना प्राप्त होने पर शाह पाल क्रोध में आ जाता है । उसे क्रोध इसलिए है कि उसकी अनुमति के बिना कुलज़ुम के राजा ने उसके क्षेत्र से शाहज़ादे को क्यों उठा मंगवाया । शाहपाल अपनी सेना सहित कुलज़ुम की सीमा पर पहुँचता है । ग़व्वासी ने इस अवसर पर वीर-रसात्मक काव्य का सफ़ल परिचय दिया है -

"किये लख़ दन्दे पर जो हर ठार ते
ज़मीं बैस गई थी इसी भार ते
गज़बनाक हो ज्यूं अंगे दल हुए
कलेजे पहाड़ां के फट जल हुए
तुरातो नफ़ीरयां सूं ज्यूं बुरगुमां
हुआ धावरा जा के पड़ आसमां ।"[1]

x x x

"झलक देख बिजलयां सी तलवार ये
उड़े फ़ाख़ते सख़्त संसार के
जो दो राज दो धरते बरहम हुए
गगन सातों हैबत ते दरहम हुए ।"[2]

x x x

"जो दरिया लहू हो उबलने लग्या
गगन उसपे किश्ती हो चलने लग्या
सारा तैरते लहू के सन्दूर ते
जो दिसते अथे बुड़-बुड़े दूर ते ।"[3]

1·8 रौद्र रस

शाह उद्यान से सैफ़ुल मुलूक के, अनुमति बिना, अपहरण की सूचना पाकर शाहपाल इब्ने शाह ~~र~~ लख़ अपने क्रोध पर नियंत्रण नहीं रख सका -

---

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी : ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ सं0 195
2· -वही- पृ सं0 196
3· -वही- 197

"गुसाला हो शमशीर कूँ हात ले
सरब दल कूँ सब अपने संगात ले
एक एक जागे पेते ज्यूँ हिल्या
ज्यूँ असमान बादल के दल सूं चल्या ।"[1]

गुव्वासी ने अन्य मसनवियों में रौद्र रस का प्रयोग नहीं किया है ।

1.9 वीभत्स रस

अपन अभिमान के दौरान सैफुलमुलूक हब्शियों के द्वीप पर बन्दी बना लिया जाता है । सिपाही उसे साथ लेकर अपने राजा के पास जाते हैं । इस अवसर पर गुव्वासी ने कबीले का सरदार का वीभत्स चित्र प्रस्तुत किया है -

"बड़ा भूत कहते सो था आप को
के सारे भूतां केरा बाप को
गया होंट ऊपर का जो एक धीर कूँ
लग्या था पिशानी उसके सीर कूँ
तले का यूँ आया अथा लटक होंट
जो था उसके गुग्यां मने फक सूत ।"[2]
x x x
मसले काले उसके अथे मुँह पर
मक्खियाँ भिन-भिनाती है ज्यूँ गुड़ पर
अंगुठ्यां बदल आपने साज़ के
खुश अंगुल्यां में पहना उसे प्याज़ के ।"[3]

कबीले के सरदार ने भोजनार्थ सैफुलमुलूक को अपनी पुत्री के यहाँ भेजा । वह स्त्री देखने में किसी राक्षसी से कम नहीं थी । इस

---

1. सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दकी : गुव्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं0 191
2. -वही- 75
3. -वही- 75

संदर्भ में ग़व्वासी ने हब्शिन का वीभत्स चित्र प्रस्तुत किया है -

"आँख्याँ डोंग्याँ ज्यूँ खुड़ो सार के
दो दीदे भीतर ज्यूँ पत्थर गार के
चढ़्या होंट उपराल का नाक पर
ठुड़ी पर पड्या है तलेन का उतर
तमाम अंग गोनी केरा टाट ज्यूँ
चिचियाँ दो सीने पर हैं दो माट ज्यूँ
निकल पेट अगे को ज्यूँ आखड़ा
अथा पेट के सख्त पेडू बड़ा
बोंडी खुल रही थी सो ज्यूँ ऊखली
मुसल होके दौड़ी थी रोमावली
लटकती जो चुतड्याँ पे छोटी दिसे
जो ज्यूँ झाड़ का पेड़ मोटी दिसे
सूर सार पिंड्याँ उपर तेज बाल
न थी जग में डायन कोई उसके मिसाल
सड़ी बोई बगलाँ में ते यूँ झरे
जिने बास उसको सुंगे सो मरे
पवन नासिका उसकी टुक बास पाय
तो क्या हल्क में अंतड्याँ न्हास जाय
ज़ंग्याँ में कोई ऐसी काली न थी
हो काली ऐसी खुजाली न थी
अगर लावे जिस ठार मशाल हज़ार
उन आवे तो तैरे पड़े अन्दकार ।"[1]

---

1. सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी ग़व्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं0 77

1·10 भयानक रस

गुव्वासी की मसनवी सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल का नायक अपने अभियान के मध्य तूफ़ान में घिर जाता है । इस भयानक स्थिति का वर्णन गुव्वासी ने निम्न लिखित रूप से किया है -

"भर आया जहाज़ाँ मने आब सब
गँवाता गया माल व असबाब सब
बड़ा धुंद हुआ तफ़रका होलनाक
हुए लोग सई एक तरफ़ से हलाक
उठ्या मौज ज्यूं दो बहती कहीं
चली शाहज़ादे की कश्ती कहीं
हुआ जहाज़ तूफ़ान से चूर-चूर
मलिक होर सवाद पड़े दूर-दूर ।"[1]

कैसरिया द्वीप पर शाहज़ादा स्वयं को एक बड़े पक्षी के पैरों से बाँध लेता है । पक्षी ऊँची उड़ान के पश्चात् एक अत्याधिक बड़े पेड़ पर अपने घोंसले में पहुंचता है ताकि उसके बच्चे सैफुलमुलूक को खा सके । शाहज़ादे को वहाँ पहले से ही पड़ी एक मनुष्य की उधड़ी हुई लाश दिखाई देता है । इससे पूर्व की पक्षी के बच्चे उसे खा जाते अचानक एक बड़ा भयानक अजगर फुंकार मार कर पक्षी के बच्चों को खा लेता है तथा पक्षी को भी अपने मुंह में मरोड़ लेता है । इस अवसर पर गुव्वासी ने भयानक रस का उत्तम सन्नियोजन किया है -

"सो उस फाड़ की पेड़ दौड़ पाताल
सो डाल्याँ अपड़ से उठ्याँ ज्याँ अमाल
उतार उस उपर शाहज़ादे के तई
बच्चयाँ पास अपने चल्या दौड़ वई
अव्वल थे एक आदम को वई मार कर
रख्या था जतन आपने ठार पर

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय : अब्बदुल्दीन सिद्दकी :गुव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं0 71

सो टुकड़े पर उस बाँट भाने लग्या
बच्चाँ तई अपने खिलाने लग्या

देखत शाहज़ादा जो उस फाड़ तल
पड़े सो जहाँ के तहाँ हाड़ गल

एकाएक ऐसे मने एक साँप
बड़ा सारका धड़ जमीं यूँ ले ढाँप

धुलारा उँचाता वहाँ आइया
बच्चाँ कूँ सो खाने के तईं धाइया

चढ़्या फाड़ उपराल वई झाँप मार
सब उसके बच्चाँ को निगल एक बार

लिया उस मुरग को गुण्डी जाय कर
भसन कर सटिया तिल मने खाय कर ।"[1]

1.11 श्रृंगार रस

साहित्य में श्रृंगार रस के दो पक्ष माने गए हैं । एक संयोग तथा दूसरा वियोग अथवा विप्रलम्भ । गव्वासी की मसनवियों में यह दोनों ही पक्ष प्रचुर मात्रा में विद्यमान है । वियोग के साथ संयोग की मात्रा सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल में समान है । परन्तु तूतीनामा तथा मैना सतवन्ती विप्रलम्भ श्रृंगार प्रधान रचनाएँ है । मैना सतवन्ती तो शुद्ध रूप से विप्रलम्भ श्रृंगारात्मक मसनवी है । इसमें दी गई अन्तर्कहानियों में भी संयोग श्रृंगार के छींटे भी दुर्लभ हैं ।

1.11.1 विप्रलम्भ श्रृंगार

गव्वासी ने व्यक्त किया है कि सैफुल मुलूक ज़रीदार कपड़े पर बने चित्र को देखकर मूर्च्छित हो जाता है । वह बदीउज्जमाल के साक्षात

---

1. सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 111-112

दर्शन से पूर्व ही उससे मिलने के लिए तत्पर है । सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल का विप्रलम्भ श्रृंगार ही मसनवी पर सूफ़ी काव्य का आरोपण कर सकता है । सूफ़ी काव्य में विभिन्न संकटों को झेलते हुए प्रिय की प्राप्ति की परिपाटि गव्वासी की मसनवी को सूफ़ी वाद की ओर गतिमान करता है ।

सैफुलमुलूक – बदीउज्जमाल से मिलने के लिये बेचैन है –

"आंखू आंखियां में थे ढलते अथे
नद्यां होके वो धरती चलते अथे
न ज़रा ख़बर कुछ उसे ज़ात की
न ताक़त ज़बां को है कुछ बात की ।"[1]

x x x

"न वो मिलती है ना गुलिस्ताने इरम
यू इस ताईं खोता हूं अपना जनम ।"[2]

मैना सतवन्ती में विरहणी मैना दुःख भरे स्वर में कहती है –

"गया छोड़ हमना हमारा पिया
गवाऊं क्यों कती भी यकेला जिया ।"[3]

x x x

"मेरे पीव उपर जीव यू कुर्बान है
अछे जां उसे हक़ का आमान है ।"[4]

x x x

"मैं औरत हूं उसकी वो मेरा सजन
सलामत रहे मर्द गुलशन चमन ।"[5]

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय – अकबरुद्दीन सिद्दकी : गव्वासी – सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ सं0 48
2· –वही– 110
3· सं0 गुलाम उमर खां : गव्वासी – मैना सतवन्ती – पृष्ठ सं0 133
4· –वही– 136
5· –वही– 136

"बला पीव थी मेरे पड़ों तुज उपर
लड़ो साँप बिच्छू तेरा जीव-जिगर ।"[1]

1·11·2 संयोग श्रृंगार

गव्वासी की मसनवियों में संयोग श्रृंगार की मात्रा सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल" में, उपेक्षाकृत, अधिक है तूती नामा नीति प्रधान काव्य है तथा इसका उद्देश्य कुल्टा स्त्रियों का सुधार है । "मैना सतवन्ती" में श्रृंगार रस का संयोग पक्ष लोरक व मैना के मध्य इसलिये नहीं आया कि मैना का पति लोरक चंदा के उकसाने पर उसके साथ चला गया है । जाने से पूर्व चंदा और लोरक के प्रेम के कुछ चित्र मिलते हैं जिसमें गव्वासी ने संयोग श्रृंगार को आंशिक रूप में प्रस्तुत किया है ।

सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल के मिलन के क्षण हृदय को छू लेते हैं-

"सुमन मद भरी है अदिक नाज़ तन
सहेली कमल यूँ है नाज़ुक बदन
जो वो शहपरी बास आदम की पाई
एकाएक उठी नाज़ सूँ दी जमाई
निहा देखती है जो अंखियाँ पसार
नज़िक आके बैठा है वो दोस्तदार
घूंघट में छुपा मुख वहीं नाज़ सूँ
हलूँ खोल उधर नर्म आवाज़ सूँ
कही यूँ तो वाजिब नहीं है तुजे
जो नज़दीक आकर निहारे मुजे ।" [2]

1· सं० गुलाम उमर खाँ : गव्वासी - मैना सतवन्ती - पृ सं० 142

2· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अब्बरुद्दीन सिद्दीकी - गव्वासी सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 161

सैफुल मूलक उत्तर देता है -

"कि अय मोहिनी बेबदल जग उजाल
जो है नावँ तेरा बदी उज्जमाल
तेरे नावँ पर ये हूँ बलिहार मैं
लहूँ जोव दूँ तुज ऊपर वार मैं
नज़र कर मेरी धीर जो उम्र पाऊँ
देखूँ दोद पर दोद दुक दुःख गवाऊँ ।"[1]

गव्वासी ने "मैना सतवन्ती" में चंदा तथा लोरक के कुछ संयोग पक्ष दर्शाए हैं ।

चंदा लोरक को बुलाती है -

"पड़ो घाट में आ इशारत तूँ धर
बुलाई नजिक उसकूँ ख्याल कर ।"[2]

x x x

"मेरा दिल लग्या तुज सूँ, तू राज है
तुजे सर फ़राज़ी का यू सरताज है ।"[3]

x x x

"ख्वीला तू है जान, जानी निजि
लग्या जोव मेरा कती हूँ तेजु
वो ले माल सारा यहाँ से हल्लूक
हमों होर तुमों मिल को जाएँ कई और
कती हूँ सदा सुख सूँ मिल कर रहना
मैं आशक प्यारी, तूँ मोशू बना ।"[4]

1.
2. सं0 गुलाम उमर खाँ : गव्वासी - मैना सतवन्ती - पृ सं0 124
3. -वही- 124
4. -वही- 124

1•12 हास्य रस

गुव्वासी स्वभाव से बड़ा गंभीर था । उसने अपनी मसनवियों में हास्य रस पर अधिक ध्यान नहीं दिया । उसकी किसी भी मसनवी में हास्य रस प्रत्यक्ष रूप में प्रयुक्त नहीं हुआ । अंतर्कथाओं में भी इसकी मात्रा फुटकर है । मैना सतवन्ती में दूती के प्रत्युत्तर स्वरूप मैना एक कहानी सुनाती है जिसमें एक सिपाही का उपहास प्रस्तुत किया गया है । सिपाही अपने काम से लौट कर आधी रात को घर आता है, अंधेरे में ऊपर के कमरे में रहनेवाली पत्नी उसके बालपकड़ कर ऊपर खींचती है । नीचे के कमरे में रहने वाली पत्नी भी उसी समय उसके पैर पकड़ कर खींचती है । दो पत्नियों वाले सिपाही की दयनीय दशा को गुव्वासी ने हास्य का लक्ष्य बनाया है -

"सोती थी म्हाड़ी तले जो सुन्दर
उठी हड़बड़ाती संचल देखकर
कही मर्द आता है सोकन के पास
पकड़ पाँव जा उसके महकम सरास
बड़ी का जो आवाज़ यू कान में
पड़्या, सो चली दौड़ तोड़ी कने
चला हात बालाँ के तई पेंच भर
लगी खींचने मर्द अपना कक्कर
उपर सूँ कही, सुन यू सोकन मेरी
यते दिन रखी क्या नज़र नईं भरी
कित्ते दिन पिछें आज केता करम
उपर आने दे छोड़री बेशरम
न्हन्नी बोलती, उस न छोड़ूँ उताल
उपर जाए तो पाँव तोडूँ उताल ।"[1]

1• सं0 गुलाम उमर खाँ : गुव्वासी - मैना सतवन्ती - पृ सं0 157

1·13 **करुण रस**

गुव्वासी की "तूतीनामा" में करुण रस अपेक्षाकृत स्थान नहीं पासका । "मैना सतवन्ती" करुण रस प्रधान काव्य कहा जा सकता है । जिसमें मैना को बहुत दुःख सहन करने पड़े । सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल में करुण रस की मात्रा अन्य रसों के साथ संतुलित अनुभव होती है ।

कभी हब्शियों के कैद में सैफुलमुलूक को कष्ट झेलने पड़ते हैं और कहीं राक्षसों के द्वीप में उसके प्राण जोखम में पड़ जाते हैं -

"मालिक ज़ादे के कन ले जावो, कहीं
सुबह 30 के आटा पिसावो कहीं
हुवा शाहज़ाद दुःखो ला इलाज
क्या दिल में मौत अपनी आई है आज
लग्या पीसने आटा लहू आँट कर
चले आए हातां कूँ सब डाट कर
सो खलरी निकल आई दोय हात की
मशक़्क़त लगी दिवस होर रात की ।"[1]

x x x

"गए कपड़े सब आँग के फाट-फाट
परेशानगी हो लग्या वई अवाट
मशक़्क़त लगी दिवस होर रात की
न थी कुछ खबर पाँव होर हात की ।"[2]

x x x

"ज़ुमी पर चल्या न्हासता न्हासता
न था न्हासने बिन कहीं आस्ता ।

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय : अकबरुद्दीन सिद्दकी : गुव्वासी - सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल - पृ सं0 79

2· -वही- पृ सं0 80

जहाँ फिर देखे उस बलायाँ कूँ शाह
पहाड़ दौड़ते है या बादल सियाह ।"[1]

x x x

गया छोड़ हमना हमारा पिया
गमाऊँ क्यों कती भी अकेला जिया
न माँ, भाई बो कोई मिंज सात है
न बन्दी न बरदाना कुई ज़ात है
न दादी, फ़ुप्पी कोई चिचानी मिंजे
न नानी न ख़ाला कहूँ क्या तुजे
न नन्दाँ न भावज, भतीजी न्हन्नी
करी हूँ मेरा दिल में सब सो गुनी ।"[2]

x x x

"सती हिन्दुओं की जले एक दिन
हमारी उमर सारी जलन कठिन
के ऐसे सतियाँ की सो हूँ गर्द में
न को पड़ तूँ मिंज आह के दर्द में ।"[3]

1·14 अद्भुत रस

गव्वासी की प्रथम दो मसनवियों में अद्भुत रस का प्रयोग हुआ है । मैना सतवन्ती की अन्तर्कथाओं में आंशिक रूप से कवि ने इस रस पर ध्यान दिया है । सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल में नायक सैफुलमुलूक विभिन्न स्थलों पर अद्भुत दृश्य देखकर असमंजस में पड़ जाता है । कैसरिया नगर के ~~4~~ उद्यान से चारों द्वारा निकाल दिए जाने पर सैफुल मुलूक को भाग्य ने एक अद्भुत स्थान पर ला छोड़ा । यहाँ अत्यंत ही सुन्दर स्त्रियों

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दकी - गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं0 91
2· सं0 गुलाम उमर खाँ : गव्वासी - मैना सतवन्ती - पृ सं0 133-134
3· -वही- 153

का निवास था । अद्भुत बात यह थी कि उनके पेट में एक छोटा-सा कक्ष बना हुआ था जिसमें उनका कलेजा लटकता हुआ साक्षात दिखाई देता था -

एकस थे अयया एक साहब-ए-जमाल
दुनिया में न थी उनकी सूरत मिसाल
हर एक की पेटां में मेहराब अथा
कलेजा मुअल्लक लटकता अथा ।"[1]

सैफुलमुलूक को भाग्य ने जब सकसारों के द्वीप में पहुँचाया तो उसे वहाँ भी अद्भुत अनुभव हुए । वहाँ के लोगों का मुँह कुत्ते की भाँति तथा शरीर सुअर की तरह था । उनके हाथ-पाँव मनुष्यों जैसे थे परन्तु आवाज़ मुखों की अपेक्षा शरीर से निकलती थी । सैफुल मुलूक को उसी द्वीप के राजा ने विचित्र जानवर समझा -

"सो बादशकल मुह है कुत्ते सार का
बदन उसा लुड़कता सुअर सार का
सो हत-पाँव उनके हैं अदम्यां सार
वले तनमने रास्त बोलें पुकार ।"[2]

सकसारों के हाथ से छूट कर वह दिवालपायों में जा फँसा । दिवालपाय भी अद्भुत थे -

"गले होर हातां में पावां सूं पोच
लगे मारने हात सूं खैंच-खैंच
जो माँदा किए उसको दौड़ाय कर
वहां से ले गए अपने राजे के घर
सो राजे के ज्यूं सामने आइया
देखत शाहज़ादे कूं वो यूं कइया ।

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय : अकबरुद्दीन सिद्दकी : गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ सं0 87

2· -वही-

कि यू जानवर खूब है अज़्म का
तमाशा देखे ल्याव है बज़्म था ।"

देवालपायों से बचता-बचाता वह एक अज्ञात स्थान पर पहुँचा। बड़े वृक्ष पर चढ़ गया । रात में उसने देखा कि पेड़ दीप्तिमान हो रहे हैं और पत्तों को ऊँचा करके हाथों की भाँति बनाकर प्रार्थना कर रहे हैं -

"दुआ में रखे पात यूँ हात कर
उठे रैन सकली इसी बात पर
सो सैफुल मुलूक रैन सकली कटिया
उसी में उजाला रैन का फुटिया ।"[2]

कैसरिया नगर पहुँचने पर सैफुल मुलूक को यह देकर आश्चर्य हुआ कि नगर में बन्दर ही बन्दर रहते हैं परन्तु उनका राजा एक मनुष्य है । यहाँ उसका स्वागत हुआ । बन्दरों के राजा ने उसके लिये कुर्सी मँगाई । बंदर वृत्ताकार रूप में आज्ञा पालन हेतु खड़े हो गए । राजा ने उसका हाल-चाल पूछा

"छबीला जवाँ एक गिचानी सुगड़
खुश उस तख़्त उपराल बैठा है चढ़
सकल बन्दरें दायरा छोड़ कर
खड़े हैं अदब सात हत जोड़ कर ।"[3]

सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल में अद्भुत रस इतनी अधिक मात्रा में है कि पाठक की जिज्ञासा तथा अभिरुचि तीव्र से तीव्रतर होती जाती है । इस मसनवी को हम अद्भुत रस प्रधान रचना भी कह सकते हैं । क्योंकि मसनवी में आदि से अंत तक ग़व्वासी ने अद्भुत वर्णन प्रस्तुत किए हैं ।

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अब्बदुद्दीन सिद्दीकी : ग़व्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 97
2· -वही- 99
3· -वही- 103

1·15 शिल्प

किसी भी रचना की सफलता को सफलता में शिल्प की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । भाषा द्वारा वह चित्रात्मक वर्णन प्रस्तुत करता है और इन वर्णनों के लिए बिंब प्रतीक आदि का प्रयोग कवि को आवश्यकतानुसार करना पड़ता है ।

1·15·1 भाषा

गृव्वासी की भाषा ऐसी साहित्यिक दक्खिनी है जिसमें संस्कृत, हिन्दी, अरबी, फ़ारसी तथा मराठी के साथ-साथ दक्खिनी क्षेत्र की भाषाओं के शब्दों का प्रयोग मिलता है ।

1·15·2 फ़ारसी प्रभाव

गृव्वासी जब हम्द, दुआ, नात, खलीफ़ाओं की प्रशंसा, मीरां मुहीउद्दीन उर्फ़ ख़्वाजा अजमेरी तथा समकालीन बादशाह के सम्बन्ध में प्रशंसात्मक शेर कहता है तो उसकी भाषा पर फ़ारसी शैली का प्रभाव, स्पष्ट रूप से दृष्टि गोचर होता है -

·15·2·1 हम्द

"इलाही जगत का इलाही तो तूं
करन हार जम बादशाही तो तूं
तेरे हुक्म तल नौ गढ़ आसमान के
रैय्यत मलक तेरे फ़ारमान के
भरया ति गढां बीच तारे हशम
करे नौबतां सूं उलंग हम बहम ।"[1]

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय -अकबरुद्दीन सिद्दकी : गृव्वासी - सैफ़ुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० ।

दूसरी मसनवी तूतीनामा में हम्द लिखते समय कवि की भाषा पर फ़ारसी प्रभाव देखा जासकता है -

तेरे राज़ ते कोई आगाह नईं
तसव्वुर कूँ तेरी तरफ़ राह नईं
किया ख़ाक ते आदमी पाक तूँ
करनहार आख़र कूँ फिर खाक तूँ
तुज अगे सके कौन दम मारने
तेरे हुर्फ़ पर या क़लम मारने ।"[1]

मैना सतवन्ती के अन्तर्गत भी हम्द की भाषा में वही बात दिखाई देती है -

"कहूँ हम्द मैं पाक रहमान का
के वो हम्द ज़ेवर है ईमान का
जमा हम्द उसकूँ सजावार है
के जिन जग कू पैदा करन हार है
वो ख़ालिक़ है सब ख़ल्क़ का ख़ास-ो-आम
ओ मालिक अहे मुल्क सब का तमाम ।"[2]

1·15·2·2 दुआ

दुआ की भाषा में ग़व्वासी ने भारतीय गीतात्मक शैली का भी आंशिक रूप से प्रयोग किया है -

"रहीमा सदा तू ग़नी होय रे
ग़नी तुज बग़ैर अज़ नहीं कोय रे
तू मक़बूल है मुक़बिलाँ का सचीं
तू ही नूर रोशन दिलाँ का सचीं

1· सं0 मीर सआदत अली रज़वी : ग़व्वासी - तूतीनामा - पृ सं0 ।

जो कोई ज़िन्दा दिल है तू उनका हयात
जो कोई होटे तुज साथ तूँ उनके सात ।"[1]

तूती नामा में हम्द के पश्चात् ग़व्वासी ने दुआ नहीं लिखो । सीधे नात लिखा है । इसी प्रकार मैना सतवन्ती में भी हम्द के बाद सीधे नात कह कर ग़व्वासी काव्य की अन्य औपचारिकताएँ पूरी करता है ।

नात

हज़रत मुहम्मद की प्रशंसा में लिखी गई कविता को नात कहते हैं । ग़व्वासी ने अपनी तीनों मसनवियों में "नात" लिखी है । नात की भाषा पर फ़ारसी प्रभाव स्पष्ट रूप से अनुभव किया जा सकता है ।

"सदा तूँ मुहम्मद सदा मुस्तफ़ा।
सदा तूँ है अहमद सदा मुरतुज़ा
तू दताहा तूँ यासीन तूँ अबतही
तूँ उम्मी तू मक्की तू मुरसिल सही
तू अव्वल तूँ आख़र तू ही है अमीर
तू ज़ाहिर तूँ बातिन नबी बे नज़ीर ।"[2]

तूतीनामा की नात में ग़व्वासी ने हिन्दी शब्दों का प्रयोग किया है -

"निराधार पापी मेरे सार के
हैं उम्मीदवार उसके दरबार के
रसूल-ए-अदब होर अजम आज वो

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अब्दुद्दीन सिद्दीकी : ग़व्वासी - सैफ़ुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ० सं० 3
2· -वही- पृ० सं० 5

रसूलों के सब शीश का ताज वो
वह दीन का कान वाला किया
भंजन कुफ़्र कूँ कर उजाला किया ।"[1]

मैना सतवन्ती में प्रस्तुत नात की भाषा फ़ारसी शैली में लिखी गई है -

मुहम्मद नबी ख़ातिमुल अम्बिया
शर्फ़ जिसते हक़ जग में हमना दिया
मुनव्वर किया जग कूँ उस नूर सूँ
दिया रोशनी सब कूँ उस नूर सूँ
जो कोई रब कूँ माने, न माने रसूल
नहीं दोस्त हक़ का न किस कन कुबूल ।"[2]

1.15.2.3 खलीफ़ाओं की प्रशंसा

ग़व्वासी ने अपनी पहली मसनवी में अली की प्रशंसा की है । अन्य तीन खलीफ़ाओं के बारे में वह चुप है । हज़रत अली की प्रशंसा करते समय ग़व्वासी की भाषा पर फ़ारसी तत्वों का अधिक प्रभाव नहीं दिखाई देता -

"पहाड़ाँ तेरे दास कहवादें सब
"चल आवे" कहे तूँ तो चल आवें सब
दिखावे जलालत के जो धात तूँ
मेरे क्या घड़ी में समन्द बात तूँ

---

1. सं0 मीर सआदत अली रज़्वी : ग़व्वासी - तूतीनामा - पृ सं0 4
2. सं0 गुलाम उमर खाँ : ग़व्वासी - मैना सतवन्ती - पृष्ठ सं0 120

तिल उतना ग़ज़ब कर जो दूँ दूर होय
मंडोलो नो अंबर की पट चूर होय ।"[1]

गव्वासी ने तूती नामा में नात के पश्चात किसी ख़लीफ़ा अथवा मीराँ मुहीउद्दीन के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा । नात के पश्चात वह बादशाह अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा करता है ।

मैना सतवन्ती में गव्वासी ने क्रम से चारों ख़लीफ़ाओं की प्रशंसा की है ।

"इमाम है अबुबक्र ईमान के
ख़लीफ़-ए-नबी बाद इस्लाम के
उमर के अदल का रह्या है निशाँ
फ़ज़ल जिस अगे बदल नौशीरवाँ ।"
मुनव्वर मुकम्मिल थे उस्मान ज़ात
हया के अथे मोहराँ जिसके हात
जो शेरां में है शेर हज़रत अली
उन्नू की शुजाअत की है खलबली ।"[2]

"मैना सतवन्ती" में ख़लीफ़ाओं की प्रशंसा के बाद गव्वासी ने हसन और हुसैन को शहीदों के रूप में प्रस्तुत किया है । पूर्व की दो मसनवियों में गव्वासी ने हसन-हुसैन के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा -

"शहीदां में सरवर हुसैन-ओ-हसन
हसन बाद अज़ुवाँ मीरमीराँ रतन ।"[3]

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दकी : गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 7
2· सं० गुलाम उमर खाँ : गव्वासी - मैना सतवन्ती - पृष्ठ सं० 121
3· -वही- 121

1·15·2·4 मीराँ मुहीउद्दीन के सम्बन्ध में

मीराँ मुहीउद्दीन उर्फ़ ख्वाजा अजमेरी से गव्वासी को बहुत अक़ीदत थी । इनके सम्बन्ध में लिखी गई पंक्तियों पर फ़ारसी भाषा का प्रभाव स्पष्ट रूप से अनुभव किया जा सकता है -

"हिमायत जो मुज बस अहे तीन का
मुहम्मद, अली होर मुहीउद्दीन का
के यू तीन सो एक हैं, दुई नई
दो देखे सो अव्वल बिना कोई नई
वलों में वली सो महीउद्दीन हैं
मुकर्रब वली सो मुहीउद्दीन है ।"[1]

तूतीनामा में गव्वासी ने परम्परा के विरुद्ध मीराँ मुहीउद्दीन के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा ।

मसनवी "मैना सतवन्ती" में गव्वासी ने मीरा मुहीउद्दीन उर्फ़ ख्वाज़ा बन्दे नवाज़ की प्रशंसा में जिस भाषा का प्रयोग किया है वह फ़ारसी मिश्रित भाषा है -

"मुहीउद्दीन माशूक़ जिसका है नाउँ
वलियाँ जिस क़दम का ले कर को ठाँव
मुहीउद्दीन वली पीर को बोल आसना
सचे दस्तगीर को सबूँ को पनाह
मदद मँग को उसते किया इब्तेदा
सुनेंगे सो बोलेंगे रहमत सदा ।"[2]

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अक्बरुद्दीन सिद्दीक़ी : गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्ज़माल - पृ सं० 10

2· सं० गुलाम उमर खाँ : गव्वासी - मैना सतवन्ती - पृष्ठ सं० 122

1·15·2·5 अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा

गव्वासी ने अपनी प्रथम दो मसनवियों में अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा की है। शाह की प्रशंसा के लिए उन्होंने हिन्दी-फ़ारसी शैली का प्रयोग किया है। "सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल" में गव्वासी शाह की प्रशंसा इस प्रकार करता है -

"सो सुल्तान मुहम्मद कुत्बशाह गम्भीर
जग आधार है होर जग दस्तगीर
चंदा चौदवाँ खुसरवी बुर्ज का
अमोलक रतन हुस्न के दुर्ज का
सगल पादशाहाँ में उसका है नाँव
उसी कुत्ब का कुत्ब तारा है ठाँव।"[1]

तूतीनामा में भी अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा के अवसर पर हिन्दी-फ़ारसी का सम्मोहक सम्मिश्रण कवि की भाषा को सौंदर्य प्रदान करता है -

"महाराज सुल्तान अब्दुल्लाह नावँ
सुरय्या के तारक पे उसका है पावँ
कहें कुदसियाँ साहब-ए-सदर उसे
के हर शब सो है ज्यूँ शब-ए-कद्र उसे
शराफ़त में गुरु उस के न आलैन का
है सुरमा चन्दर-सूर के नयन का।"[2]

मैना सतवन्ती में गव्वासी ने अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा में कुछ नहीं लिखा है -

---

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 11

2· सं० मीर सआदत अली रज़्वी : गव्वासी - तूतीनामा - पृ सं० 6

1·15·3 सरल अभिव्यक्ति

गव्वासी की काव्याभिव्यक्ति सरल एवं अभिधात्मक भी है -

अजब मोहनी है वो नामां जमाल
सो है वो चंचल-दहन बदीउज्जमाल

मेरा ध्यान अब छोड़ दे नार तूं
मेरा दिल नहीं है किस उपर नार तूं ।"[1]

मसनवी सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल में शाहपाल इब्ने शाह रुख के मुख से गव्वासी ने हाजिब द्वारा शाह कुल्जुम को जो संदेश भिजवाया है भाषा की दृष्टि से दक्खिनी के बहुत कम कवि इस प्रकार के प्रवाह को बनाए रखने में सफल हुए हैं -

"कि तुम जो गुलिस्तान-ए-इरम जिसे
पकड़ लयाये हैं भेज देवो उसे
जो वो आदमी है मेरे प्यार का
नहीं कोई दुनियां में उस नार का
मुहब्बत सूं देवेंगे तो जाऊंगा
अगर नईं तो तुमनों पे चढ़ आऊंगा ।[1]

वईं एक धरते दरियाये कुल्जुम कूं जाल
करूंगा तुमन सब के तईं पायमाल ।"[2]

1·15·4 खड़ी बोली हिन्दी का रूप

तूती नामा की निम्नपंक्तियों में गव्वासी ने खड़ी बोली हिन्दी के तत्कालीन रूप में नायिका का वर्णन किया है । यह नायिका

1· सं० डॉ० रामकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गव्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 89
2· -वही- -वही-

सज-धज कर पर-पुरुष के पास जाने हेतु शुक से आज्ञा माँगती है -

सो ओ सरु-कद नार सुन्दर सो धन
जड़त आवरण सात सिंगार तन
वही धक-धकाते झरोने सेती
चली रावी कन जलते सोने सेती
ज़बाँ खोल उयूँ बोल उठी इस तरीक
के अय मेरे मन के मुआफ़िक रफ़ीक़
न जानूँ के क्यों है मेरे भाग आज
लगी है सोने यूँ विरह आग आज ।"[1]

गुव्वासी की हिन्दी भाषा का एक अन्य रूप मैना सतवन्ती में प्राप्त होता है । राजा बालाकुअर दूती से अनुरोध करता है कि वह किसी प्रकार मैना को उस तक पहुँचाये -

"क्या, ल्या के मैना यूँ तूँ दे मिजे
बहुत समाल बख़्शिश करूँगा तुजे
ओ महबूब अचपल अजब नार है
उसी पर मेरा यू बड़ा प्यार है ।"[2]

1.15.5 वर्णनात्मकता

भाषा की अभिव्यक्ति वचन के माध्यम से होती है । वचन-महिमा का बखान करते हुए गुव्वासी ने वर्णनात्मक शैली को अपनाया है -

"वचन ते सवालाँ जवाबाँ होवें
वचन ते हिसावाँ किताबाँ होवें

वचन ते मुरादाँ जगत पावते
वचन ते मुलुक होर गढ़ा आवते

---

1. सं० मीर सआदत अली रज़्वी : गुव्वासी - तूतीनामा - पृष्ठ सं० 25
2. -वही-

वचन ते भले हौर बुरे काम सब
हर एकस कूँ होते अहैं फ़ाम सब
वचन तेज होवे सदा सुलहो जंग
वचन तेच हासिल होवे नावँ व नंग
वचन थे हुई फ़ाम नेकी बदी
वचन थे हुवे मुन्तही मुब्तदी
वचन थे दिलाँ हाथ लेते अहैं
वचन थे किते जीवन देते अहैं
वचन थे चले दीन व दुनिया तमाम
वचन के हैं मुहताज सब ख़ास-ो-आम
वचन थे धराँ होवते हैं खड़े
वचन तेच होते हैं लोगाँ बड़े
वचन मोती है जीव के कान के
वचन पर थे वारें रतन खान के
वचन थी यू फलकार नौ भान में
सितारा नहीं है किस आसमान में
वचन ग़ैब के हैं अजब जौहराँ
वचन के सो हैं जोहरी शायराँ
वचन के समन्द का हूँ ग़व्वास मैं
धरन हार हूँ मोतियाँ ख़ास में ।"[1]

ग़व्वासी की भाषा में वर्णनात्मक शैली के प्रयोग का एक अन्य उदाहरण इस प्रकार है -

किते मशारुयाँ कूँ खुश नाज़ के
किते मुतरिबाना खुश आवाज़ के

1· सं0 डॉ0 राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी : ग़व्वासी - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल, पृष्ठ सं0 17

कितेक खुश ज़राफ़्त के निर्मल ज़रीफ़
किते क बेबदल किस्मा खाना हरीफ़
कितेक खण्ड्यां अगरवानी शराब
कितेक जिन्स के न्यामतां बे हिसाब
कितेक खूब तोहफ़े कितेक करोड़ माल
कितेक ज़ात तेज़ो पवन के मिसाल
कितेक फ़ौज लश्कर केरे बेनज़ीर
कितेक तेले सौदागरां के गंभीर
कितेक जिन्स के खूब बांदी गुलाम
अवे हो बज़िद मुस्तइद कर तमाम
कितेक जिन्स का मूप कर बेशुमार
दो सारयां कूं तरतीब सब एक बार
हर एक काम पर शह अवे हो ~~बज़~~ बज़िद
जो कुच करने था का था किया मुस्तइद
समज धात इस दफ़ा देर का
खुदा ते मदद मंगले ख़ैर का
दे साअद कूं सफ़लमुलूक के दुबाल
खाना किया होर हुवा वई निढाल ।

1·15·6 चित्रात्मकता

गव्वासी के काव्य की चित्रात्मक शैली का एक उदाहरण निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत करना संगत होगा -

अजब रात निर्मल भी उस दिन की रात
झमकते थे नूरां में लख धात-धात

1· सं० डॉ० राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीकी - गव्वासी सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल - पृ सं० 65

निकल आय कर चाँद तारयाँ सीते
झलकता अथा जगमारयाँ सीते
नोछल चंदना सब में पड़ा अथा
तो ज्यूँ दूध फेरा वो दरिया अथा
बने बन पवन सब मकाती अथे
चमन दर चमन लकलकाती अथे
खुश ऐसी निछल चंदनी देख रात
ले सआद कूँ सैफ़ुलमुलूक अप संगात
सुराही-ओ-प्याले की मजलिस भर आप
लगे ज़ौक सूँ पीने भर-भर शराब
निकल गायनहारे सो गाने लगे
रिझाने के बाजे बजाने लगे ।"[1]

1·15·7 बिंबात्मकता

बिम्बात्मकता की दृष्टि से गव्वासी की मसनवी तूतीनामा की निम्नलिखित पंक्तियाँ प्रस्तुत करना अनुचित न होगा -

"गगन-बनते पड़ ज्यूँ गुल आफताब
ल्या आपसीं भुई में मग़रिब की दाब
कँवल चाँद का निर्मला बे बदल
चमन ते जो मग़रिब ते आया निकल
शगुफ्ता हो तब बुलबुलो ओ निगार
लटकती चली छब सूँ रावीं के ठार ।"[2]

सूरज फ़िरौन की भाँति अस्तचल की नील नदी में डूब गया । चाँद मूसा की भाँति तेजस्वी हो दौड़ता हुआ पूरब दिशा रूपी तूर से निकल आया -

---

1· सं0 मीर सआदत अली रज़वी : गव्वासी - सैफुलमुलूक व बदीउज्जमाल पृ सं0 34
2· -वही- 34

"जो फ़िरौन खुर्शीद का छोड शर्क़
हुआ गुर्ब आब में जाको गर्क़
सो महताब मूसा समान दौरते
ज्यूँ आया निकल शर्क़ के तूर ते ।"[1]

सूर्यास्त के समय सूर्य स्वर्ण पक्षी की भाँति अपनी सैर समाप्त करके पश्चिम दिशा के नीविड़ में जाधुसा तथा बगला रूपी उजला चन्द्रमा सफ़ेद उड़ान रूपी अंचल बाँध कर उड़ने लगा ।

"सोने का पंखी सूर ज्यूँ सैर कर
चल्या गुर्ब के आशियाने भीतर
बगला रूपे सारका साफ़ चाँद
क्या देख परवाज़ अंचल सरकूँ बाँद ।"[2]

1• सं० मीरसआदत अली रज़वी : गुल्वाली - सैफुल मुलूक व बदीउज्जमाल पृ सं० 91
2• सं० मीर सआदत अली रज़्वी - गुव्वाली - तूतीनामा - पृ सं० 119

चतुर्थ अध्याय

दक्खिनी ग़ज़ल की परम्परा एवं गवासी का ग़ज़लिया काव्य

1· ग़ज़ल का उद्भव और विकास तथा अर्थ एवं विषय

1·1 ग़ज़ल से अभिप्राय

1·2 ग़ज़ल का विषय

1·3 ग़ज़ल का शिल्प विधान

2· दक्खिनी ग़ज़ल की परम्परा : गव्वासी तक

2·1 मुश्ताक़

2·2 लुत्फी

2·3 फेरोज़

2·4 महमूद

2·5 मुल्ला ख़्याली

2·6 मुहम्मद कुली कुत्बशाह

2·7 मुल्ला असदुल्ला वजही

3· गव्वासी की ग़ज़लें - विविध परिप्रेक्ष्य

3·1 रहस्यवादी भावना

3·1·1 साईं

3·2 विरह - वर्णन

3·3 प्रेमाभिव्यक्ति

3·4 नायिका - सौंदर्य : नख -शिख वर्णन

3·4·1 नयन

3·4·2 केश

3·4·3 दाँत

3·5 मांसलता

3·6 गर्व

3·7 विनम्रता

3·8 नैतिक मूल्य

3·9 जीवन दर्शन

चतुर्थ अध्याय

दक्खिनी ग़ज़ल की परम्परा एवं गवासी का ग़ज़लिया काव्य

1. ग़ज़ल का उद्‌भव और विकास तथा अर्थ एवं विषय

काव्य-विधा "ग़ज़ल" एशिया अथवा पूरब और पूरब के भी कुछ विशेष देशों से जुड़ी हुई है । अपना स्वरूप तो इसने ईरान में बनाया था किन्तु क़सीदे की शक्ल में "ग़ज़ल" जैसा अन्दाज़ अरब में ईरान से भी पहले मिल जाता है । अरब में, यूँ तो, "ग़ज़ल" ने कोई परिपक्वता प्राप्त नहीं की । परन्तु इसके विषय क़सीदे में प्रयुक्त होते रहे तथा विभिन्न शाइरों ने इसमें ग़ज़ल की सी बात पैदा भी कर दी । इसका स्थाई रूप ईरान में बना ।

1·1 ग़ज़ल से अभिप्राय

"ग़ज़ल" शब्द अरबी से लिया गया है। अरबी में लालित्य के लिए इसका प्रयोग हुआ है। अर्थात् "ग़ज़ल" का सम्बन्ध (अरबी में) राग एवं सौंदर्य से है। कालान्तर में अरबी शब्द "ग़ज़ल" की व्याख्या काव्य-मूल्यों के आधार पर, फ़ारसी में तनिक अर्थ परिवर्तन सहित प्रस्तुत की गई। अतः अब तक ग़ज़ल की जितनी भी प्राचीन व्याख्याएँ प्राप्त होती हैं वे सब की सब फ़ारसी पर निर्भर हैं।

प्राचीन ईरानी साहित्यकारों की जो पुस्तकें सुरक्षित रह कर हम तक पहुँची हैं उनमें सबसे प्राचीन पुस्तक जिसमें ग़ज़ल की परिभाषा मिलती है, रशीद उद्दीन "वतवात" की पुस्तक "हदाएकुस्सहर फ़िदाकाए-कुश्शेर" है। यह कृति आठ सौ वर्ष से भी अधिक प्राचीन है तथा इसका रचना काल सन् 550 हिज्री के आसपास माना जाता है। रशीदउद्दीन मुहम्मद बिन अब्दुल जलील बल्ख़ी, उपनाम "वतवात" सन् 480 हिज्री के आसपास "बल्ख़" में उत्पन्न हुआ। वह ईरान के "ख्वारज़शाहियों" का दरबारी कवि था और ख्वाजज़ शाही ख़ानदान के बादशाहों "अत्ज़ार-सलान" तथा "तुकश" के दरबार में था। इसने "तुकश" के राज्याभिषेक के अवसर पर एक रुबाई भी कही थी। परन्तु इसे "ख्वारज़्म" के बादशाह "अत्सज़" (सन् 521-551) हिज्री के काल में विशेष ख्याति प्राप्त हुई। इसकी गणना उक्त बादशाह के वरिष्ठ सामन्तों में होती थी। कवि जीवन भर बादशाह "अत्सज़" के पास रहा अतः वह स्वयं कहता है -

"सी साल शुद के बन्दह ब सफ़ न्आल दर
बूदस्त मदहख्वाँ व तोबर तख़्त मदहख्वाँ।"[1]

1· डॉ० रजा ज़ादह शफ़ाक़ : तारीख़ -ए- अदबियात -ए- ईरान, सिलसिला मत्बूआत नुदवतुलमुसन्निफ़ीन, अनुवादक : सय्यद मुबरज़ुद्दीन रफ़अत, -पृ सं0 232

इनके एक अध्याय "वतवात मुस्तलहात -ए- शोअरा" के अंतर्गत "तश्बीब", "नसीब" तथा "ग़ज़ल" को क्रमशः परस्पर पर्यायवाची माना गया है । "ग़ज़ल" के आलोचक प्रो० सय्यद मसूद हसन "अदीब" ने इस संबंध में निम्न उद्धरण प्रस्तुत किया है -

"तश्बीब सनत -ए- हाल -ए- माशूक़ व
हाल -ए- ख़ुवेश दर -ए- इश्क़-ो-गुफ़्तन
बाशद । व ई रा नसीब व ग़ज़ल नेज़
ख़ुवान्द । अमा मशहूर मुस्तअमल आँस्त-ए
दरमियान मर्दम के सिफ़्त हर्ज कन्द दर
अव्वल शेर व हर हाले राके शरह दहन्द
अलमदह ममदूह आँ रा तश्बीब ख़ुवान्द ।"[1]

अर्थात् माशूक़ का हाल और उसके इश्क़ में अपनी मनोदशा को व्यक्त करना "तश्बीब" है । परन्तु प्रचलित मूल्यों के आधार पर जिस नज़्म के प्रथम शेर में परेशानी की बात कही जाय और फिर प्रेम-पात्र की प्रशंसा को छोड़कर मनःस्थिति को व्यक्त किया जाय "तश्बीब" कहते हैं । इसी को "नसीब" तथा "ग़ज़ल" भी कहते हैं । अतः प्राचीन ईरानी काव्य परम्परा में "ग़ज़ल" के अन्तर्गत "मदह -ए- ममदूह" (प्रिय-प्रशंसा) के अतिरिक्त बहुत कुछ कहने की स्वतंत्रता विद्यमान थी ।

रशीद उद्दीन "वतवात" की रचना "हदा -ए- कुस्सहर" के क्रमशः साठ-सत्तर वर्ष पश्चात् शम्सुद्दीन मुहम्मद बिन क़ैस "राज़ी" ने अपनी पुस्तक "अल-मुअजम फ़ी मुअय्यिर अश्आर -उल-अजम" लिखी । इसमें "ग़ज़ल" के सम्बन्ध में विचार किया गया -

"ग़ज़ल दर अस्ल लुग़त हदीस-ए-ज़नाँ व
सिफ़्त -ए- इश्क़ बाज़ी बा ईशाँ व तहालक

1· प्रो० सय्यद मसूद हसन अदीब, पत्रिका : निगार, फरवरी, 1942 अंक, लेख : सिन्फ़ -ए- ग़ज़ल पर एक तहक़ीकी नज़र, पृष्ठ - 20·

दर दोस्ती ई शाँ अस्त । व बाज़े अहले म्आना
फ़र्क नहादा अन्द म्यान नसीब व ग़ज़ल ।
व बेश्तर शोअरा -ए- मोअल्लक़ ज़िक्र -ए- जमाल ।
म्आशूक़ व वस्फ़ -ए- अहवाल इश्क़ व लक़ाबी
रा ग़ज़ल मी ख्वान्द वा ग़ज़ाए के मुक़द्दमा
मदह बा शरह हाल -ए- दीगर बा शद आँ रा
नसीब गोयन्द ।"[1]

अर्थात् "ग़ज़ल" शब्द का अर्थ है स्त्रियों का ज़िक्र करना, उनके इश्क़ का दम भरना एवं उनके प्रेम में मरना । कुछ विद्वान "नसीब" और "ग़ज़ल" में भेद मानते हैं । अधिकांश उच्च कोटि के कवि एवं साहित्यकार प्रिय सौंदर्य के ज़िक्र, इश्क में उद्छद मनः स्थिति की व्याख्या तथा पारस्परिक प्रेम की काव्यमय अभिव्यक्ति को ग़ज़ल कहते हैं ।

उन ग़ज़लों को जिनमें प्रेम-व्यापार के अतिरिक्त कोई अन्य विवरण व्यक्त किया जाय अथवा जो किसी की स्तुति की भूमिका हो "नसीब" कहते हैं । इससे रशीद "वतवात" के कथन को समर्थन प्राप्त होता है तथा इतना और ज्ञात हो जाता है कि तत्कालीन साहित्य में, विषय की दृष्टि से, "ग़ज़ल" और "नसीब" में अन्तर माना जाता था । परंतु फिर भी "नसीब" को "ग़ज़ल" का ही एक रूप मान लिया गया था ।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि काव्य-विधा "ग़ज़ल" की कोई तकनीकी व्याख्या अरबी में प्रायः विद्यमान नहीं थी । इस दृष्टि से "ग़ज़ल" और "मुतालिय -ए- ग़ज़ल" के लेखक डॉ० इबादत बरेलवी का निम्नलिखित कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

1• प्रो० सय्यद मसूद हसन अदीब, पत्रिका : निगार, फ़रवरी, 1942 अंक, लेख : "सिन्फ़ -ए- ग़ज़ल पर एक तहक़ीकी नज़र" पृष्ठ सं० 21•

"इसका नाम ही ग़ज़ल इसलिए पड़ा कि इसमें प्रेम और उसकी विभिन्न अवस्थाओं को प्रस्तुत किया जाता था । "ग़ज़ल" अरबी भाषा का शब्द है और इसका अर्थ है - स्त्रियों अथवा स्त्रियों के बारे में प्रेम सम्बन्धी बाते करना । परन्तु इस विधा के लिये यह तकनीकी व्याख्या अरबी में विद्यमान नहीं थी । "ग़ज़ल" शब्द की यह व्याख्या फ़ारसी में प्रचलित हुई ।"[1]

फ़ारसी में ग़ज़ल कहने का प्रचलन एक सहस्र वर्ष से भी अधिक प्राचीन है । भारत में ग़ज़ल का इतिहास लगभग चार सौ वर्ष पुराना है । अतः जिस काव्य-विधा के पास हज़ार डेढ हज़ार साल प्राचीन परंपरा विद्यान हो और जिससे प्रत्येक युग में सभी साहित्य-मर्मज्ञ रुचि रखते हों उसके महत्त्व से इन्कार नहीं किया जा सकता ।

प्रारंभ में ईरानी साहित्य अथवा फ़ारसी साहित्य भी अरबों के साहित्य से अछूता न रह सका । अतः ईरान में भी अरबों के प्रभाव के फलस्वरूप काफ़ी लम्बे समय तक क़सीदों का प्रचलन रहा और इन्हीं क़सीदों में फ़ारसी शाइर "ग़ज़ल" के काव्य विषयों को प्रस्तुत करते रहे ।

फ़ारसी में पहली बार शाइर "रोदकी" ने उन काव्य-विषयों को, जो कि बाद में "ग़ज़ल" से सम्बद्ध हो गए, पृथक करके "ग़ज़ल" को एक स्थाई विधा के रूप में प्रतिस्थापित किया । "रोदकी" के प्रयत्नोंस्वरूप ही, क्रमशः "ग़ज़ल" की विकास-यात्रा का क्रम आरम्भ हुआ जो शताब्दियों को पार करता हुआ आज तक जारी है । "ग़ज़ल" की इस विकास यात्रा में सर्वप्रथम फ़ारसी के बड़े-बड़े कवि शामिल हुए और उन्होंने भाव-मय - कलात्मक शिल्प एवं गूढ़ चिंतन द्वारा ग़ज़ल को चरम उत्कर्ष तक पहुंचा दिया ।

ग़ज़ल के एक विख्यात समालोचक ने "रोदकी" को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए लिखा है -

---

1. डॉ० इबादत बरेलवी : ग़ज़ल और मुतालिय -ए- ग़ज़ल, पृष्ठ सं0 115

"रोदकी" ने जिस काव्य-विधा ग़ज़ल की बुनियाद रखी उसका विषय उस समय बहुत सीमित था । इश्क़-ो-आशिक़ी के विषय के अतिरिक्त न तो उस समय रोदकी ने किसी अन्य विषय को अपनाया और न एक लम्बे समय तक उसके अतिरिक्त किसी अन्य ने दूसरे विषयों पर ध्यान दिया । परिणाम यह निकला कि ग़ज़ल काफ़ी समय तक प्रेम और उसकी विभिन्न दशाओं को प्रस्तुत करती रही ।"[1]

"ग़ज़ल" को वास्तविक एवं पूर्ण अर्थों में "ग़ज़ल" बनाने में जिन फ़ारसी कवियों ने योगदान दिया, उनमें सनाई, ओहदी, मुराग़ी, फरीदोद्दीन अत्तार, मौलाना रोम, इराक़ी, सओदी, खुसरो, हसन, सुलेमान, ख्वाजा, हाफ़िज़, फ़ग़ानी, शफ़ाई, अरफ़ी, नज़ीरी, साएब, बहशी, यज़दी, ज़ुहूरी, जलाल, असीर तथा तालिब आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं । केवल यही नहीं इनके अतिरिक्त असंख्य फ़ारसी कवि ऐसे भी हुए जिनका ग़ज़ल-साहित्य अभी शोधकर्ताओं की प्रतीक्षा कर रहा है ।

फ़ारसी की सुदीर्घ ग़ज़ल-परम्परा ने भारत में ग़ज़ल-साहित्य की सृष्टि के लिए पृष्ठभूमि तय्यार की । गेय होने के कारण कुछ आलोचक ग़ज़ल को यूनानी काव्य-विधा "लीरिक" से भी जोड़ते हैं । "लीरिक" ने फ़्रान्सिसी तथा अंग्रेज़ी कविता पर अपना विशेष प्रभाव छोड़ा है । डा० आबेद हुसैन का मत है -

"ग़ज़ल वास्तव में गीति-काव्य है जिसका नाम यूनानियों ने "लीरिक" रखा था । गीति काव्य का यह रूप अरबी कविता में उपजा । फिर फ़ारसी तथा उर्दू इ शाइरी में पल्लवित हुआ ।"[2]

योरोपीय काव्य-विधा "लीरिक" की अपेक्षा "सॉनिट" अपेक्षाकृत "ग़ज़ल" की सापेक्षता की प्रतिवादी हो सकती है । वैसे न "लिरिक" और न "सॉनिट" इनमें से कोई भी "ग़ज़ल" कहलाने की दावेदार

---

xध 1• डा० इबादत बरेलवी : ग़ज़ल और मुतालिय -ए- ग़ज़ल, पृष्ठ सं0 115

2• डा० आबेद हुसैन , पत्रिका : ख़ातून -ए- दकन, नवंबर - दिसंबर, 1965, लेख : ग़ज़ल का मुस्तक़्बिल, पृष्ठ 18-19

नहीं हो सकती । यह एक भिन्न बात है कि इन तीनों में भावात्मक तालमेल के चिह्न आंशिक रूप में अवश्य विद्यमान है । परन्तु "फ़ार्म" अथवा "रूप" की दृष्टि से तीनों का अस्तित्व अपने आप में स्वतंत्र है । कलात्मक दृष्टि से "ग़ज़ल" एक अनुपमेय काव्य-विधा है । "ग़ज़ल" में ध्वन्यात्मक लय-खण्डों का जो शास्त्रीय निर्वाह प्राप्त होता है वह "ग़ज़ल" की मौलिकता का प्रहरी है । ग़ज़ल को भावात्मक कविता के अन्तर्गत भी स्वीकार किया गया है -

"ग़ज़ल का विकास भावात्मक कविता के रूप में हुआ । ग़ज़ल का मुख्य विषय प्रेम है ।"[1]

-यथा-

"मुहम्मद कुली कुत्बशाह, अब्दुल्लाह कुत्बशाह, गव्वासी और अली आदिल शाह (द्वितीय) ने भाव-कविता के विकास में महत्त्वपूर्ण योग ऐसे समय दिया था, जब आख्यानक काव्य लिखने की प्रवृत्ति प्रबल थी ।"[2]

जिस समय गोलकुण्डा पर कुत्बशाही वंश के सुल्तान शासन कर रहे थे उस समय उत्तर भारत में मुग़लों का साम्राज्य बड़े ज़ोरों पर चल रहा था । इतिहासकार बदायूनी की ऐतिहासिक कृति "मुन्तख़बुत्तवारीख़" के अनुसार सम्राट अकबर के राजदरबार में 69 अनुसंधाता, 15 दार्शनिक तथा चिकित्सक एवं 167 कवि गण थे । इन कवियों में से अधिकांश ईरानी थे । इसके अतिरिक्त नूरजहां का पिता ईरानी होने के कारण तथा प्रशासन में नूरजहां के प्रभाव के फलस्वरूप जहांगीर का झुकाव ईरानी भाषा तथा साहित्य की ओर अधिक रहा । कालान्तर में शाहजहां के शासन काल में फ़ारसी कवियों अबुतालिब कलीम, साएब तब्रीज़ी आदि को अभूतपूर्व आदर एवं सम्मान मिला । इससे पूर्व ही अमीर खुसरो, हसन तथा बाजन आदि की ग़ज़लों का चर्चा ईरान तक पहुंच चुका था । इस सम्बन्ध में शिब्ली न्अोमानी का प्रस्तुत कथन दृष्टव्य है -

---

1. डॉ० श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिन्दी का साहित्य, पृष्ठ - 190
2. डॉ० श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिन्दी का साहित्य, पृष्ठ - 384

"विदेश से भारत आये साहित्य प्रेमी ग़ज़ल के स्वर को पहचानते थे । भारत के हिन्दु-मुसलमान साहित्य प्रेमी, जो फ़ारसी से अनभ्यज्ञ न थे, ग़ज़ल के सम्पर्क में आए । अमीर खुसरो और हसन देहलवी जैसे भारत के कवियों की ख्याति ईरान तक पहुँची । उर्फ़ी और नज़ीरी आदि विदेशी कवियों ने भारत आकर ग़ज़ल के विकास में पर्याप्त योगदान दिया ।"[1]

मध्य युग के प्रारम्भ से ही भारत में उत्तर तथा दक्षिण का जो धार्मिक, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक आदान प्रदान हुआ है तथा इस प्रक्रिया ने जन जीवन को जो मूल्य दिये हैं उनके कारण भी ग़ज़ल के परिष्करण को रचनात्मक परिवेश मिला । मनुष्य के उद्योग सुख, आनन्द तथा शान्ति प्राप्त करने के लिए होते हैं । अतः राग-विराग मानव जीवन के शाश्वत मूल्य हैं । ग़ज़ल की लोकप्रियता का कारण उसके राग में निहित सुख-दःख भी है ।

1·2 ग़ज़ल का विषय

ग़ज़ल के विषय पर विचार करना जितना सरल है उतना ही कठिन भी है क्यों कि यह विधा विभिन्न भाषाओं और देशों की यात्रा करती हुई अपने जीवन के क्रमशः डेढ़ हज़ार वर्ष पूरे कर रही है । प्रश्न आता है कि ऐसी कौनसी विशेष बात है जो ग़ज़ल को शाश्वत जीवन प्रदान करने में सहायता दे रही है । निश्चित रूप में उत्तर स्वरूप हमारी दृष्टि "ग़ज़ल" के विषय पर जाकर ठहर जाती है । कारण यह है कि ग़ज़ल के भीतर मानव जीवन से सम्बन्ध रखने वाले वे शाश्वत मूल विद्यमान है जिनके सहारे ग़ज़ल ने जीवन के अमृत्व का रसास्वादन किया ।

जैसा कि पूर्व पंक्तियों में लिखा जा चुका है, ग़ज़ल की बुनियाद प्रेम पर खड़ी की गई है । आवश्यक नहीं कि प्रेम केवल सांसारिक हो । यह भी आवश्यक नहीं कि प्रेम लौकिक न होकर अलौकिक हो । प्रेम

1· शिबली न्अेमानी : शेर -उल-अजम, पृष्ठ - 33

के लिए यह बन्धन भी नहीं कि उसे अमुक से ही होना चाहिए । प्रेम किसी से भी हो सकता है । ग़ज़ल के लिए जहाँ शिकवे-शिकायत उसका विषय बन जाते हैं वहाँ आत्मसमर्पण भी कभी उद्देश्य बन कर प्रकट होता है । ग़ज़ल में अपनत्व की भावना की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । ग़ज़ल के आलोचक हाली प्रेम को सार्वभौमिक अर्थ के साथ ग़ज़ल से सम्बद्ध करते हुए लिखते हैं - "ग़ज़ल के लिए यह एक आवश्यक सी बात निश्चित हो गई है कि उसकी बुनियाद प्रेम के विषय पर रखी जाए । वास्तविकता यह है कि यदि ग़ज़ल में प्रेम की मिठास न भर दी जाय तो वर्तमान स्थिति में उसका फलना-फूलना तथा लोकप्रिय होना ऐसा ही कठिन है जैसा कि शराब में सिर्का मिल जाने के पश्चात उसका नशा बाकी रहना । असल और नकल में धरती और आकाश का अन्तर है । जो अवस्था इश्क में रहती है वह भोग-विलास में नहीं रह सकती ।"[1]

हिन्दी के प्रसिद्ध पत्रकार, आलोचक एवं कवि शमशेर बहादुर सिंह ग़ज़ल को पूर्व परिचित श्रृंगारिक लक्षण पर आधारित मानते हैं । उनके अनुसार "युग-परिवर्तन के साथ-साथ सुसंस्कृत होकर ग़ज़ल में आज प्रत्येक विषय का समावेश संभव हो गया है, किन्तु है यह पूर्व-परिचित श्रृंगारिक लक्षण के आधार पर ही, चाहे वह नाम-मात्र को ही क्यों न हो ।"[2]

एक धारणा यह भी मिलती है कि ग़ज़ल के लिए बन्धन नहीं कि वह केवल प्रेम अथवा इश्क़-ो-आशिकी पर ही आधारित हो । उसका विषय कोई भी सामाजिक विषय हो सकता है । डॉ0 सय्यद एजाज़ हुसैन ग़ज़ल के विषय की व्यापकता पर बल देते हुए व्यक्त करते हैं -

"ग़ज़ल की सीमित परिधि का आरोप दृष्टि के संकुचित होने का परिचायक है । यह सत्य है कि इसमें अधिकतर हुस्न-ो-इश्क की बातें मिलती हैं । त परन्तु इस तथ्य से भी मुँह नहीं मोड़ा जा सकता कि दीन-ो-दुनिया की कोई तक सम्मत बात ऐसी नहीं जो ग़ज़ल के ख़ज़ाने में न हो -

---

1. हाली : मुक़द्दमा शेर-ो-शाइरी का, पृष्ठ - 122

2. शमशेर बहादुर सिंह : : दो आब, पृष्ठ-115

राजनीति, धर्म, दर्शन, नीति शास्त्र तथा संस्कृति ; संक्षिप्त यह कि जीवन से सम्बन्धित जितने महत्वपूर्ण पहलू हैं सब इस (ग़ज़ल की) व्यापक दुनिया में जगह-जगह दिखाई देते हैं । प्रश्न केवल अभिव्यक्ति का है कि वह कितना प्रभावित करती है ।"[1]

ग़ज़ल में विषय की दृष्टि से दक्खिनी के आलोचक प्रेम को अव्यक्त तथा भाव-जगत में ले जाने का माध्यम मानते हैं -

"ग़ज़ल में प्रेम का आधार अव्यक्त रहता है । उसे बुत, सनम, दिलदार, नाज़नीं, शोख़, महबूब आदि सम्बोधनों से स्मरण किया जाता है । यही कारण है, ग़ज़ल मांसल प्रेम को व्यक्त नहीं करती । वह श्रोता या पाठक को भाव-जगत में ले जाती है ।"[2]

उपरोक्त कथन के विपरीत डॉ० सय्यदा जाफ़र को ग़ज़ल में मांसलता के दर्शन होते हैं और भले लगते हैं -

"प्रिय के रूप हाव-भाव, आवरण व आभूषण से अधिक, शरीर की लचक, अंगों के संतुलन, बदन के औचित्यमय आकर्षण इत्यादि कवि का ध्यान केन्द्र बन गए हैं । इन कवियों ने ग़ज़ल में नख-शिख वर्णन की वांछनीयता को ध्यान में रखते हुए सौंदर्य की परिभाषा व प्रशंसा को एक नया अर्थ और यथार्थ प्रदान किया है ।"[3]

ग़ज़ल के सम्बन्ध में निष्कर्ष स्वरूप ग़ज़ल के विख्यात कवि एवं आलोचक अख़्तर अन्सारी की निम्न पंक्तियों को यहाँ उद्धृत करना अनुचित नहीं होगा -

"प्रेम-काव्य की यह विधा हमें ईरानी शाइरी से उत्तराधिकार में प्राप्त हुई । हमने केवल ग़ज़ल के शिल्प, रूप तथा बाह्य शैली को ही प्राप्त नहीं किया ; अपितु विषय, कल्पना तथा प्रतीक विधान का एक

---

1. डॉ० श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य - पृ सं० 190
2. संपादक : डॉ० कामेल कुरेशी - "उर्दू ग़ज़ल" लेख : सय्यदा जाफ़र, शीर्षक : दक्खिनी ग़ज़ल का पसमंज़र, पृष्ठ सं० 39
3. डॉ० सय्यद एजाज़ हुसैन : पत्रिका : ख़ातून -ए- दकन, नवम्बर-दिसम्बर 1965, लेख : ग़ज़ल, पृष्ठ - 21

सजा-सजाया संसार भी हमें मिला । इस प्रकार मानो शेर-ो-सुख़न की वह विधा जो ईरान से हम तक पहुँची भी भाव और कला दोनों ही पक्षों में परिपूर्ण थी, उसके इन दोनों पक्षों को हमने व्यवहार में लाया ।"[1]

1·3 ग़ज़ल का शिल्प विधान

ग़ज़ल का प्रारम्भ अरबी भाषा के "क़सीदे" से होता है जिसमें शक्ति थी, जोश था, कथ्य और विषय की गर्मी थी, अनुभव और विचारों की असलियत घटना ग्रस्त थी, सादगी थी, प्राकृतिकता थी । परन्तु, वह परिष्कृत शैली, कोमलता तथा विचारों की विविधता न थी जो आगे चलकर फ़ारसी शाइरी की स्वच्छन्द विशेषता बन गई ।[2]

शब्दकोशकारों द्वारा प्रतिपादित ग़ज़ल का अर्थ

"बाज़ी कर्दन अज़ जवानी व हदीस-ए-मुहब्बत व इश्क़-ए-ज़नां" भी बदला । उसके शिल्प तथा विषय का धरातल, समतल हो, सुगम हुआ । ग़ज़ल के श्रोता तथा पाठक को लगा कि ग़ज़ल प्रेम की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त अन्य जीवन मूल्यों को उद्घाटित करने की सहज क्षमता रखती है ।

ग़ज़ल को अन्य काव्य-विधाओं को पृथक करने वाला तथा शताब्दियों तक उसकी मौलिकता बनाए रखने वाला तथ्य उसका शिल्प विधान है । अत: शिल्प की दृष्टि से ग़ज़ल, काव्य में संतुलित तथा तुकान्त शेरों के ऐसे योग को कहते हैं जिसमें कि क्रमिक अर्थ का विद्यमान होना आवश्यक नहीं । क्रमिक अर्थ निकलता हो, तब भी कोई कठिनाई नहीं । ग़ज़ल में प्रत्येक शेर स्वतंत्र, स्थिर, स्वावलम्बित तथा सार्थक तथा मौलिक स्थिति रखता है ।

प्रथम शेर की दोनों पंक्तियां तुकान्त एवं बराबर होती हैं । इस द्विपंक्ति-पद को "मत्लआ" कहते हैं ।

1· अख़्तर अन्सारी : ग़ज़ल और दर्से ग़ज़ल - पृ सं0 10

2· अख़्तर अन्सारी : गजल और दर्स-ए-गजल. पृष्ठ सं0 11

बाद के सभी शेरों में प्रथम पंक्ति पर तुकान्त होने का बन्धन नहीं होता, किन्तु प्रत्येक दूसरी पंक्ति के लिए तुकान्त होना आवश्यक माना गया है । प्रत्येक दूसरी पंक्ति को "फ़र्द" कहते हैं ।

"मत्लआ" के बाद के शेर को "हुस्न -ए- मत्लअ" अथवा "जेब -ए- मत्लआ" कहते हैं ।

ग़ज़ल के अन्तिम शेर को जिसमें शाइर अपने उपनाम का प्रयोग करता है मुतम्मि-ग़ज़ल अथवा "मक़्तअ" कहते हैं ।

उपरोक्त कथन के आधार पर यहाँ ग़व्वासी की निम्न ग़ज़ल का संक्षिप्त अध्ययन अनुचित न होगा -

"मत्लआ" :

पिला मदमस्त अय साकी के मिंज
आदत है पीने का
हो सर खुश दौर यकधर थे
करूँगा रंग सीने का

"मत्लअ" के बाद के
शेर की प्रथम पंक्ति
अतुकान्त :

मेरा जीव पीव है इस जीव के जीऊँ कूँ
बिसरूँ क्यों

शेर की द्वितीय पंक्ति
तुकान्त :

कधीं बिसरूँ तो मर जाऊँ न पाऊँ
ज़ौक जीने का

द्वितीय शेर की
प्रथम पंक्ति
अतुकान्त :

कमाया इश्क़ की दौलत ये मैं
ऐसी कमाई जो

द्वितीय शेर की
द्वितीय पंक्ति
तुकान्त :

कमाई के धनी बिन वाँ सचर नईं
किस कमोने का

इसी प्रकार तृतीय शेर की प्रथम पंक्ति तुक की मर्यादा में सीमित नहीं की जाती है ।

तृतीय शेर की
प्रथम पंक्ति :
अतुकान्त :

बचन मेरी ज़बाँ के आज तारे हो
न क्यों झमकें

तृतीय शेर की
द्वितीय पंक्ति
तुकान्त :

के है यू चर्ख़ रंगारी वर्क़
मेरे सफ़ीने का

बाद के सभी अशार प्रथम पंक्तियों में अतुकान्त तथा द्वितीय पंक्तियों में तुकान्त अस्तित्व रखते हैं । ग़ज़ल की अंतिम पंक्ति में, जो कि आख़री शेर की द्वितीय पंक्ति होती है कवि अपने "उपनाम" को बरतता है । ग़ज़ल में उपनाम को "तक़ल्लुस" कहते हैं । अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत किए गए अशार तथा अन्य अशार के पश्चात "ग़व्वासी" ने अपनी ग़ज़ल के आख़री शेर, "मक़्तअ" में तक़ल्लुस का प्रयोग निम्न रूप से किया है -

जकोई इर्फ़ान के साहब सदे हैं

तो कते हैं यूँ

के याँ तो कोई दिस्ता नईं

"ग़व्वासी" के क़रीने का

"मत्लअ" के बाद के अशार की प्रथम पंक्ति अतुकान्त न होकर, किसी कारण, यदि तुकान्त लिखी जाती है तो उसे दोष नहीं समझा जाता । परन्तु प्रत्येक शेर के दूसरे मिस्रे को तुकान्त होना ही चाहिए । "ग़व्वासी" की उपरोक्त ग़ज़ल पूर्ण रूप में यह है -

पिला मद मस्त साक़ी के मिंज आदत है पीने का
दो सरखुश दौर यक धर ते करूँगा रंग सीने का ।

मेरा जीव पीव है इस जीव के जीउँ कूँ बिसरूँ क्यों
कधीं बिसरूँ तो मर जाउँ न पाउँ ज़ौक़ जीने का

कमाया इश्क़ की दौलत थे मैं ऐसी कमाई
कमाई के धनी बिन वाँ सबर नईं किस कमीने का ।

बचन मेरी ज़बाँ के आज तारे हो न क्यों झमकें
के है यू चर्ख़ ज़ंगारी वरक़ मेरे सफ़ीने का

पदक है अैन मेरा नज़्म चन्दर-सूर के गुल का
ज़ड़त है अैन मेरा शेर ख़ूबाँ के ज़रीने का

ज़माने आज के मैं वो नगीना बेबदल हूँ जो
सुलेमाँ बाज कोई कीमत न देवे मिंज नगीने का

जकोई इर्फ़ान के साहब सचे हैं तो कते हैं यूँ
के याँ तो कोई दिस्ता नहीं "ग़व्वासी" के क़रीने का ।"[1]

ग़ज़ल के शिल्प से सम्बन्धित अन्य अध्यों को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

---

1. सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी : कुलियात -ए-ग़व्वासी पृ सं0 106

1· एक से अधिक बार तख़ल्लुस (उपनाम) का प्रयोग :

ग़ज़ल के प्राचीन शाइरों के कलाम में कभी कभी-कभी एक से अधिक बार, एक से अधिक "मत्ले" और "मक़्ल्तुस" मिल जाते हैं । अधिक "मत्लों" को अपवाद और विभिन्न "तख़ल्लुस" (उपनाम) को प्रचलन समझना चाहिए । ग़व्वासी ने "ग़व्वासिया", "ग़व्वास" तथा "ग़व्वासी" उपनामों का प्रयोग किया है । मुहम्मद क़ुली कुत्बशाह के काव्य में भी विभिन्न तख़ल्लुस अनुभव किये जा सकते हैं । उर्दू के लोक प्रियतम ग़ज़ल-गो मिर्ज़ा ग़ालिब की ग़ज़लों के मक़्तों में उनका तख़ल्लुस दो रूपों में "ग़ालिब" तथा "असद" प्राप्त होता है -

"ग़ालिब" बुरा न मान जो वाइज़ बुरा कहे
ऐसा भी कोई है के सब अच्छा कहें जिसे

-यथा-

हस्ती के मत फ़रेब में आजाईयो "असद"
आलम तमाम हल्क़ -ए- दम -ए- ख्याल है ।

2· ग़ज़ल के अशार की संख्या

ग़ज़ल के कुल अशार सात अथवा नौ आदर्श माने गए हैं । ग़ज़ल के आलोचक अख़्तर अन्सारी ने इस सम्बन्ध में विचार व्यक्त किया है -

"ग़ज़ल के अशार कम से कम पाँच और अधिक से अधिक सत्रह हो सकते हैं । कुछ शाइरों ने इसका उल्लंघन करते हुए तीन-तीन, चार-चार अशार की ग़ज़ले कही हैं तो दूसरी ओर अन्य ने पचास पचास अशार की सुदीर्घ ग़ज़ले भी कही हैं ।"[1]

अत: ग़ज़ल को लालित्य की दृष्टि से सात, नौ अथवा ग्यारह अशार का विविध रंगों वाला गुलदस्ता होना चाहिए । रंग अलग हो सकते हैं मगर वे फूल के होने चाहिए । बेशुमार रंग वाले असंख्य फूल गुलदस्ते के

1· अख़्तर अन्सारी : ग़ज़ल की सरगुज़िश्त, पृष्ठ सं0 12

सौंदर्य में चार चाँद लगा नहीं पाएँगे ।

3· दो ग़ज़ला, से ग़ज़ला और चौ ग़ज़ला

एक ध्वन्यात्मक-लय खण्ड के आधार पर शाइर यदि सत्रह शेर पूर्ण करने के बाद भी उसी बहर में शेर कहना जारी रखता है तो उसे "मत्लअ" कहकर शेर कहने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है । ऐसे समय में सत्रह शेर के बाद के अन्य सत्रहवें शेर तक जिसमें फिर "मत्लअ" कहा जाता है, उसे "दो ग़ज़ला" कहने की परम्परा है । "दो ग़ज़ला" समाप्त करने पर यदि अशार का क्रम, उपरोक्त तथ्यों के आधार पर, जारी रहा तो वह अपनी सुदीर्घता स्वरूप "से ग़ज़ल" और "चौग़ज़ला" कहलाएगा । बड़े से बड़ा शाइर चौ ग़ज़ला की सीमा के अन्तर्गत निर्धारित परिधि में तुक निर्वाह की क्षमता नहीं रखता । क्योंकि चौग़ज़ला तक ही उसके अशार की संख्या अड़सठ हो जाती है जिनमें चार "मत्अले" और चार "मक़्ते" भी कहने होते हैं । यह एक अलग तथ्य है कि "कुछ शाइरों के कलाम में "हफ़्त-ग़ज़ले" (सप्त-ग़ज़ले) तक देखे गए हैं ।"[1]

"दो ग़ज़ला" के बाद यदि कोई उसी बहर में ग़ज़ल कहता है तो उसे अपवाद ही मानना उचित होगा ।

4· अशार का विषमांक होना

संख्या की दृष्टि से अशार की संख्या विषमांक होने की परम्परा है । अत: ग़ज़ल के शेर समांक नहीं होते । यदि होते हैं तो वह परम्परा के विपरीत है उन्हें अपवाद माना जाता है । अशार के विषमांक होने का कारण प्रिय का अनुपमेय होना तथा विषम होना बताया गया है । क्यों कि अधिकांश रूप से ग़ज़ल विप्रलंभ श्रृंगार को व्यक्त करती रही इसलिये भी अशार को बरतते समय विषमांक रखा गया । "फ़ारसी" में विषमांक के लिए "ताक़" और समांक के लिए "जुफ़्त" शब्द का प्रयोग मिलता है । अशार के के उपरोक्त बन्धन को ग़ज़ल के शाइरों ने कभी स्वीकार किया और कभी अस्वीकार भी किया ।

1· अख़्तर अन्सारी : ग़ज़ल की सरगज़िश्त, पृष्ठ सं0 12

5. कृत्अबन्द अशार

यदि कोई भाव, संवेदना अथवा विचार-विषय एक ही तुक की दो पंक्तियों में नहीं समाता है और इसी कारण उसे पूर्व तुक की अन्य पंक्तियों में व्यक्त किया जाता है तो उसे कृत्अबन्द अशार की संज्ञा दी जाती है ।

6. क्रमिक तथा अक्रमिक ग़ज़ल

प्राचीन काल से ही, मुख्य रूप से, ग़ज़ल के दो भेद प्राप्त होते हैं । एक - मुसल्सिल अथवा क्रमिक तथा ग़ैर मुसल्सिल अथवा अक्रमिक । क्रमिक ग़ज़ल वह है जिसमें सभी शेर एक ही विषय-सूत्र में बाँधे जाते हैं । अक्रमिक ग़ज़ल के अन्तर्गत ग़ज़ल के प्रत्येक शेर में कथ्य की विविधता पाई जाती है ।

क्योंकि ग़ज़ल का प्रत्येक शेर अपने आप में एक स्वतंत्र इकाई होता है अतः इकाईयाँ जुड़ भी सकती हैं और भिन्न भी हो सकती हैं । विषय-सूत्र की एकात्मकता उतनी नहीं अखरती जितना कि ग़ज़ल के अशार में शुद्ध-विरोधाभास अखरता है । अपने विभिन्न अंगों में ग़ज़ल जितनी अनुशासित होगी, उसमें अभिव्यक्ति की शक्ति उतनी ही प्रबल होगी । वह प्रभावकारी: सफ़लता की परिचायक, ग़ज़ल होगी ।

7. "बहर" अथवा ध्वन्यात्मक - लय खण्ड

एक ग़ज़ल का किसी एक बहर अर्थात् ध्वन्यात्मक-लय खण्ड में होना, शिल्प की दृष्टि से, आवश्यक माना गया है । बहर पर पूरी न उतरने वाली पंक्ति अथवा पंक्तियों को काव्य-दोष माना जाता है । परिणामस्वरूप उस ग़ज़ल को भी अशुद्ध माना जाता है जिसमें कि बहर रहित पंक्ति विदयमान रहती है ।

बहरें वास्तव में वे लय-खण्ड होती हैं जिनके विवर्तन एवं प्रसरण से ग़ज़ल ध्वन्यात्मक रूप धारण करती है । फ़ारसी ग़ज़ल की दक्खिनी

और उर्दू शैली में एक बहरे से कई बहरें निकाली जाती हैं । परन्तु देखा गया है कि ग़ज़ल में प्राय: उन्नीस बहरों को, मुख्य रूप से ख्याति प्राप्त हुई है । यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है ग़ज़ल की भाँति ग़ज़ल की बहरों का सूत्रपात भी अरबी में हुआ था । ग़ज़ल की लोक प्रचलित प्रमुख बहरों के नाम क्रमिक रूप से निम्न हैं -

1. बहर -ए- हजज़	2. रमल	3. रजज़
4. कामिल	5. दो फ़ेर	6. मुतक़ारिब
7. मुतदारिक	8. मुन्सरेह	9. मुक़्तज़ब
10. मुज़ारेअ	11. मुजतस	12. तवील
13. मदीद	14. बसीत	15. सरीअ
16. ख़फ़ीफ़	17. जदीद	18. क़रीब और
19. मुशाकल ।[1]		

एक शाइर जब ग़ज़ल के मत्ले में बहर का प्रयोग करता है तो उसे "ज़मीन" भी कहते हैं ।

8. संकेत, बिम्ब तथा प्रतीक

संवेदनात्मक-अभिव्यक्ति के लिए ग़ज़ल का कवि विभिन्न संकेतों, बिम्बों तथा प्रतीकों का आश्रम ग्रहण करता है । इनका चयन कवि अपनी काव्य क्षमता के अनुसार करता है । उसे ऐसा करने की स्वतन्त्रता सहज रूप में प्राप्त है ।

---

1. ख्वाजा अब्दुल रऊफ़ इशरत : शाइरी की दूसरी किताब - पृ सं0 6

2· दक्खिनी ग़ज़ल की परम्परा : ग़व्वासी तक

वास्तव में दक्खिन अजंता की गुफ़ाओं से आरम्भ होता है और नीलगिरि व पालघाट तक चला जाता है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से द्रविड़ों का निवास स्थान रहा है। इसके उत्तर-पूर्व तथा मध्यवर्ती क्षेत्र में तेलुगु, पश्चिमी इलाके मैसूर में कन्नड़, दक्षिण-पूर्वी भाग में तमिल तथा मलयालम भाषाएँ बोली जाती है। दक्षिण के इस बड़े क्षेत्र के पश्चिम में एक हिन्दी-आर्य भाषा "मराठी" प्रचलित है। यह समस्त इलाका जिस में अब महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, केरल, कर्नाटक तथा तमिलनाड आदि राज्य सम्मिलित है वह विशाल भू-खण्ड है जहाँ दक्खिनी भाषा एवं साहित्य की परम्पराएँ विकसित हुई और यह परम्पराएँ आज भी साहित्यिक रूप में न सही, बोल-चाल की भाषा के रूप में अपना शक्तिशाली अस्तित्व रखती है।

यह तथ्य निर्विवाद है कि "शब्दकोषकारों ने ग़ज़ल का अर्थ "बाज़ी कर्दन अज़ जवानी हदीस -ए- मुहब्बत व, इश्क़ -ए- ज़नाँ बताया है।"[1] परन्तु यह भी मानना पड़ता है कि "दक्खिनी ग़ज़ल प्राचीन भारतीय परम्परा के प्रत्येक रंग को अपने में समेट कर फ़ारसी परम्परा से भी पूरी तरह तादात्म्य स्थापित कर लेती है।[2]

दक्खिनी हिन्दी के हिन्दी आलोचकों की दृष्टि में ग़ज़ल में प्रेम का आधार स्पष्ट अथवा व्यक्त नहीं रहता - "ग़ज़ल में प्रेम का आधार अव्यक्त रहता है। उसे बुत, सनम, दिलदार, नाज़नीं, शोख़, महबूब आदि सम्बोधनों से सम्बोधित किया जाता है। यही कारण है ग़ज़ल मांसल प्रेम को व्यक्त नहीं करती। वह श्रोता अथवा पाठक को भाव-जगत में ले जाती है।"[3]

1· अबुललैस सिद्दीकी : ग़नाई या शाइरी ; वार्षिक पत्रिका : ख़ातून -ए- दकन, नवम्बर-दिसम्बर, अंक सन् 1965 ई०, पृ सं० 25

2· संपादक : डॉ० कोमल कुरैशी, "उर्दू-ग़ज़ल", आलेखक : दक्खिनी ग़ज़ल ; लेखक : जावीद वशिष्ट, पृष्ठ सं० 73

3·

दक्खिनी की एक अन्य आलोचिका को दक्खिनी ग़ज़ल में अव्यक्त भावों की अपेक्षा भौतिकता अधिक दिखाई देती है ; भाव-प्रवणता के स्थान पर उन्होंने मांसलता का अनुभव अधिक किया । दक्खिनी ग़ज़ल में उनकी दृष्टि शरीर पर ठहर जाती है -

"प्रिय के रूप हाव-भाव, आवरण व आभूषण से अधिक शरीर की लचक, अंगों के संतुलन, बदन के औचित्यमय आकर्षण इत्यादि कवि का ध्यान केन्द्र बन गए हैं । इन कवियों ने ग़ज़ल में नख-शिख वर्णन की अनिवार्यता ध्यान में रखते हुए सौंदर्य की परिभाषा व प्रशंसा को एक नया अर्थ तथा यथार्थ प्रदान किया है ।"[1]

तटस्थता पूर्वक विचार करने पर ज्ञात होता है कि प्राचीन काल से ही ग़ज़ल का आधार लौकिक तथा अलौकिक रहा है । सूफ़ी शब्दावली में इसे "इश्क़ -ए- मजाज़ी" तथा "इश्क़ -ए- हक़ीकी" की संज्ञाएँ दी गई है । दक्खिनी ग़ज़ल का साहित्य प्रेम के दोनों ही रूपों को व्यक्त करता है । अभिव्यक्ति की उसकी अपनी शैली है जो कथ्य को, दोनों ही अवस्थाओं में, अनूठापन प्रदान करती है ।

पूर्ण रूप से यह मानलेना कि दक्खिनी काव्य फ़ारसी काव्य की अनुकृति है, गलत है । यह समझ लेना भी प्राय: उचित नहीं कि दक्खिनी ग़ज़ल फ़ारसीतर स्वतंत्र सत्ता रखती है, क्योंकि दक्खिनी कवियों के पास फ़ारसी आदर्शों के अतिरिक्त विभिन्न भारतीय कवियों की ग़ज़ले भी थीं । ये गजले प्राय: उत्तर भारत में लिखी गई और इनका रचनाकाल भी दक्खिनी ग़ज़ल की रचना से पूर्व का है । उत्तर-भारत में हुए ऐसे कवियों में अमीर खुसरो, हसन तथा बाजन आदि ग़ज़ल गोई में कुछ कम महत्वपूर्ण स्थान नहीं रखते । इस सम्बन्ध में शिब्ली न्वेमानी का कथन दृष्टव्य है -

---

1. संपादक : डॉ० कामिल क़ुरेशी, "उर्दू ग़ज़ल", आलेख : "दक्खिनी ग़ज़ल का पसमंजर" लेखिका : सय्यद जाफ़र - पृ सं० 39

"विदेश से भारत आए सहृदय ग़ज़ल के स्वर को पहचानते थे। भारत के हिन्दू-मुसलमान साहित्य - मर्मज्ञ, जिन्हें फ़ारसी का ज्ञान था, ग़ज़ल के सम्पर्क में आए। अमीर खुसरो और हसन देहलवी जैसे भारतीय शाइरों की ग़ज़लों की ख्याति ईरान तक पहुँची। उर्फ़ी तथा नज़ीरी आदि विदेशी कवियों ने भारत आकर ग़ज़ल के विकास में पर्याप्त योगदान दिया।"[1]

दक्खिनी कवियों ने ईरान तथा उत्तर भारत के कवियों से प्रेरणा लेकर तथा स्थानीय संस्कृति के प्रभाव को ग्रहण करके; दक्खिनी कवियों ने ग़ज़ल को नया लहजा, वर्ण्य-विषय, भाषा आदि के क्षेत्र में वह मौलिकता प्रदान की जो उनकी अपनी पहचान बन गई।

दक्षिण भारत में बहमनी-साम्राज्य के पतन तथा विश्रृंखलन से दक्खिनी ग़ज़ल की विकास-यात्रा का आरम्भ होता है। दक्खिनी ग़ज़ल की यह विकास-यात्रा गोलकुण्डा राज्य में अब्दुल्लाह कुत्बशाह के शासन काल तक बीजापुर में अली आदिलशाह (द्वितीय) के शासन की समाप्ति तक, चरम उत्कर्ष पर पहुँचती है। इसी प्रकार दक्षिण भारत में, दक्खिनी ग़ज़ल की विकास-यात्रा का समापन औरंगज़ेब द्वारा बीजापुर और गोलकुण्डा पर आक्रमण, विजय तथा विलय पर होता है। कालान्तर में वली के माध्यम से ग़ज़ल की दक्खिनी परम्परा उत्तर भारत पहुँची। वहाँ इसने उर्दू ग़ज़ल के विकास-क्रम का एक सुदीर्घ इतिहास बनाया। इस सम्बन्ध में ग़ज़ल के आलोचक अख़्तर अन्सारी का यह मत प्रस्तुत करना अनुचित न होगा -

"दकन के आदिलशाही और कुत्बशाही शाइरों के ज़माने से लेकर ग़ालिब व शेफ़्ता के युग तक ग़ज़ल स्वतंत्र रूप से हमारी शाइरी के साम्राज्य पर छाई रही।"[2]

---

1. शिब्ली न्योमानी : शेर - उल - अजम, पृष्ठ सं० 33

2. अख़्तर अन्सारी : ग़ज़ल और दर्स-ए-ग़ज़ल, पृ सं० 15

दक्खिनी ग़ज़ल पर एक सम्यक् दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि मुश्ताक़, लुत्फ़ी तथा शहबाज़ आदि वे प्रारंभिक कवि थे जिनकी ग़ज़लों से, प्रायः दक्खिनी ग़ज़ल - साहित्य का सूत्रपात होता है। इन्होंने प्रारम्भ में दक्खिनी ग़ज़ल को प्रतिष्ठित करने की भूमिका निभाई। साथ ही, खेद है कि उक्त कवियों का समस्त साहित्य अध्ययनार्थ उपलब्ध नहीं है। इनका प्राप्त साहित्य जो कि यत्र-तत्र जीर्ण-शीर्ण अवस्था में मिलता है, उत्कृष्ट होने के कारण महत्वपूर्ण है। यह इनकी महानता सिद्ध करने के लिए पर्याप्त माना जा सकता है। समय की परिवर्तित गति के साथ ही दक्खिनी में उच्चकोटि के ग़ज़लिया साहित्य की रचना, बड़ी तीव्रता से, होने लगी।

ग़ज़ल के प्रारम्भिक कवियों के साहित्यिक प्रयासों का परिणाम ही समझा जाएगा कि दक्खिनी कवियों ने ऐसी ग़ज़लों की सफलतापूर्वक सृष्टि की जिनमें लैकिक-अलैकिक प्रेम के संकेत भी थे और भारतीय लोकगीतों की प्रति ध्वनि की झंकार भी थी, प्राकृतिक चित्रण भी था और मानवीय सुख-दुःख की संवेदनात्मक अभिव्यक्ति भी थी, भाषा की उत्कृष्टता भी थी और अभिव्यक्ति की सहजता भी मुखरित होती थी, फ़ारसी की शास्त्रीयता भी थी और स्थानीय संस्कृति की विविधता भी विद्यमान थी।

2·1 मुश्ताक़

मुहम्मदशाह बहमनी "लश्करी" के युग (सन् 1482 ई0 के आस-पास" में दक्खिनी का यह कवि, "मुश्ताक़" हुआ। मुश्ताक़ को क़सीदे का यह कवि भी माना जाता है। इसकी ग़ज़लों को पर्याप्त ख्याति प्राप्त थी। इसकी ग़ज़ल-गोई में प्राचीन दक्खिनी ग़ज़ल के क्लासिकी रूप की झांकी मिलती है। डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर ने उदाहरण स्वरूप मुश्ताक़ की निम्नलिखित ग़ज़ल को उद्धृत किया है -

"ओ किस्वत केसरी कर्तन चमन म्याने चली है आ
रहे खिलने कूँ त्यूँ दिस्ती ओ चम्पे की कली है आ

सूरज मरजाँ में ज्यूँ दिस्ता नज़र दूँ काँपती थर-थर
जो लट पेचाँ भरी सर थे ओ रुख़ उपर ढली है आ

सूरज की ताब सोते जूँ पिगलता बर्फ़ आपस में
ओ रुख़ देखत नज़र आँखियाँ के आँखियाँ में लगी है आ

अदिक काबा करन बिरहाँ कर सो पाई सो लत ओ है
नयन सुद यूँ दिसे गोया के हुज अैन अली है आ

कह्या मुश्ताक़ नारी दूँ रहते तुम काँ जो मैं आउँ
कही वाँ घर अहे मेरा अगन को जाँ गली है आ ।"[1]

2·2 लुत्फ़ी

मुश्ताक़ के साथ जिन अन्य दक्खिनी कवियों के नाम लिये जाते हैं उनमें लुत्फ़ी का नाम महत्त्वपूर्ण है । लुत्फ़ी मुश्ताक़ का समकालीन कवि था । परन्तु खेद है कि मुश्ताक़ की भाँति इसका कलाम भी दुर्लभ जो काव्य प्राप्त हुआ है उसको देखने से ज्ञात होता है कि यह भी दक्खि में उत्कृष्ट ग़ज़ल का कवि था । ग़ज़ल में इसने रेख़्ती शैली को अपनाया रेख़्ती शैली में भावों की अभिव्यक्ति स्त्री की ओर से की जाती है इसके अतिरिक्त, अख़्तर अन्सारी के अनुसार -"ग़ज़ल के प्राचीन शाइरों के कला में ऐसी अधिकांश ग़ज़लें मिलती हैं जिनमें एक ही विषय-क्रम को बनाए रख गया है ।"[2] यहाँ अख़्तर अन्सारी य का आशय दक्खिनी रेख़्ती ही से है क्योंकि प्राचीन काल में ग़ज़ल को रेख़्ती भी कहा जाता था । अन्तर के इतना है कि ग़ज़ल में प्राय: कवि-संवेदना पुरुष की ओर से व्यक्त-होती और रेख़्ती में कवि भावाभिव्यक्ति के लिए स्त्री की ओर से अपनी काव

1· डाॅ0 सय्यद मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" : दकनी अदब की तारीख़, पृष्ठ सं0 15

2· अख़्तर अन्सारी : ग़ज़ल और दर्स -ए- ग़ज़ल, पृष्ठ सं0 18

संवेदना को व्यक्त करता है ।

लुत्फ़ी की ग़ज़ल गोई का अनुमान लगाने के लिए निम्न लिखित ग़ज़ल, रेख़्ती शैली में, प्रस्तुत की जाती है -

खि़लवत मने सजन के मैं मोम की बत्ती हूँ
यक पाँव पर खड़ी हूँ जलने पिरत पती हूँ
सब किस खड़ी जलूँगी जागा सूँ ना हिलूँगी
ना जल को क्या करूँगी अव्वल सूँ मदमती हूँ
जलते कूँ ना जलाओ बुजते कूँ आग लाओ
बुजूँ तो फिर जलाओ नायक रति रहती हूँ

शह के मिलन की माती हर निस जलन कूँ आती
सब कद खड़ा जलाती पन आह नहीं कती हूँ
मैं मस्त हूँ सजन को सुद-बुद सती हूँ तन की
आप इश्क़ के मदन की मग़रूर मदमती हूँ
जलने कूँ ना डरूँगी अविल्लती आरती हूँ
रसिया चतुर रसीले भोगी सो शाह मुहम्मद
मन्दिर मने सजर को सुन जागी रहती हूँ
"लुत्फ़ी" तेरे मिलन को पाकी कहाँ है इसमें
ज्यूँ पाँच पाण्डवों ते कहते तो घर यती हूँ ।"[1]

2·3 फिरोज़

फ़िरोज़ की गणना बीदर के महा कवियों में होती थी । जिस समय इब्राहीम कुली कुत्बशाह ने फ़ेरोज़ के मुर्शिद, मख़्दूमजी, शेख़ मुहम्मद इब्राहीम, को गोलकुण्डा आने का निमंत्रण भेजा तब मख़्दूम जी ने स्वयं न आकर अपने मुरीद तथा शिष्य फ़ेरोज़ को गोलकुण्डा भेजा । यहाँ फ़ेरोज को पर्याप्त मात्रा में आदर-सम्मान तथा ख्याति प्राप्त हुई ।

1·डाॅ0 मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर : दकनी अदब की तारीक़ - पृ सं0 15-16

सुल्तान इब्राहीम कुत्बशाह फ़ेरोज़ को काव्य क्षमता से संतुष्ट एवं प्रसन्न था । "मुश्ताक़" तथा - "लुत्फ़ी" की भाँति निम्नपंक्तियों में फ़िरोज की भी एक ग़ज़ल उदाहरणार्थ प्रस्तुत की जाती है -

सरू क़द के सुहावे जो नौबहार बन में
नाज़ुज निहाल पहुँचिया उस जीवन के चमन में
दो नैन हर क़दम तिल में फ़र्श कर बिछाऊँ
ज्यूँ हंस चले लटकते सो हण्डे अँगन में
याक़ूत ते सरंगी दो लाल हर अधर तुज
क्योंकर अक़ीकी होंगे इस रंग के यमन में
जिस बज़्म में भी झमके मेरा जो चाँद सब निस
रोता अछूँ व जलता ज्यूँ शमा अंजुमन में
तेरी कमर की हारी सुक-सुक हुआ जो दुब्ला
ज्यूँ तार पैरहन का ये तार पैरहन में
गोरियाँ सहेलियाँ सब जग क्याँ बिसारियाँ
जब सावली सखी तूँ माएल हुआ दक्खिन में
"फ़ेरोज़" जे सनद का देखन जमाल तूरी
हर हाल इस सनद का आवे ख्याल मन में ।"[1]

2·4 महमूद

फ़ेरोज़ के पश्चात् प्रारंभिक दक्खिनी ग़ज़ल के जिन कवियों के नाम आते हैं उनमें से महमूद भी एक है । महमूद, इब्राहीम कुली कुत्बशाह के युग में हुआ । इसका काव्य उत्कृष्ट माना जाता है । मुल्ला वज्ही, इब्न-ए-निशाती आदि परवर्ती कवियों ने महमूद का नाम बड़े आदर से लिया है । ग़ज़ल के अतिरिक्त महमूद मर्सिया, क़सीदा और दोहाँ आदि के लिए भी विख्यात है । ग़ज़ल की दृष्टि से महमूद की निम्न ग़ज़ल उदाहरणार्थ

1· संपादक : डॉ० जमील जालिबी : दीवन -ए- हसन शौकी, पृ सं० 36

यहाँ प्रस्तुत की जाती है -

जो कोई तुमारे इश्क़ की हालत सते माहेर हुआ
छोड़िया सकल इस्लाम कूँ तुज जुल्फ़ में काफ़िर हुआ
जो कुछ हुआ अव्वल सेते सो हो रह्या याराँ सुनो
जिस वक़्त उसे ज़ाहर होना जग मने ज़ाहेर हुआ
ज़ाहेर गंगा के जल सेती न्हाना सो कुछ नई ऐ बहमन
ख़ून -ए- जिगर के नीर सूँ न्हाया सो ओ ज़ाहेर हुआ
जो कोई अपस के दिल मने देखें अपस ऐबाँ के म तैं
ऐबाँ अपस के देख कर दूजा उपर सातेर हुआ
जिस कू अपस के मन्नत का जन्नत लिखिया "महमूद" सुन
हर लहज़त अपने हाल पर हर ϰ दम उपर नाज़ेर हुआ ।"[1]

2·5 मुल्ला "ख्याली"

प्रमाण दिया जाता है कि मुल्ला "ख्याली" का सम्बन्ध कुत्बशाही दरबार से था । कुत्बशाहों के युग में स्थापत्यकला की जो उन्नति हुई तथा जो इमारते, पुल, बाज़ार, हौज़, मस्जिदें आदि निर्मित हुए उन्हें कभी-कभी किसी महत्वपूर्ण नाम से सम्बद्ध कर दिया गया । यह पद्धति प्राय: आधुनिक युग में भी अपनाई जाती है । अत: गोलकुण्डे के निकट मुल्ला "ख्याली" के नाम पर, कुत्बशाही युग की, एक मस्जिद आज भी विद्यमान है । स्थापत्य कला का यह नमूना सिद्ध करता है कि कुत्बशाहों के दरबार में मुल्ला "ख्याली" का बड़ा आदर-सम्मान होता रहा होगा । मुल्ला "ख्याली" की मस्जिद पर जो कत्बा लिखा है उससे ज्ञात होता है कि मस्जिद का निर्माण सन् 1665 ई0 में हुआ । यह मस्जिद दो मंजिला है । इब्ने निशाती और सय्यद आज़म जैसे परवर्ती दक्खिनी कवियों ने "ख्याली" को अपने काव्य में श्रद्धांजलियाँ अर्पित की है । जो भी हो मस्जिद के निर्माण की तिथि को मुल्ला "ख्याली"

1· संपादक : डॉ0 जमील जालिबी : दीवन -ए- हसन शौकी, पृ सं0 38

के समय के साथ जोड़ना तर्क संगत नहीं लगता । मस्जिद का, कवि के समय में ही निर्माण आवश्यक नहीं । क्योंकि उसके काव्य में भाषा का जो रूप तथा शैली पाई जाती है वह "ख्याली" को मुहम्मद कुली कुत्बशाह के पूर्ववर्ती कवियों में स्थान दिलाती है । अत: कवि का समय निर्धारण उसके अधिकांश काव्य की प्राप्ति पर ही संभव है । "ख्याली" का उपलब्ध साहित्य, मात्रा की दृष्टि से बहुत कम है, यहाँ उदाहरणार्थ उसकी निम्न ग़ज़ल उद्धृत करना अनुचित न होगा ।

बाली सरूप सोधन जूँ पुतली नयन में
साहब जमाल ऐसे तहसे न कोई संज्ञन में
संसार के चितारे लिखने मिले हैं सारे
मुख देख सुद बिसारे गुम हो रहे अपन में
तुज केस कुंबरू वाले बादल पतियाँ हैं काले
तिस माँग के उजाले बिजलियाँ उठियाँ गगन में
नारंज फूल जानी तिस फूल आस्मानी
वो फूल ज़ाफ़रानी उपजे हैं सीम तन में
यू बोल बोलता हूँ मोती सूँ रोलता हूँ
अमृत वोलता हूँ खट दूद के अंजन में
फ़ारसी में है "हिलाली" तो८ में है "जमाली"
दक्खन में है "ख़्याली" इस शाइरी के फ़न में ।"[1]

2·6 मुहम्मद कुली कुत्बशाह

गोलकुण्डा राज्य पर लगभग बीस वर्ष तक शासन करने और साहित्य, कला आदि को राजकीय संरक्षण प्रदान करने के उपरान्त सन् 1580 ईस्वी में सुल्तान इब्राहीम कुली कुत्बशाह ने प्राण त्याग दिए । उसकी मृत्यु के पश्चात् सुलतान मुहम्मद कुली कुत्बशाह गोलकुण्डा की राज-गद्दी पर बैठा । मुहम्मद कुली कुत्बशाह के शासन काल को श्रद्धांजलि अर्पित

1· संपादक : डॉ0 जमील जालिबी : दीवान -ए- हसन "शौकी" पृष्ठ-36·

करते हुए "तारीक -ए- गोलकुण्डा" के लेखक अकबरुद्दीन सिद्दीकी ने लिखा है -

"इसके काल में किसी प्रकार की राजनीतिक समस्या नहीं थी। इस काल को कुत्बशाही वंश का सबसे उन्नत और शान्ति का काल कहा जा सकता है। इसने चौंतीस वर्ष तक शासन किया तथा इसका देहान्त सन् 1611 ई० में हुआ।"[1]

परन्तु "कुलयात -ए- सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह" के संपादक डॉ० मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर का कहना है कि -

"मुहम्मद कुली कुत्बशाह के अभियानों के सम्बन्ध में प्राप्त जानकारी के अनुसार यह स्पष्ट हो जाता है कि वह एक उच्चकोटि का चिंतक एवं राजनीतिज्ञ था। युद्धों के कारण उनका प्रारम्भ, मुठभेड़ के लिए ठीक समय पर तय्यारी, युद्धों के दौरान ठीक मौके पर सैनिक जत्थे भेजना, सेनापति तथा सरदारों का चयन, लड़ाई समाप्त करने के तरीके तथा पराजितों के साथ व्यवहार आदि ऐसे तथ्य हैं जिन पर दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि मुहम्मद कुली ने कभी अविवेकशीलता से काम नहीं लिया।"[2]

दक्खिनी कवि सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह को पहला साहब -ए- दीवान शाइर माना जाता है। "दीवान" की परिभाषा इस प्रकार है -

"फ़ारसी और उर्दू में ग़ज़लों का संकलन
अन्त्यानुप्रास के आधार पर किया जाता है।"
अकारान्त ग़ज़ल "अलिफ़" के अन्तर्गत संकलित होती है। "ब" पर समाप्त होने वाली ग़ज़लें "बे" अक्षर के अन्तर्गत। ग़ज़लों का ऐसा संकलन दीवान कहलाता है।"[3]

1• अकबरुद्दीन सिद्दीकी : तारीख -ए- गोलकुण्डा - पृ सं0 111
2• संपादक : डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर - कुलियात -ए- सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह, भूमिका - पृष्ठ सं0 24।
3• डॉ0 श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृष्ठ सं0 348-349

"कुलियाते सलतान मुहम्मद कुली कुत्बशाह", अनुक्रमणिका को छोड़कर कुछ एक हज़ार बयालीस §1042§ पृष्ठों पर आधारित है । इसकी भूमिका तीन सौ बावन §352§ पृष्ठों पर लिखी गई है, जिसे डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" ने लिखा है । तीन सौ बाईस §322§ पृष्ठों पर विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत लिखी गई कविताएं हैं । इनके अतिरिक्त दोसौ छयानवे §296§ ग़ज़लों का संकलन किया गया है । अन्य बहत्तर §72§ पृष्ठों में क़सीदा, रुबाई, मर्सिया, रेख़्ती §एक§ तथा मसनवी §एक पृष्ठ को§ आदि को स्थान दिया गया है ।

मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" साहब के अतिरिक्त एक और कुलियात भी, हाल ही में प्रकाश में आया है । इसका आधार "ज़ोर" साहब वाली प्रति है, कोई हस्तलिपि नहीं । अतः बाद का कुल्यात बाज़ारू है एवं उसकी प्रामाणिकता का सवाल ही नहीं उठता ।

प्रायः देखा गया है कि एक व्यक्ति को कभी विभिन्न लोग भिन्न-भिन्न सम्बोधनों से पुकारते हैं । सुलतान मुहम्मद कुली कुत्बशाह को भी कई नाम, कई संज्ञाएं तथा सम्बोधनों से पुकारा गया । इस दृष्टि से निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं जो कवि के उपनामों को भी प्रकट करती हैं -

"ज्ञात होता है कि मुहम्मद कुली ने प्रत्येक व्यक्ति के सम्बोधन को ध्यान में रखा तथा जिस-जिस नाम से विभिन्न लोग उसको पुकारते थे उन सब नामों को अपने काव्य में उपनाम के तौर पर लिख डाला । शायद ही किसी भाषा का कोई कवि होगा जिसने अपने काव्य में अपने नाम अथवा उपनाम को इस प्रकार प्रयोग में लाया । कुलियात -ए- मुहम्मद कुली में सत्रह उपनाम मिलते हैं । 1• मुहम्मद 2• मुहम्मद शाह 3• मुहम्मद कुली 4• मुहम्मद कुत्ब 5• कुत्ब 6• कुत्ब ज़मां 7• कुत्ब शाह 8• मुहम्मद कुत्ब शाह 9• मुहम्मद कुत्बशाह ग़ाजी 10• मुहम्मद कुत्बशाह राजा 11• मुहम्मद कुत्बशाह सुल्तान 12• कुत्बशाह नवाब 13• मआनी

14• कुत्ब खानी 15• कुत्ब खनाइइ 16• कुत्ब खाना तथा 17• तुरकमान ।"[1]

मुहम्मद कुली कुत्बशाह की शाइरी भारतीय सांस्कृतिक परिवेश की परिचायक है । हुस्न-ओ-इश्क़ के अतिरिक्त उसके काव्य में भारतीय फूल पत्तियाँ, यहाँ के प्राकृतिक दृश्य - फल, उद्यान, नहरें तथा लहलाती खेतियाँ आदि का सहज-सफल वर्णन मिलता है । उसने सांस्कृतिक लोकगीतों, पर्व-त्योहारों आदि को भी काव्य का विषय बनाया है । प्रस्तुत अध्याय में विषय को ध्यान में रखते हुए, विस्तार में न जाकर, उसकी एक ग़ज़ल निम्न पंक्तियों में उद्धृत करना पर्याप्त समझा जाएगा -

जग मोहिनी वो उत्तम सो नारी
शह पेम लेती झगड़ती है भारी

अमृत-बचनी मीठी ज़बाँ तूँ
छन्द-बन्द उभरन सो अपसँवारी

वो छन्द-बन्द भरी है पिया रिझाती
की सूजती उस सूँ तूँ गँवारी

गर यूँ करती है छन्द छाले
है पेम की पन्त में वो सारी

है मृग-नयन केन्द गोनी
नैना सूँ करे कमानदारी

दूतिन तूँ निखा होश्यार बाज़ी
प्यारी व पिया में है सो नारी

सदके नबी है "कुत्ब" के मानी
सकियाँ में हूँ है शह की प्यारी ।[2]

1• संपादक : डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" : कुलियात -ए- सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह, पृष्ठ सं0 30-31

2• संपाकद : डॉ0 महुउद्दीन क़ादरी ज़ोर : कुलियात -ए-सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह, ग़ज़ल की संख्या 253, पृष्ठ - 242

2·7 मुल्ला असदुल्लाह "वजही"

मुल्लाह असदुल्लाह वजही, मुहम्मद कुली कुत्बशाह के युग में, गोलकुण्डा का राजकवि था । ग़ज़ल गोई की दृष्टि से, वजही का कोई दीवान अब तक उपलब्ध नहीं हुआ है । वैसे ग़ज़ल की श्रेणी में उसका नाम आदर सहित लिया जाता है । वजही को उसकी गद्य-रूप रचना "सबरस" के कारण अधिक ख्याति मिली । "सबरस" में हिन्दी-उर्दू के प्रारंभिक रूप की रचना को अनुभव किया जा सकता है । उसकी दो ग़ज़ले "सबरस" में सम्मिलित है । वजही की एक मसनवी "कुत्ब मुश्तरी", जिसमें कुली कुत्बशाह और बंगाली हसीना की प्रेम कहानी कही गई है, प्रसिद्ध है । "कुत्ब मुश्तरी" में भी वजही की आठ ग़ज़लों को स्थान मिला है । इनके अतिरिक्त वजही का ग़ज़ल साहित्य दो-चार ग़ज़लों तथा ग़ज़लों के दो-चार अशार पर निर्भर है । इसका कारण यह होगा कि सुल्तान ने वजही से विशेष अनुरोध करके गद्य लिखवाया था । अतः सुल्तान की इच्छा को ध्यान में रखते हुए उसने ग़ज़लें नहीं कहीं । परन्तु अपने आप को संतुष्ट करने के लिए "सबरस" में दो तथा "कुत्बमुश्तरी" में आठ ग़ज़लों को जगह दी ।

वजही की प्राप्त ग़ज़लों में सादगी, भाव प्रवणता तथा अभिव्यक्ति का यथार्थ धरातल मिलता है । कवि कल्पना की कृत्रिम उड़ान नहीं भरता । यहाँ वजही की ग़ज़ल के निम्न अशार उद्धृत किये जाते हैं -

> पीव अपने कूँ टुक आज तिस सपने देखी सोए कर
> जब पीव चल्या सट-सच तब सोते उठी ओए कर
> सकता नईं सहेली मरना, दिल दूजे पर न धरना
> उस पीव कूँ अपना करना, इस पापिन जीव कू खोए कर ।[1]

1· संपादक : डॉ० अब्दुल हक़ : मुल्ला वजही - कुत्बमुश्तरी, पृष्ठ सं० 30

३· गव्वासी की ग़ज़लें विविध परिप्रेक्ष्य

उपलब्ध तथ्यों के आधार पर ग़व्वासी के व्यक्तिगत जीवन तथा जीवन से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं आदि का उल्लेख एक पृथक, अध्याय के अन्तर्गत किया जा चुका है ।

अतः निम्न पंक्तियों में, उपरोक्त शीर्षक "दक्खिनी कवि ग़व्वासी की ग़ज़लगोयी" के अनुसार विचार व्यक्त करना अनुचित नहीं समझा जाएगा ।

दक्खिनी भाषा तथा साहित्य पर, हिन्दी में, हुए शोध-कार्यों को दृष्टि में रखा जाय तो कहा जा सकता है कि क्रमशः सभी दक्खिनी विषयक पुस्तकें पी·एच डी अथवा डी·लिट् की उपाधि हेतु प्रस्तुत किए गए शोध-प्रबन्ध हैं । राहुल सांकृत्यायन जैसे लेखकों को अपवाद समझा जा सकता है, जिन्होंने दक्खिनी साहित्य का कार्य उपाधि प्राप्त करने के उद्देश्य से नहीं किया । दक्खिनी का जो कार्य अब तक प्रकाश में आया है उनमें दक्खिनी ग़ज़ल पर और विशेषकर ग़व्वासी की ग़ज़लिया शाइरी पर बहुत कम लिखा गया है ।

उपरोक्त दृष्टि से अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होगा कि महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने, "दक्खिनी हिन्दी काव्य धारा" में, डॉ० परमानन्द पांचाल ने, "दक्खिनी हिन्दी विकास और इतिहास" में और डॉ० वी पी कुंज मेत्तर ने, "दक्खिनी हिन्दी का सूफ़ी साहित्य में" ग़व्वासी की ग़ज़लगोयी के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा । जिन्होंने लिखा, उनमें, डॉ० दशरथ राज की धारणा है - "ग़व्वासी की ग़ज़लों, क़सीदे और मर्सिये में आध्यात्मिक विचार धारा की झलक मिलती है ।"[1]

डॉ० श्रीराम शर्मा ने संक्षिप्त रूप में ही सही, ग़व्वासी की ग़ज़लगोयी का मूल्यांकन करने की चेष्टा की है । शर्मा जी के अनुसार, "भाव-कविता में ग़व्वासी की समता दक्खिनी का कोई अन्य

१· डॉ० दशरथ राज : दक्खिनी हिन्दी का प्रेम गाथा काव्य, पृ० १९५

कवि नहीं करता ।"[1] अपने तर्क को पुष्ट करने हेतु उक्त शोधकर्ता ने ग़व्वासी की ग़ज़लों का संक्षेप में, विश्लेषण प्रस्तुत किया है । श्रीराम शर्मा जी की उक्ति का संदर्भ दिए बिना डॉ0 वेद प्रकाश शास्त्री ने अपने डी॰लिट शोध प्रबन्ध में, ग़ज़ल से सम्बन्धित शर्मा जी की बात को ही शब्द-शब्द दुहराया है - "भाव-कविता में ग़वासी की समता दक्खिनी का कोई अन्य कवि नहीं करता ।"[2] डॉ0 इक़बाल अहमद ने, ग़व्वासी की ग़ज़लों पर विचार करते हुए बड़ी भ्रामक धारण का प्रतिपादन किया है । वे लिखते हैं - "इनकी ग़ज़लों की संख्या कई सौ है । इनमें ग़ज़लियात के गुण (प्रेम की बात) के साथ-साथ चारित्रिक विषय भी हैं । इन्होंने भी सुल तान कुली कुत्बुशाह की भांति हाफ़िज़ की ग़ज़लों को दक्खिनी में अनुवाद किया है और उसी भूमि पर लिखा है ।"[3]

योग्य शोधकर्ता ने ग़व्वासी की ग़ज़लों को लेकर जो बात कही है वह सत्य की कसौटी पर खरी नहीं उतरती क्योंकि "कुल्यात -ए- ग़व्वासी" की ग़ज़लों को हमने गिना है और उनकी संख्या "कई सौ" नहीं अपितु केवल एक सौ अड़तीस है । यही नहीं हमने इदारह -अदबियात- -ए- उर्दू, ऐवान -ए- उर्दू पहुंचकर उस पाण्डुलिपि को भी देख डाला जिसकी सहायता से मुहम्मद बिन उमर ने ग़व्वासी का कुल्यात तय्यार किया तथा जिसे आलोचनात्मक भूमिका सहित डॉ0 मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर ने अपने निर्देशन में छपवाया था ।[4]

ग़व्वासी की अधोलिखित 138 ग़ज़लों के अतिरिक्त कुछ ग़ज़लें, जो मुहम्मद बिन उमर द्वारा संपादित कुल्यात में नहीं थी, दो-तीन वर्ष पूर्व "सबरस" "इदारह अदबियात -ए- उर्दू, पंजागुट्टा, हैदराबाद से निकलने वाली मासिक पत्रिका) में "ग़व्वासी का ग़ैर मत्बुआ कलाम" शीर्षक से प्रकाशित हुई । यह भी संख्या में छः-सात से अधिक नहीं थी और इनकी

---

1. डॉ0 श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृष्ठ सं0 363
2. डॉ0 वेदप्रकाश शास्त्री : दक्खिनी का गद्य - साहित्य, पृष्ठ सं0 241
3. डॉ0 इक़बाल अहमद : दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ सं0 138
4. मुहम्मद बिन उमर : कुलियात -ए- इग़व्वासी, ग़व्वासी, पृष्ठ सं0 105 से 173 तक कुल 138 ग़ज़लें

प्रामाणिकता इसलिए संदिग्ध है कि मुहम्मद बिन उमर और डॉ० मुहीउद्दीन क़ादरी द्वारा देख लिए जाने पर "कुल्यात -ए- ग़व्वासी" की मूल प्रति में से कोई प्रामाणिक ग़ज़ल नहीं छूट सकती । डॉ० ज़ोर दक्खिनी पाण्डुलिपि अध्ययन के विशेषज्ञ थे । आपने ही "कुल्यात -ए- सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह" का भी संकलन एवं संपादन किया था । यह कुल्यात एक हज़ार बयालीस पृष्ठों पर आधारित है ।[1]

"ग़व्वासी" की ग़ज़लगोयी का अध्ययन करते समय शोधार्थी के सम्मुख मुहम्मद बिन उमर द्वारा संपादित "कुलयात -ए- ग़व्वासी" तथा इदारह अदबियात -ए- उर्दू, पंजागुट्टा, हैदराबाद में विद्यमान ग़व्वासी के काव्य की पाण्डुलिपि, दोनों ही थे । दोनों में कोई विशेष अन्तर, भूमिका के अतिरिक्त, नहीं पाया गया । पाण्डुलिपि को जितना पढा जा सकता था उतना स्वर्गीय मुहम्मद बिन उमर ने पढा तथा उसी के आधार पर उनके द्वारा संपादित कुलयात तय्यार हुआ । आपके कुलयात में, ग़व्वासी के काव्य से सम्बन्धित, फ़ारसी और अरबी शब्दों की हद तक कोई भूल-चूक नहीं हुई है । परन्तु हिन्दी शब्दों को यत्र-तत्र प्राय: त्रुटिपूर्ण रूप से लिखा गया है । इनमें अधिकांश शब्द तत्सम हैं । इसके अतिरिक्त मराठी शब्द "लई" को कहीं शुद्ध लिखा गया है और कहीं-कहीं "लए" लिख दिया गया है । काव्य की समस्यापूर्ति के लिए हम इसे दोष नहीं ठहरा सकते परन्तु समस्यापूर्ति के अतिरिक्त ऐसा लिखा जाना उचित नहीं लगता ।

शोधार्थी ने "ग़व्वासी" के काव्य का गहन अध्ययन करके कवि के दक्खिनी दीवान का संकलन एवं संपादन किया है । इस कार्य के लिए इदारह अदबियात -ए- उर्दू, हैदराबाद में विद्यमान ग़व्वासी के काव्य की पाण्डुलिपि से और विशेष रूप से स्वर्गीय मुहम्मद बिन उमर द्वारा संपादित कुलयात -ए- ग़व्वासी" से सहायता ली गई । दक्खिनी

1• संपादक : डॉ० मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर : "कुलयात-ए-सुल्तान मुहम्मद कुली कुत्बशाह, सिलसिल -ए- यूसुफ़िया, प्रकाशित सन् 1940 ईस्वी•

दीवान की दृष्टि से ग़व्वासी के दीवान का यह संपादन हिन्दी और उर्दू में पहली बार हो रहा है । यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि ग़व्वासी की दो-तीन ग़ज़लों में ऐसे अशार मिले हैं जो अधूरे थे और उनकी एक-एक पंक्ति पूर्ण रूप से अप्राप्त थी । स्वयं कवि होने के नाते शोधार्थी ने समस्यापूर्ति को ध्यान में रख कर दुर्लभ पंक्तियों को तत्कालीन दक्खिनी शैली में पूरा किया । एक अन्य ग़ज़ल के शेर की अप्राप्त पंक्ति की दुर्लभता एवं अन्य पंक्ति न बन पाने के कारण उक्त पंक्ति का स्थान रिक्त छोड़ देना पड़ा । इनके अतिरिक्त बहुत सी, अपूर्ण, ग़ज़लों के रिक्त स्थानों में काव्यानुसार तत्कालीन दक्खिनी शैली में शब्द साधने पड़े । प्रस्तुत शोध ग्रंथ में ग़व्वासी के दीवान को पृथक अध्याय के रूप में स्थान दिया जा रहा है ।

ग़व्वासी की ग़ज़लों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते समय मुहम्मद बिन उमर द्वारा संपादित "कुलयात -ए- ग़व्वासी" से संदर्भ इसलिए दिए जा रहे हैं कि यह कुलयात प्रकाश में आ चुका है ।

3•1 <u>रहस्यवादी भावना</u>

"ग़व्वासी" की ग़ज़लों में रहस्यवादी आशार पर्याप्त मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं ।

ग़व्वासी के अनुसार कोई ऐसा भक्त अथवा सूफ़ी नहीं हुआ जिसने परमात्मा के अस्तित्व को पूरी तरह समझा हो । उस अनुपमेय ईश्वर का नैकट्य शायद ही किसी को मिला हो -

"किसी की मिसाल नहीं है के जान उसे
पाया अहे विसाल जिन उस बेमिसाल का ।"[1]

आत्मा को परमात्मा का मार्ग भला सीधे प्रकार से क्यों दिखाई देना चाहिए । उस परम सत्य के मार्ग को खोजने के लिए विरह का दिया

1• संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुलयात -ए- ग़व्वासी - पृ सं0 107

लगा कर हृदय को दीप्तिमान करना होगा - "जीव की ज्योत की दिखना के सीदी बाट मिंज सोज़ का दीवा लगा सीने कूँ नूरानी किया ।"[1]

कवि उस घूंघट रूपी झीने आवरण को हटा कर प्रिय का दर्शन करना चाहता है । अत: वह इष्ट से प्रार्थना करता है कि वह उससे आज लाज न करे । दर्शन दे दे -

"घुंघट खोल रूख़सार दिखला यक तिल
नकर लाज मिंज सूं न कर लाज आज ।"[2]

ग़व्वासी का प्रिय उसकी प्रत्येक श्वास में बसा हुआ है । अगर्चे देखने में परमात्मा से जुदाई का अभास हो सकता है परन्तु वास्तव में वह उससे भिन्न नहीं । अन्तर केवल प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष का है -

"मिज ग़व्वासी कूँ तूं बातिन में न देख उस थे जुदा
शाह-रग नमने है नज़दीक अगर्चे है बईद ।"[3]

इष्ट क्यों प्रत्यक्ष रूप से साक्षात दिखाई देगा ?
उसे तो दूर से देखना पर्याप्त है -

"देखना तुज कूँ दूर के बस है
सामने की तूं आए चढ़-चढ़ कर ।"[4]

संसार में विभिन्न प्रकार के लोगों को भिन्न-भिन्न प्रकार की इच्छाएं रहती हैं । परन्तु जो सत्यप्रेमी, भक्त जन, सूफ़ी-संत आदि होते हैं वे भौतिक दृगों के बिना परमात्मा के दर्शन की आकांक्षा करते हैं -

"दुनिया में हर मकस कूँ है चक-मक हवस वले
आशिक़ कूँ नमन बग़ैर तेरे दीदार का हवस ।"[5]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुलयात -ए- ग़व्वासी पृ0 108 - 109
2. -वही- पृ सं0 116
3. -वही- 117
4. -वही- 117
5. -वही- 121

परमात्मा के प्रेम में कवि इस प्रकार तन्मय हो जाता है कि उसे स्वयं अपनी सुध-बुध नहीं रह जाती । ग़व्वासी आत्म विस्मृत होकर कहता है - कहाँ था काँ के काया हूँ यू कुच फ़ाम नई होता

फिरता त्यूँ वो फिरता हूँ रखे त्यूँ दौड़ता हूँ मैं ।"[1]

परमात्मा के अस्तित्व की खोज में ग़व्वासी ने धरती और आकाश को एक कर डाला, परन्तु उसको परमात्मा का क्या, धरती और आकाश का तक रहस्य ज्ञात न हो सका । सब रचना ही महान हो तब रचयिता की महानता का क्या अंत -

"न जानू क्या मंतर है कि ज़मीन आस्माँ में उसका
अदिक हैरान पाया हूँ दिल अस्मान हौर ज़मीं का मैं ।"[2]

"ग़व्वासी" की ग़ज़लों में प्रयुक्त उपरोक्त रहस्यवादी अशार के अतिरिक्त उसकी एक संपूर्ण रहस्यवादी ग़ज़ल भी प्राप्त होती है -

"मिंज न सुद अपने हाल का है पिया
चित्त मिंजे तुज ख्याल का है पिया

ज़ौक़ है मिंज के हर घड़ी दिल में
शौक़ तेरे विसाल का है पिया

इश्क़ बाज़ाँ में कूर्ब आज मिंजे
तुज मुहब्बत के माल का है पिया

पोर मिंज लोचना में ज्यूँ सम्दूर
नूर तेरे जमाल का है पिया

देखता हूँ तो मिंज दिमाग़ मने
बास सब तुज गुलाल का है पिया

साप मेरे सिने में ज्यूँ के चमन
तेरे क़द के नेहाल का है पिया

देख "ग़व्वास" तुज मिसाल के वो
आरसा तुज मिसाल का है पिया ।"[3]

---

1. संपादक : मुहम्मद-बिन-उमर, ग़व्वासी - कुलयात -ए-ग़व्वासी - पृ०सं० 126 -127
2. -वही- पृ सं० 130
3. -वही- प सं० 112

3·1·1 गुव्वासी की ग़ज़लों में "साईं" का प्रयोग

गुव्वासी ने अपनी ग़ज़लों में "साईं" शब्द का, प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है । जिन शेरों में कवि ने साईं शब्द को बरता है उनमें मानवतावादी, धर्म-निरपेक्ष, रहस्यवादी तथा नीतिपरक तत्वों का सुन्दर सम्मिश्रण मिलता है । वैसे "साईं" का प्रयोग, काव्य में, परमात्मा अथवा ईश्वर के लिए किया जाता है । "साईं" पर आधारित काव्याभिव्यक्ति का प्राधान्य प्राय: सूफ़ी फ़कीरों अथवा सन्त-कवियों के काव्य में दृष्टि-गोचर होता है । आस्था पर आधारित, गुव्वासी के भारतीय व्यक्तित्व का स्वरूप उसके "साईं" शब्द प्रयुक्त शेरों में भी दिखाई देता है । कवि कहता है कि जिस किसी भी व्यक्ति ने परमात्मा के प्रति ध्यान लगाया है वह अन्य व्यक्तियों के साथ विषैला व्यवहार नहीं करता ।

> "लगाईया है जकोई ध्यान अपने साईं संगात
> वो इसकूं बात सो यक-यक कूं वि नहीं करता ।"[1]

गुव्वासी मानो एक संत-कवि के रूप में कहता है कि जिस किसी व्यक्ति ने जाग-जाग कर ईश्वर स्तुति में रैन बिताई उसने लोक-परलोक में विशेष स्थान प्राप्त किया ।

> "निस जाग अपने साईं सूं जकोई सहन ख़ेज़ी किया
> मतलब दुनियां होर दोने का बाज़ोक परवेज़ी किया ।"[2]

ग़ज़ल के एक अन्य शेर में गुव्वासी कहता है कि वह प्रेम-मय भक्ति की तृष्णा रखता है और इस लिए पिया अर्थात परमात्मा के अतिरिक्त वह प्यास की तृप्ति के लिए भी किसी अन्य से पिया-पिया नहीं कह सकता । यदि कोई उससे पूछे कि उसने मन किसे दिया है तो वह इसलिए कुछ नहीं कह सकता कि उसने अपना मन तो साईं को दे दिया है । इस प्रकार उसकी ईश्वरीय-प्रेम तृष्णा की तृप्ति हो गई ।

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, गुव्वासी - कुलयात -ए- गुव्वासी पृ सं0 ।
2· -वही- पृ सं0 108

"प्यासा हूँ इश्क का पिया मैं किसी न कह सूँ पिया-पिया कर
दिया सूँ दिल साईं कू दिया मैं न बोल सूँ किस दिया-दिया कर।[1]"

कवि साईं के प्रति प्रेम-मय भक्ति की भावना रखते हुए अनुमान लगता है कि परमात्मा का हृदय सरलता पूर्वक नहीं पिघलता । वह फौलाद से अधिक कठोर है । अर्थात् ईश्वर से मन लगाना आसान बात नहीं है, उसके लिए चित्त की एकाग्रता एवं तन्मयता अत्यंत आवश्यक है -

"अज़्मा के दिल कूँ साईं के जो देकता हूँ तो
पोलाद के है सख़्त पिगलता नहीं हुनूज़ ।"[2]

पवित्र भक्त की तेजस्वी सूरत में साईं की गरिमा की झलक देखी जा सकती है । उसके मन को परमात्मा दर्पण के समान पवित्र करके निर्मल कर देता है -

"निछल चहरा जो कोई आशिक़ का हो साईं निभाए हैं
कला का मस्कला कर आरसियाँ दिलकियाँ मंजाए हैं ।"[3]

ग़व्वासी का मन उस स्थान की कामना करता है जहाँ पर कि उसका परमात्मा से साक्षात् मिलन हो । मिलन के अवसर पर वह इष्ट के साथ बैठने और रात- भर प्रेम की बातें करने का आनन्द उठाना चाहता है -

"कधाँ वो देस होवेगा जो साईं साथ मिल बैसूँ
करूँ हज़ दिल मंगे त्यूँ होर सारी रात मिल बैसूँ ।"[4]

साईं केवल दयावान एवं करुणामय ही नहीं है । वह दण्ड देना भी जानता है । उसका प्रकोप भयंकर होता है । अतः जो भक्त अज्ञान वश पापों की वृत्ति को अपनाते हैं और यह समझते है कि बाद में ईश्वर से क्षमा माँग लेंगे तो यह उनकी भूल ही होगी । साईं कुचरित्रों को सज़ा देना खूब जानते हैं -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुलयात-ए-ग़व्वासी, पृ सं0 119
2. -वही- 120
3. -वही- 128

"यूँ जान जो सितम -ए- सितम आपस पे किया वो
समज्या न करम कर जिने साईं के सित कूँ ।"[1]

3·2 विरह वर्णन

दक्खिनी कवि ग़व्वासी ने अपनी ग़ज़लों में आलम -ए-फ़िराक़ अर्थात् विरह का बड़ा ही मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है । विराहवस्था में कवि के लिए दिन बहुत बड़ा हो जाता है और कछुए की भाँति धीरे-धीरे चलने लगता है । विरह में संतप्त कवि को दिवस उस समय तक ग्रीष्म-कालीन अनुभव होता है जब तक कि उसकी आँखों से इतने अश्रु नहीं बह जाते कि उसे वर्षा काल का आभास होने लगे ।

"बिरहे के धुत्काले के दिन - कछुआ के ढंडलाता देखत
अंजवाँ थे मेरे नयन की पैदा वर्ष काल हुआ ।"[2]

कवि के विरह में इतनी गर्मी अथवा उत्ताप है कि यदि उसका अंश दरिया में डाल दिया जाए तो उसकी ऊष्णता से सारी मछलियाँ जल कर कबाब हो जाएँगी -

"दरिया में तुज़ बिरह के चुनके अगर पड़ेंगे
तो जल मच्छियाँ सूँ दरिया सारा कबाब होगा ।"[3]

विरह के उत्ताप में स्वयं के जल कर कबाब होने की अवस्था के फलस्वरूप "ग़व्वासी" प्रार्थना करता है कि कोई आशिक़ इश्क़ में जल कर, उसकी भाँति कबाब न होए -

"ज्यूँ मैं कबाब जल जल बिरह-आग सूँ हुआ हूँ
होसे न कोई आशिक़ जल यूँ कबाब हरगिज़ ।"[4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर ग़व्वासी -कुलया-ए-ग़व्वासी पृ सं0 148
2· -वही- 111
3· -वही- 112
4· -वही- 121

प्रिय के विरह से कवि आत्म विस्मृत हो जाता है तथा उसे अपनी नींद भी बहुत कड़वी लगने लगती है फिर भी वह अपने आपको यह कह कर सँभाल लेता है कि संसार में प्रेमी अपनी रातें रक्तिम करते ही हैं -

"नींद कड़वी कर लई तेरे विरह थे
आशिकाँ करते हैं खून आशाम शाम ।"[1]

कवि के विरह में उठने वाला धुआँ, कोई आश्चर्य की बात नहीं कि सीधा गगन में उठे और सूर्य को ग्रहण सहित निगल जाए । कवि का तन जर्जर हो चुका है उसकी गर्म आहों की भट्टी कहीं आग की बरसात न करदे -

"धुवाँ मिज आह का सीदा गगन के धर जो सरक्याँ है
अजब क्या है जो निगले जा हो राहूम सूर सारे कूँ
हुआ है राक सब तन जल वले डरता हूँ भी अपनी
उसास हौर बिरह की भट्टी सुलगती आग बारे कूँ ।"

विरह में कवि पर से आग बरस रही है । उसके हृदय में मानो अंगार का जीवन सुलग रहा है, ऐसे में विरही करे तो क्या करे -

"बहता है मिज पे बाउ तो बिरहा खड़े-खड़े
सीने में सुलगता है जीवें अंगार क्या करूँ ।"[2]

कवि नायिका-भाव में व्यक्त करता है कि वह पिय मिलनाकांक्ष रोम-रोम में बसाया हुआ है परन्तु प्रकट में विरह स्वरूप उसकी स्थिति अत्यंत ही क्षीण हो गई है -

धरती हूँ कुव्वत वस्ल का बातिन में रोमा-रोम में
ज़ाहेर अगर्चे बिरह सूँ दुबली हुई हूँ तार सी ।"[3]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, गुव्वासी - "कुल्यात -ए-गुव्वासी" पृ सं0 125
2· -वही- 150
3· -वही- 167

असहनीय विरह-वेदना के परिणामस्वरूप कवि चिल्लाने लगता है । उसके शोर मचाने के कारण पड़ोसियों की नींद भी उड़ जाती है । चिल्लाते और आह भरते-भरते कवि का गला बैठ जाता है -

"न आवे नींद हम सायाँ कू मेरे चिल्लाने मे
गला यू आह भरने थे हुआ है चिलचिला चारब ।"[1]

प्रेम में विरही की स्थिति बड़ी शोचनीय हो गई है । उसके शरीर पर दुर्बलता ने आक्रमण कर दिया है तथा मुख की यह दशा है कि उस पर छायाँ पड़ गए हैं -

"अंग उतर सब गया है इस म्याने
इश्क़ के ग़म में मुख पे छायाँ पड़ ।"[2]

कवि का शरीर भी अशक्त हो गया है । अब उसकी यह हालत होगई है कि प्रिय के बिना कुछ और सपने में दिखाई नहीं देता -

"पीव बाज अँखियाँ कूँ आए न ख़्वाब हरगिज़
बेताब हूँ नहीं कुच मिंज तन में ताब हरगिज़"[3]

विरह में कवि लहू को तेल बनाकर शरीर रूपी चराग़ में जलता है । उसे विश्वास है कि इस प्रकार रोशन चराग़ देख, प्रिय परवाना बन कर आएगा -

"तेल लहू का याल में जलता हूँ कर सब तन चराग़
क्यों न होवे परवाना आशिक़ देख यू रोशन चराग़ ।"[4]

प्रकृति की रचनाओं में चाँद की स्थिति ऐसी है कि उसने आदि से अब तक सभी बिरही जनों का साथ दिया है । ग़व्वासी अपनी विपदा प्रिय को जा सुनाने के लिए चाँद से अनुरोध करता है -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुलयात -ए-ग़व्वासी -पृ सं0 115
2. -वही- 118
3. -वही- 121
4. -वही- 123

"तुजे तो फ़ाम है अय चाँद सब ग़म रात का मेरा
खुदा तईं जा कह तूं तो बी के इस आलम की ज्योति कूं ।"[1]

संभवतः चाँद ने विरही-कवि की प्रार्थना स्वीकार नहीं की । अतः एक रात न केवल चाँद कवि के लए अग्निस्वरूप हो गया अपितु तारे भी, विरह में, कवि के लिए अंगार बन गए -

"अजब है आज की रैनो वले क्या काम आवे मिंज
के लगता आग हो चंदना होए अंगार तारे बी ।"[2]

प्रिय के विरह में प्रेमी के लिए एक दिवस एक वर्ष के बराबर लगने लगता है -

"उस पीव के फ़िराक़ मने आज मिंज लखई
यक दिन हुआ है एक बरस आह क्या करुँ ।"[3]

प्रिय की विरह वेदना में प्रेमी ने अपने हृदय में पीड़ा का बारूद-भर लिया है । उसके हृदय में मानो विरह-वेदना का ज्वालामुखी समाया हुआ है

भर्या हूं दिल में दारु सोज़ का में
के इस तन में अय दिल ज्यूं भुई नला है ।"[4]

ग़व्वासी की ग़ज़लों में विरह वर्णन से सम्बन्धित उपरोक्त तथ्यों के अतिरिक्त उसकी एक ग़ज़ल ऐसी भी है जिसके प्रत्येक शेर में विरह-वर्णन को स्थान दिया गया है । ग़व्वासी की यह विरहात्मक ग़ज़ल इस प्रकार है -

कठिन मोजां बिरह के मिंज पे सारी रात चलते थे
सुबा लग दुःख के दरिया हो नयन मेरे उबलते थे
ज़ीनी भरकर अंझू यूं जा लगे थे आसमानां कूं
जो तारे बुड़-बुड़े होकर उस अंझुआं में उछलते थे ।

---

1. संपा० मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी पृ सं० 135।-136
2. -वही- पृ सं० 16। 3. -वही- पृ सं० 146-47 4. -वही- पृ सं 163-

दरूने में यूँ कुच फट अगन-जीबाँ निकलत्याँ थ्याँ
अर्श कुर्सी लरज़ते होर फ़रिश्ते देख झलते थे
लगी थी चुटपुटी पूरी न थी कुच नींद मिंज अल्ला
के रोमा-रोम सुर वाले हो मेरे तन में सलते थे

न दम कूँ खेलने कुदरत न जीवें कूँ बात थे जाने
सीने में दाट झद-ो-ग़म के आपड़े चकलते थे
मैं अपने सर थे टलता था कहूँ क्यों ना टलूँ सर थे
के तिल-तिल इश्क के मुश्किल बलायाँ मिंज पेटलते थे
"ग़व्वासी" हाल देख मेरा हुए जल राक सर थे बी
जकोई माशूक़ थे अपने बिछड़ बिरहे सूँ जलते थे ।"[1]

3·3 गव्वासी की ग़ज़लों में प्रेमाभिव्यक्ति

साहित्यिक काव्य विधा "ग़ज़ल" की बुनियाद प्रेम पर ही रखी गई थी । आज भी ग़ज़ल को प्रेमाभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में अपनाया जाता है । यह एक पृथक बात है कि बदलते हुए युगों के अनुसार, विषय की दृष्टि से, ग़ज़ल ने भी अपना रूप बदला । अब ग़ज़ल में प्रेम - भावना के अतिरिक्त सामाजिक एवं सांस्कृति विषय और अन्य विभिन्न विषय भी आ गए हैं । परन्तु जैसा कि ग़ज़ल का मूल स्वभाव है, वह प्रेम का अधिक सहतता एवं सुलभता पूर्वक अभिव्यक्त करती है ।

दक्खिनी कवि "ग़व्वासी" के युग की ग़ज़लों का मूल स्वर, प्राय: प्रेम पर आधारित था । इसमें कोई संदेह नहीं कि तत्कालीन युग में विभिन्न विषयों का भी "ग़ज़ल" में समावेश किया गया । परंतु यह समावेश दक्खिनी ग़ज़ल के प्रेम-तत्व को प्रभावित नहीं कर सका । दक्खिनी ग़ज़ल प्रेम के लौकिक और अलौकिक पक्ष को लेकर लिखी गई । केवल यही नहीं दक्खिनी ग़ज़ल ने संयोग तथा विप्रलभ दोनों ही श्रृंगारों का श्रृंगार किया । "ग़व्वासी" की ग़ज़लों में विभिन्न विषयों को स्थान

1· संपादक : मुहम्मद -बिन-उमर, ग़व्वासी - कुलयात-ए-ग़व्वासी
पृष्ठ सं0 164-165

अवश्य मिला, किन्तु कवि ने प्रेम की महानता को आत्मसात करते हुए माना अपनी ग़ज़लों में प्रेम की उपासना की । प्रेम ग़्वासी के लिए तपस्या है और इस प्रेम की तपस्या में प्रेमी का एक चित्त होना आवश्यक है । वरन् प्रेमी अपने मन की मुराद पा नहीं सकता -

"अंपड़ सके न वो अपनी मुराद कूँ हरगिज़
जिन एक चित्त सूँ "ग़्वासी" तपस नहीं करता ।"[1]

प्रेम में आत्म समर्पण के लिए हृदय विह्वल हो उठता है । प्रेमी को हृदयदान करना होता है । हृदय देते समय कंजूसी नहीं चलती । उस समय तो महादानी हातिमतई की भाँति दानशील होना पड़ता है -

"मुहब्बत में जिया देने न कर सूँ कुच बख़ीली मैं
के मेरा दिल "ग़्वासी" यूँ है ज्यूँ हातिमतई का ।"[2]

प्रेम की एक शर्त आत्म संयम भी है । यदि आत्म संयम न हो तो प्रेम का रहस्य संसार के सम्मुख खुल जाएगा, रुस्वाई होगी -

"राज़ मिंज दिल के दरूने का न होवे फ़ाश कई
भोत दिन दिल के हरम के दर की दरबानी किया ।"[3]

"ग़्वासी" की धारणा है कि प्रेम प्रेमिका की ओर से प्रकट होना चाहिए । अतः प्रेमिका का कर्तव्य है कि वह प्रेमी के ऊपर कृपा कर उसे कृतार्थ करें -

"ग़्वास की दुआ जम यई है जो हर सनद सूँ
माशूक़ की तरफ़ ये आशिक़ निहाल होना ।"[4]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़्वासी - कुल्यात-ए-ग़्वासी - पृष्ठ.सं0 106
2. -वही- 108
3. -वही- 109
4. -वही- 110

मनुष्य के जीवन का अन्त निश्चित है, परन्तु प्रेम में मानव अनिश्चित समय में ही मृत्यु को प्राप्त कर लेता है। अतः जान जोखिम में डालना है तो ही प्रेमी को प्रेम में प्रविष्ट होना चाहिये। अन्यथा नहीं -

"ख़ाक होना तो सच है आख़र कूँ
ख़ाक न हुए लगीच ख़ाक होना।"[1]

ग़व्वासी की प्रेमिका अजीब है। उसका रंग-रूप, आभूषण, बाली-उम्र और सौंदर्य व यौवन अनुपम है। उस जैसा न कहीं फल-फूल है और न उसके भाँति लचकदार कोई डाली है -

"वो मुख वा जोबन हो वो बाला अजब दिसता है मिंज
वैसा न कई फल-फूल होर, वैस न कई डाला हुआ।"[2]

प्रेम में प्रिय की प्राप्ति हो, ऐसा सदैव संभव नहीं। प्रेमी को अपनी उमर से नहीं छिपाना चाहिए। दुःख करने से भी कोई लाभ नहीं। मनुष्य को अपने बचन पर अटल रहना चाहिए। सत्य प्रेमी अपने वचन का निर्वाह करता है -

"इश्क़ में जानाँ के साबित अछ तूँ अयजाँ ग़म न खा
अहद-ो-पैमाँ रख दुरुस्त अपना यहाँ हाँ ग़मन खा।"[3]

प्रेमिका यदि अत्यधिक सुन्दर और चरित्रवान हो तो उसके चाहने वालों की कमी नहीं रहती, यहाँ तक कि देव-दूत भी मानो मजनूँ होकर अपनी सुध-बुध खो बैठते हैं। प्रेमी विचारों में डूब जाता है। वह सोचता है, न जाने प्रेमिका की आँखों में क्या जादू है जो सब उस पर मर-मिटने के लिए तय्यार है। ऐसी स्थिति प्रेमी के लिए बड़ी नाज़ुक होती है -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं0 110
2. -वही- 111
3. -वही- 113

"मल्लिक मजनूँ हो तुज लैला के बेसुद हो पड़े हैं सब
न जानूँ क्या सहर है की चंचल तुज नैन नाज़ाँका ।"[1]

प्रेम की संकट मय स्थिति टली । जहाँ प्रेम के दरिया में उठे हुए तूफ़ान को पार करना था, सो पार हुआ । प्रेमी के मन को तनिक शांति मिली -

"बड़ा डर था मोहब्बत के दरिया के मोज का आख़ुर
सलामत सूँ किनारे में ये दरिया सार हो आया ।"[2]

कवि की प्रेमिका बड़ो लाजवंतो है । प्रिय को आता हुआ देख कर वह घूंघट में मुंह-छिपा लेती है । प्रेमी प्रेमिका से याचना करता है कि वह, क्षण भर के लिए ही सही, थोड़ा सा घूंघट खोल कर अपने मुख मण्डल का दर्शन कराए । वह आज उससे लाज न करे -

"घूंघट खोल रूखसार दिखला यक तिल
न कर लाज मिंज सूँ न कर लाज आज ।"[3]

प्रेयसी यदि एक प्यार भरी दृष्टि से देखे तो ग़व्वासी सर के बल चलकर उसके समीप जाएगा । अतः प्रेममयी "चितवन" के बिना कवि के लिए प्रेमिका के पास, सर के बल जाना किस प्रकार संभव हो सकता है -

"ग़व्वास अपने सर कूँ क़दम कर क्यों आ सके
तूं लुत्फ़ की नज़र से इशारत किये बग़ैर ।"[4]

प्रेमिका के सम्पूर्ण शरीर से कुछ ऐसा मीठा रस टपकता है कि जिसे देख कर लगता है मानो उसने नेशकर (गन्ने) का अत्याधिक मद-पान किया था -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी -पृ0 113
2. -वही- 114
3. -वही- 116
4. -वही- 119

"मिठे तुज क़द थे चूता है मिठापन सर थे पावाँ लग
लिया है मत निचोड़ अवसर मीठापन नेश्कर का तूँ ।"[1]

"ग़व्वासी" कोई साधारण प्रेमी नहीं है । उसके जैसा सत्य प्रेमी तथा सौंदर्य का उपासक आज तक पैदा नहीं हुआ -

"ज्यूँ ग़व्वासी हुआ है त्यूँ अय धन
कोई हुआ नहीं है इश्क़-बाज़ अछूँ ।"[2]

ग़व्वासी अपने प्रेम में लीन निश्चिंत है । उसका विश्वास है कि इश्क़ का जाम पीकर मस्त रहने वालों का नशा नहीं उतरता । अतः इच्छा रखते हुए भी मन पर ख़ाबू पाना ग़व्वासी के वश की बात नहीं है-

इश्क़ के जाम थे है मस्त जिने
उसकी मस्ती कूँ कई उतार नईं ।[3]

किसकी मजाल है जो "ग़व्वासी" की प्रेमिका पर बुरी नज़र डाले -

"किस अंदाज़ा है तुज निक्षा देखन
है "ग़व्वासी" को शूख़ महवश तूँ ।"[4]

जिस समय तक "ग़व्वासी" जीवित है उसके अंतिम क्षण तक वह अपनी प्रेमिका को नहीं छोड़ सकता -

"जीवँ है लग कधीं कूँ "ग़व्वासी"
छोड़ देसक न तुज नारी कूँ ।"[5]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुलयात-ए-ग़व्वासी पृ सं0 128
2· -वही- 131
3· -वही- 131
4· -वही- 133
5· -वही- 134

प्रेम में "ग़व्वासी" की उपरोक्त दीवानगी देख संभवतः किसी मित्र ने प्रेमिका के परित्याग का परामर्श दिया । ग़व्वासी ने दो टूक उत्तर देते हुए कहा -

"मिजे उसके दिल तोड़ो कहते वले
उस्तूँ तोड़ दिल भी लगाना कहाँ ।"[1]

उधर प्रेमिका के मन में भी "ग़व्वासी" के लिए प्रेम का सागर मोज़ें मार रहा है । उसे यदि "ग़व्वासी" मिल जाएगा तो वह ग़व्वासी को आँखों की सीपियों में मोती की तरह छिपा लेगी ।

"ग़व्वासी जो मिलेगा तो इसी अँखियाँ की सीपियाँ में
रखूँगी यूँ छिपाकर ज्यूँ छिपा रखते हैं मोती कूँ ।"[2]

ग़व्वासी प्रेम में प्राण देने के लिए तय्यार हो गया -

"गर जीव मँगे तो तुज कूँ "ग़व्वासी" हो देऊँगा
राजी हूँ मैं यक़ीन कुच इसमें गुमान नईं ।"[3]

सत्य प्रेमी की उपलब्धि किसी भी प्रेमिका के लिए वरदान से कम नहीं होती । प्रेमिका ने आत्म समर्पण का आह्वान दिया -

"रही हूँ फूल हो परिमल में भोग आ मिंज तूँ ग़व्वासी
के धरता है ख़सालत जम मदन भोगी भँवर का तूँ ।"[4]

3·4 नायिका-सौंदर्य - नख-शिख वर्णन

ग़व्वासी की अधिकांश ग़ज़लें लौकिक हैं । इस प्रकार की ग़ज़लों में उसने नायिका के रूप सौंदर्य का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है ।

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्लियात-ए-ग़व्वासी, पृ 135
2· -वही- 136
3· -वही- 137
4· -वही- 128

ग्व्वासी की नायिका साकार साक्षात् ज्वलंत सौंदर्य-प्रतिमा है । उसका रूप अद्वितीय है -

"मैं रूप लई लई धात के ग्व्वासिया देखा वले
तुज रूप नादेर पर बग़र भी किस पे नई माएल हुआ ।"[1]

नायिका का रूप-सौंदर्य निहारने के लिए सुबह तड़के सूर्य निकल आता है -

"तेरा जमाल देखने अक्सर अलस्सुबह
आता है आफ़ताब निकल हर अलस्सुबह ।"[2]

इधर सूर्य नायिका के सौंदर्य पर मुग्ध हुआ । उधर आकाश को सूर्य से ईर्ष्या स्वरूप घृणा होने लगी -

"तेरे जमाल के अगे रोज़ आफ़ताब कूँ
अस्मान चुप रहे न हक़ारत किए बग़ैर ।"[3]

तत्काली सुन्दरियों में ग्व्वासी को अपनी नायिका सबसे भिन्न तथा विशेष लगती थी -

इस दौर के नारियाँ में तूँ अयनाज़ भरी आज
"ग्व्वास" की अँखियाँ में दिसे सब थे अजबतर ।"[4]

नगर में सभी उसके रूप को देख कर होश खो बैठते हैं -

"सब पिया के हैं हुस्न के बेहोश
शहर में कोई हुश्चार नई ।"[5]

1· सम्पादक : मुहम्मद बिन उमर, ग्व्वासी - कुलयात-ए-ग्व्वासी पृ० 107
2· -वही- 116
3· -वही- 119
4· -वही- 120
5· -वही- 131

नायिका ऐसा अनमोल रत्न है कि जिसको देखने पर हर कोई आश्चर्य करने लगता है । यदि वह प्राप्त हो जाए तो कवि उसको कहाँ छुपाएगा -

"अचंबा रतन है वो छुपते न कई
मिले पर उसे मैं छुपाना कहाँ ।"[1]

"ग़व्वासी" झूठ नहीं कहता । उसने आज तक ऐसी सौंदर्य प्रतिमा नहीं देखी -

"ग़व्वासीं होके ज्यूँ है त्यूँ कता हूँ झूट नई इसमें
न देख्या कोई दुन्याँ में तुज ऐसी हूर कूँ अजनूँ ।"[2]

पवन का रूप धारण करके कवि सातों आसमानों की यात्रा कर चुका है, परन्तु उसने आज तक ऐसा तेजस्वी रूप नहीं देखा -

"पवन हो फिर्या सातों अस्मान में
न देख्या तुज ऐसा कहीं भान में ।"[3]

नायिका के पवित्र रूप के अतिरिक्त कवि का मन कहीं और नहीं रमता और न ही उसके नेत्र प्रिय-दर्शन के अतिरिक्त कोई अन्य इच्छा रखते हैं -

"उस पाक रूप बाज निझाते किसी तरफ़
नई मिंज आँखियाँ कूँ उनस आह क्या करूँ ।"[4]

गगन के चाँद-तारे तथा सूर्य आदि नक्षत्र गण नायिका के सौंदर्य प्रकाश से दीप्ति प्राप्त करके ही संसार को आकर्षित कर सके हैं -

"तारयाँ नमन गगन के चन्द-सूर जो पड़े हैं
तुज नूर थे फ़लक पा ऊँची सिढ़ी चड़े हैं ।"[5]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुलयात-ए-ग़व्वासी पृ सं0 135
2. -वही- 138
3. -वही- 145
4. -वही- 146-147
5. -वही- 152-153

सर्वस्व लेखनी के कण-कण को अर्पित करके प्रिय सौंदर्य प्रशंसा के जितने पवित्र शब्द ग़व्वासी लिखना चाहता है, लिखते हुए समाप्त नहीं होते क्योंकि उसकी नायिका का सौंदर्य अपार है । उसकी सुन्दरता के सम्बन्ध में जितना भी लिखा जाय वह कम है -

"बवन खुश खल्क़ के तेरे क़लम स्यों-स्यों कूँ कर अपने
जित्ता मैं सभी सू लिखने कूँ मंगता हूँ तो सरते नईं ।" [1]

नायिका की सुन्दरता देखकर इश्क़ स्वयं अपना जीवन उस पर से निछावर करदे -

देख तेरा जमाल तुज पर थे
जीवें फ़िदा क्यों न इश्क़ करे ।" [2]

कवि ने अपनी आँखों से अपार सौंदर्य देखा है । परन्तु, ऐसा सौंदर्य उसके लिए अभूतपूर्व है, क्योंकि वह ईश्वर प्रदत्त है -

"लई हुस्न तो देख्या हूँ इस अँख्यां सूँ मैं अम्मा
ऐसा कहीं भी हुस्न खुदादाद नहू से ।" [3]

नायिका की सुन्दरता को देखने के बाद कोई भी व्यक्ति अपने आपको काबू में नहीं रख सकता । नायिका के सम्मुख जाना वैसा ही है जैसा कि किसी मोम का अग्नि के सम्मुख जाना । जिस प्रकार अग्नि से साक्षात् होने पर मोम पिघल जाता है उसी भाँति नायिका के सामने जाने पर मन पिघल कर विचलित हो जाता है -

"तुजे देख दिल कूँ घट कर इस ज़माने में कौर रह सकता
के तुज देखें पिघ्छे ज्यूँ मोम अगन के मुख थे गलना है ।" [4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुलयात-ए-ग़व्वासी, पृ सं0 153
2· -वही- 157
3· -वही- 159-60
4· -वही- 164

नायिका के वक्ष-स्थल पर जो मोतियों की जाली झिलमिला रही है, वह वास्तव में मोतियों की जाली नहीं है अपितु समस्त तारकगण उसके सौंदर्य पर मुग्ध होकर गले का हार बन गए हैं । फलस्वरूप नभ-मण्डल तारों से रिक्त हो गया है -

"छब तूं तेरे सीने पे झलते सो
न के वो मोत्यां की है जाली
बल्के तारे तेरे दिवाने हो
आए हैं कर गगन कूं सब ख़ाली ।"[1]

ग़व्वासी नायिका को सम्बोधित करके कहता है कि नायिका के शरीर पर रत्नाभूषण अत्यंत सुन्दर लगते हैं । नायिका सिर से पाँव तक उसे अमृत जैसी लगती है । वह उस सुन्दर रसीली रंग भरी यौवना को गले लगाने की कामना प्रकट करता है -

"तुज तन जड़त सुहते हैं नग अमृत है तूं सर पावं लग
मिज गल कूं लग ज्यूं शाह रग अछ अय रसीली रंगभरी ।"[2]

अंग सौंदर्य

ग़व्वासी ने अपनी ग़ज़लों में जहाँ अंग सौंदर्य के सम्बन्ध में शेर कहे हैं वहाँ उसका अभिप्राय नायिका के शरीर सौंदर्य से है । कवि कहता है सुन्दर आकाश तले स्वच्छन्दता पूर्वक चलकर बैठा जाए क्योंकि नायिका के शरीर से दीप्ति प्राप्त करके ही सूर्य जगमगाया है -

"निछल बैसिये जाकर असमान में
तेरे अंग तैं सूर नूरा हुआ ।"[3]

नायिका के शरीर की स्निग्धता को ग़व्वासी ने अपनी एक ग़ज़ल के निम्न शेर में प्रस्तुत किया है -

---

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी- पृ सं0 169-170

2· -वही- पृ सं0 172-173

3· -वही- 105

नायिका सौंदर्य

खड़े होने न सक नज़राँ फिसलते तेरे तन पर थे
हँवार होर साफ़ जागा है उसी से वाँ फिसलता है ।"[1]

मुख सौंदर्य

मुख से कवि का आशय मुखाकृति से है । ग़व्वासी ने निम्न शेर में, सखी-भाव से, नायिका से पूछा, उसका चेहरा किस आकाश का सूर्य है कि जिसके कारण त्रिलोक में उसकी सुन्दरता का चर्चा हो रहा है -

"कहना सकी तेरा मुख सूरज है किस फ़लक का
त्रिजग में शोर उठ्या है तुज हुस्न के झलक का ।"[2]

"ग़व्वासी" नायिका के चेहरे की बहार में कुछ इस प्रकार खो गया है कि उसे मरु भूमि तथा उपवन आदि से कोई अभिरुचि नहीं रही -

"तुज मुख बहारिस्तान के नादेर तमाशे अँगे
सहरा सूँ क्या निस्बत है मिंज होर फूल-बन सूँ क्या ग़रज ।"[3]

जिस प्रकार रात्रि के घोर अंधकार को दीपक की प्रकार फाट देता है उसी प्रकार नायिका का मुख ग़व्वासी के हृदयगत दुःख के अंधकार को दूर करता है -

"मुख तेरा "ग़व्वास" के दिल का किया ग़म यूँ भंजन
रात की ज़ुल्मात कूँ करता है ज्यूँ भंजन चराग़"[4]

नायिका के मुखमण्डल पर श्रमबिन्दु कवि को वर्षा काल में खिले फूलों जैसे लगते हैं । नायिका के होटों की लाली को "ग़व्वासी" याकूत नामक होरे से अधिक महत्वपूर्ण मानता है -

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं0 164
2· -वही- 109
3· -वही- 122
4· 123

"मुख पे तेरे हैं यूँ अरक़ के बुन्द
फूल फूटे हैं ज्यूँ बरशमाली
मिंज कूँ याकूत के बदल बस है
तुज रंगीली के होंटे को लाली ।"[1]

नायिका को मुख रूपी शमा के प्रकाश से आकर्षित होकर कवि का मन पतंग की भाँति दौड़ता हुआ जाता है -

"देख तुज मुख को शमा कूँ यू जीव
दौड़ता ज्यूँ पतंग जाता है ।"[2]

3·4·1 नयन

ग़व्वासी की ग़ज़लों में नायिका के नयनों की सुन्दरता से सम्बन्धित बहुत से अशार मिलते हैं । नयनों पर कहे गए इन शेरों में विषय की एकरूपता विद्यमान रहने के बावजूद अभिव्यक्ति की विविधता बनी हुई है । अभिव्यक्ति की यह विविधता कवि की प्रतिभा की साक्षी है । प्रस्तुत शेर में कवि ने स्वयं के नयनों का भी उल्लेख किया है । वह अपने चक्षुओं को उद्यान इसलिए कहता है कि उसके नयनों में नायिका की रूप आकृति बसी हुई है । कवि को वह आकृति फूल की सुन्दर डाल जैसी लगती है -

"मिंज नयन के चमन में लई नाज़ुकी सूँ झुलने
नाज़ाँ के फूल की वो नाज़ुक डाल होना ।"[3]

नायिका को अँखियों से नर्गिस तथा गाल की सुन्दरता से यासमिन आदि फूल आनन्दित हो सुख उठाते हैं -

---

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर - ग़व्वासी-कुल्या-ए-ग़व्वासी, पृ सं0 169-
2· -वही- 167-68
3· -वही- 109-110

"तेरे अँखियाँ और गाल के छबहोर नमागी पे ये
है ज़ौक़ नर्गिस कूँ अदिक है यासमिन कूँ आज फ़र्ह ।"[1]

नायिका के नयनों की प्रशंसा करते हुए कवि "ग़व्वासी" नयनों की तुलना "रावतों" से करता है । रावत से अभिप्राय राजपूत है तथा दक्खिनी में राजपूत से अभिप्राय योद्धा होता है । नायिका की आँखें इतनी प्रभावशाली है कि सुबह के समय कोई दिलवाला अर्थात् बहादुर भी उनके सम्मुख आने की हिम्मत नहीं कर सकता । बड़े से बड़े साहसी के लिए भी नायिका नयन प्रेम में पराक्रमी सिद्ध होते हैं -

"तुज नैन रावतों के यकाएक तर्स थे
निकले न यार कोई दिलावर अलस्सुबह ।"[2]

नायिका के नयन प्रेम का सम्बोधन दिये बिना नहीं रह सकते । "ग़व्वासी" को लगता है कि वह इन नयनों के लिए अपना सर्वस्व लुटा कर बर्बाद हो जाएगा -

"तुम नैन ठारते नई इशारत किये बग़ैर
चुप न रसें मिंज आज ओ ग़ारत किये बग़ैर ।"[3]

नायिका अत्यधिक सुन्दर, चंचल और अनुपमेय है एवं उसके नयन भी वैसे ही है -

"अय शूक़ अजब लई जो तूं है सबसे अजबतर
चाले तेरे नैनां के तेरे छब सूँ अजब तर ।"[4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, "ग़व्वासी" कुल्यात-ए-ग़व्वासी -पृ सं0 116
2· -वही- 116
3· -वही- 119
4· -वही- 120

नशीली एवं मादक आँखों की बरूनियों के नुकीलेपन को देख, भयग्रस्थ हो, आकाश थरथराने लगा -

"सर थे पावां लग लगो है थरथरी आफ़ाक़ कूँ
देख पलकां के तेरे ख़ूनी कटार हर तरफ़ ।"[1]

नयन केवल घातक ही नहीं है, उनकी सौंदर्य-प्रशंसा सुन कर मृग-दल ने चारा छोड़ दिया और बेसुध हो गए -

"सुन हरन सेहरा के तेरी आँख की तारीफ़ कूँ
छोड़ दे चारे हुए बेसुध बिचारे हर तरफ़ ।"[2]

नयनों के चंचल हाव-भाव प्रेमियों को युवा अवस्था में ही डालते हैं -

"इश्क़ बाज़ां कू मारता है जवां
तुज नयन का वो शूख़ नाज़ अदां ।"[3]

नयन सौंदर्य के उपरोक्त उदाहरणों के अतिरिक्त इस विषय पर जो अन्य अशार प्राप्त होते हैं उन में ग़व्वासी ने नायिका के नयनों प्रेमियों के लिए घातक बताया है । इस प्रकार ग़व्वासी ने अपनी ग़ज़लों में नायिका के नयनों के माध्यम से एक विशेष प्रकार की आकर्षक सौंदर्य सृष्टि प्रस्तुत की है ।

निम्नलिखित पंक्तियों में ग़व्वासी की ग़ज़लों के वे अशार प्रस्तुत किये जाते हैं जो सुन्दरी के नयनों को, प्रेमियों के लिए, घातक सिद्ध करते हैं -

"जीने का मैं सद्‌या तधांइच उम्मीद
देख उसके पलक कटार कधन ।"[4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात -ए- ग़व्वासी, पृ सं0 123
124

2· -वही- पृ सं0 123-124

3· -वही- पृ सं0 130-131

4· -वही- पृ सं0 131

यथा

है तुज पलक है अब्रू अजब तीर होर कमाँ
कई ऐसी तीर होर कई ऐसी कमान नई ।[1]

यथा

"खंजर थे तेज़ तेरी नयन के ख़याला के धाको थे
पड़्या है तू कड़े होकर कलेजा फाट सीने में ।"[2]

यथा

"किल्याँ के ख़ून करींगे को नयन उसके आज
के वो तो मद पी मती हो निढाल जाती है ।"[3]

ग़व्वासी ने सुन्दरी को भौंओं की कमानों की तुलना उस पवित्र मेहराब से की है जहाँ स्तुति हेतु सजदा किया जाता है । उसका कहना है कि प्रेमी जब तक प्रेमिका के भौं मेहराब में सजदा नहीं कर लेता तब तक नमाज़ में, खुदा के आगे, किया गया सजदा कुबूल नहीं होता -

"अरे दिल उसके भौं मेहराब में करना भला सजदा
के याँ सजदा किये बिन तूँ न होए कद नमाज़ी रे ।"[4]

3·4·2 केश

केवल आँख या मुख अथवा शरीर सुन्दर होने से नायिका सुन्दर नहीं हो जाती । सौंदर्य के लिए केशों का सुन्दर होना भी महत्वपूर्ण है । ग़व्वासी को ग़ज़ले केश सौंदर्य से सम्बन्धित शेरों से संपन्न हैं ।

आकाश से देव दूतों ने धरती पर उतरना छोड़ दिया, क्योंकि वहाँ एक ऐसी सुन्दरी है कि जिसकी अलकों के फन्दे में उनका फँस जाना निश्चित है । धरती के लोगों की बात ही क्या है -

---

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी पृ सं० 136-137
2· -वही- 140-141
3· -वही- 158
4· -वही- 163

"असमान से उतरना छोड़े मलिक तहाँ थे
पैदा हुआ जहाँ थे फाँसा तेरी अलक का ।"[1]

सुन्दरी के श्यामल केशों के प्रति संपूर्ण अकाश कृतज्ञता प्रकट करता है और आकाश से कई गुणा अधिक मेघ-मंडल धन्यवाद देता है कि उसने नायिका की लटों को देखकर वैसा ही रूप धारण लिया है -

"तुज लटाँ का है सदा अम्बर सारा शाकेर
लाक हिस्से अम्बर सारा थे है बारा शाकेर ।"[2]

3·4·3 दाँत

ग़व्वासी ने, ग़ज़लों में, नायिका के दाँतों की सुन्दरता पर भी ध्यान दिया है । वह कहता है कि नायिका जब धीरे से मुस्कुरा देती है तो उसके सुन्दर दाँत अधरों से भी सुन्दर दिखाई देने लगते हैं -

"लब खोल हँसी में जब उतरती है हलूँ तूँ
दिस्ती है बत्तीसी तेरी तुज लब थे अजबतर ।"[3]

दाँतों की सुन्दरता के निखारने में आकाश के तारों की भूमिका थी कुछ कम नहीं -

"जमा कर चोर तारे रैंम तीर तेरे बत्तीसी के
पसारे दाँत छलना कर फ़लक इस चोर को अजनूँ ।"

कपोल सौंदर्य

सौंदर्य एकांगी नहीं होता । वह समग्र होता है । किन्तु उस समग्र को पूरा तब ही समझा जाएगा जब कि उसमें कपोलों का सौंदर्य भी शामिल हो । ग़व्वासी ने नायिका के रूप का वर्णन करते हुए, ग़ज़लों में, सुन्दर कपोलों का भी वर्णन किया है । कवि को उसकी नायिका के

1· संपादक:मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी -कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृ सं0 109
2· -वही- 118
3· -वही- 120
4· -वही- 138

गाल, लालिमा लिए हुए होने के कारण, जन्नत के फल अंजीर जैसे लगते हैं-

> "आशिक़ हूँ मैं किया हूँ इसी भेइच एख़्तियार
> तुज गाल कूँ बहिश्त के अंजीर के बदल ।"[1]

जिस समय नायिका की जुल्फ़े उसके गालों पर झूलने लगती हैं तो वह रमणीय दृश्य ग़व्वासी के मन को विचलित कर देता है -

> "गाल पर जुल्फ़ परेशान हो फिरता है तेरा
> क्यूँ न मैं आज मेरे दिल कूँ परेशान करूँ ।"[2]

नायिका के गाल का सौंदर्य ग़व्वासी के लिए अद्वितीय तथा पवित्र है ईश्वर ने सुन्दरी के गाल को दिव्य प्रकाश से आलोकित किया भक्त ग़व्वासी की रचना पतंग के रूप में की गई -

> "जधाँ चराग़ तेरे गाल का किए रोशन
> तधाँइच मिंज कूं पतंग कर तेरे संगात दिए ।"[3]

यह तथ्य शोधनीय है कि दक्खिनी कवियों के लिए बंगाल विशेष आकर्षण क्यों रखता था । मुल्ला वजही कृत मसनवी "कुत्बमुश्तरी" में मुहम्मद कुली कुत्बशाह और बंगाली नायिका की, कल्पित, प्रेम कहानी दृष्टिगोचर होती है । "ग़व्वासी" को अपनी नायिका के रस भरे गाल बंगाली नारंगियाँ लगते हैं । संभवतः उस युग में ~~बंगा~~ बांगला भूमि नारंगियों के लिए प्रसिद्ध रही हो -

> "लाल दो गाल रंग भरे तेरे
> ऐन ज्यूँ नारंग्याँ हैं बंगाली ।"[4]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृ सं0 124
2. -वही- पृ सं0 145-146
3. -वही- पृ सं0 165-166
4. -वही- पृ सं0 169-170

अधर सौंदर्य

गव्वासी की ग़ज़लों में नायिका के अधरों की उपेक्षा नहीं मिलती। सुन्दरी के अधर कवि को अंगूर जैसे रसीले लगते हैं। उसका मन प्रेमिका के अधर-अंगूर का रसपान करने हेतु विह्वल हो उठता है -

"मिटा कर सुख मेरा तेरे अधर-अंगूर तूं आना
के तपता हूं भोत तेरे अधर-अंगूर कूं अजनूं।"[1]

कवि को लगता है कि उसने नायिका के प्रेम में अपने जीवन को सार्थक किया है और उसके जीवन की सार्थकता में नायिका के लालिमा पूर्ण अधरों का बड़ा योगदान रहा -

"हयात सिर्फ़ तेरे इश्क़ में किया मैं देख
अधर ज़ुलाल तेरे मिंज नवा हयात दिए।"[2]

गव्वासी के एक अन्य शेर में उसके जीवन की बरात प्रेमिका के अधरों पर आकर ठहर जाती है -

"अय जो तुज थे हयात मेरी है
तुज अधर पर बरात मेरी है।"[3]

प्रेमी से बात करती हुयी नायिका बहुत सुन्दर लगती है तभी तो कवि उससे प्रश्न करता है कि वह किस चमन के फूल की डाली है -

"खोल अधर मिंज सूं बोल बारे तूं
किस चमन की है फूल की डाली।"[4]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, गव्वासी - कुलयात-ए-गव्वासी - पृ सं0 138
2. -वही- पृ सं0 165-166
3. -वही- पृ सं0 168
4. -वही- पृ सं0 169-170

दक्खिनी कवि ग़व्वासी की नायिका सर से पाँव तक सौंदर्य की प्रतिमा है । उसके सौंदर्य को आकाश पर रहने वाला चित्रकार अर्थात् ईश्वर जब निहारता है तो अपने आप ही कृतज्ञ हो जाता है -

"सर थे पावाँ तलक और नार तेरी ज़ुबाई
देख अस्मान पे का होए चितारा शाकेर ।"[1]

लोगों ने हँस की चाल और मस्त हाथी की चाल को देख-सुन रखा था । परन्तु "ग़व्वासी" की ग़ज़लों में नायिका की मस्तानी चाल हँस तथा मस्त हाथी को भी मात दे गई -

"हँस होर माते हुस्त को रफ़्तार का तो नाऊँ है
अम्मा अजब इसके अदिक तेरे हैं राफ़्तारां कते ।"[2]

उपरोक्त उप-शीर्षकों, उनसे सम्बन्धित प्रमाणों तथा काव्याभिव्यक्ति के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग़व्वासी की ग़ज़लों की नायिका एक हृष्ट पुष्ट सुन्दरी है । यह सुन्दरी अत्यंत ही रूपवान एवं आकर्षक व्यक्तित्त्व रखने वाली प्रेमिका भी है ।

3·5 ग़व्वासी की ग़ज़लों में मांसलता

ग़व्वासी की ग़ज़लें मांसलता से अछूती नहीं हैं । प्रेम में मांसलता के निर्वाह में कवि की प्रवृत्ति योग की ओर, आंशिक रूप में ही सही, झुकती हुई सी लगती है ।

ग़व्वासी अपनी नायिका ~~ह~~ से निवेदन करता है कि वह उसे अपने अधरों का रसपान कराए -

शर्बत पिला मिंजे तुज अधर का के दिल में आज
रहता नहीं है इश्क़ हरारत किए बग़ैर ।"[3]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं0 118

2· -वही- 171

3· -वही- 119

सुन्दर नारी को कभी लोग वस्तु के रूप में देखते हैं । उनके मन में स्त्री भोग की लालसा भी उठती है । गुव्वासी की नायिका पर हर कोई हवस की नज़र डाले तो क्या बिगड़ता है, क्योंकि नारी का भोग करने के लिए मनुष्य को पहले पुरुष होना पड़ता है । पुरुष वही होता है जिसमें पुरुषार्थ होता है । पुरुषार्थ रखने वाला व्यक्ति पर-नारी पर बुरी नज़र नहीं डालता ।

"हर कोई तेरा किया तो हवस आज क्या हुआ
नर बाज भी किसे न सजे नार का हवस ।"[1]

एक ग़ज़ल के शेर में संभोग का खुला आह्वान है -

"रही हूँ फूल हो परिमल में भोग आ मिंज तूँ गुव्वासी
के धरता है ख़ुसालत जम मदन भोगी भँवर का तूँ ।"[2]

नायिका के होटों की मस्ती इतनी अधिक है के वह प्रेमी की मस्ती की सीमा को परास्त कर जाती है -

"अजब मस्ती है तेरे लब के मद कूँ
के अंपड्या है मिंज मस्ती की हद कूँ ।"[3]

यथा

"पड़ी दौलत है यू मिंज ख़ाब में कल
अधर माशूक़ के दोनों लड्या हूँ ।"[4]

गुव्वासी अपनी नायिका पर इतना आसक्त है कि वह उसे आजीवन छोड़ नहीं सकता -

---

1• संपादक : मुहम्मद बिन उमर : गुव्वासी-कुल्यात-ए-गुव्वासी पृ सं0 121

2• -वही- 128

3• -वही- 129

4• -वही- 131

"जीवें है लग कधीं कूँ ग़व्वासी
छोड़ दे सक न तुज नारी कूँ ।"[1]

सुन्दरी के अधर अंगूर के समान रसीले एवं आकर्षक है । कवि उन रसीले अधरों के लिए उत्तेजित हो उठता है -

"मिटा कर मुख मेरा तेरे अधर-अंगूर सूँ आना
के तपता हूँ भोत तेरे अधर-अंगूर कूँ अजनूँ ।"[2]

यथा

"मिज कूँ याकूत के बदल बस है
तुज रंगीली के होंट की लाली ।"[3]

नायिका सर से पाँव तक अमृत का रूप धारण किए हुए हैं । ग़व्वासी नायिका को अपने आलिंगन पाश में भर लेना चाहता है । वह उसे रसीली एवं मनोहर वर्णवाली लगती है -

"तुज तन जड़त सुहते हैं नग अमृत है तूँ सर पाँव लग
मिज गल कूँ लग ज्यूँ शाह रग अच्छ अय रसीली रंग भरी ।"[4]

3·6 ग़ज़लों में ग़व्वासी का गर्व

ग़ज़लों में प्रयुक्त ग़व्वासी के ऐसे बहुत से शेर मिल जाते हैं कि जिनके अध्ययन से कवि के आत्मसम्मान का अनुमान लगाया जा सकता है । उसका आत्म सम्मान कभी-कभी गर्व की सीमा को छूने लगता है । कुछ ग़ज़लों में आत्म-स्तुति अथवा आत्म-प्रशंसा के अशआर की संख्या दो या दो से अधिक भी हो जाया करती है । इस प्रकार के, एक ही ग़ज़ल के, कुछ शेर यहाँ प्रमाण स्वरूप उद्धृत किये जाते हैं -

"बचन मेरी ज़ुबाँ के आज तारे हो न क्यों झमकें
के है यू चर्ख़ ज़ंगारी वर्क़ मेरे सफ़ीने का ।

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं0 134
2· -वही- 138
3· -वही- 170
4· -वही- 173

पदक है जैन मेरा नज़्म चन्दर-नूर के गुल का
ज़र्द्त है जैन मेरा शेर ख़ूबाँ के ज़रीने का

ज़माने आज के मैं वो नगीना बे बदल हूँ जो
सुलेमाँ बाज कोई क़ीमत न देवे मिंज नगीने का

जकोई इर्फ़ान के साहब सचे हैं सोकते हैं यूँ
के याँ तो कोई दिस्ता नई "ग़्व्वासी" के क़रीने का ।"[1]

तत्कालीन भारतीय कवि, ग़्व्वासी के काव्य को, पसंद करें यह विचार करके ग़्व्वासी ने अपनी कविता की भाषा को मिठास से ओत प्रोत कर दिया -

"तूतियाँ सब हिन्द की रग़्बत करें त्यूँ आज ख़ुश
शकरिस्तान हो "ग़्व्वासी" शकट अफ़्शानी किया ।"[2]

यूँ तो संसार में बहुत से दूर द्रष्टा हैं परन्तु "ग़्व्वासी" की भाँति कोई दूरदर्शी दूर तक दिखाई नहीं देता -

"अंदेशा मिंज दिवाने का नहीं अंदेश सकते कोई
अगर्चे दूर लग तो है अंदेशा दूरबीता का ।"[3]

देवदूत आकाश से ऊँची आवाज़ में ग़्व्वासी का नाम ले लेकर पुकारते हैं और उनसे वचन का साम्राज्य देने के लिए कहते हैं -

"बुलन्द आवाज़ सूँ मलायक यू नाउँ मेरा के पुकारते हैं
ज़ुबाँ की शमशीर सूँ "ग़्व्वासी" मुल्क बचन का लया-लय कर ।"[4]

ग़्व्वासी के काव्य-रत्न पवित्र, निर्मल एवं मूल्यवाद है अत: साहित्य मर्मज्ञ क्यों नहीं, उनसे, लाभ उठाएंगे -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर : ग़्व्वासी - कुल्यात-ए-ग़्व्वासी पृ सं0 106
2. -वही- 109
3. -वही- 109
4. -वही- 119

"ग़व्वासिया नफ़ीस तेरे जौहरां पे थे
क्यों ना होए ज़्याद ख़रीदार का हवस ।"[1]

किसी में इतनी शक्ति नहीं कि वह ग़व्वासी की भांति दाद प्राप्त करे -

"नईं किसे कुदरत जो अपड़े दाद कूं "ग़व्वास" की
ज़ुल्म थे तुज नाज़ के जितना पुकारे हर तरफ़ ।"[2]

ग़व्वासी अपने, तत्कालीन, युग को सम्बोधित करके कहता है कि युग कोई मजनूं जैसा प्रेमी तो बताए जो "ग़व्वासी" की भांति दक्खिन में प्रसिद्ध हो -

"ज़माने आज के मजनूं हो पैदा
हुआ मशहूर "ग़व्वासी" दक्खन में ।"[3]

गव्वासी को यह गर्व है कि उसकी अभिव्यक्ति नूतन है । संसार रूपी उद्यान में उसने काव्य विषय को नई-नई बातें करके उन बातों के फूलों से कविता रूपी वृक्ष को रंग दिया है -

"जम अपने ऊंचे ख़्याल थे नाज़ुक छादां पाए कए
कहता हूं ग़ज़लां रंग भरमां क़ानून नवे लिया पाड़ में
ग़व्वासिया" इस जग के निर्मल-निछल गुल्ज़ार में
बातां के फूलां सूं भऱ्या सो हूं रंगीला झाड़ में ।"[4]

सभी देव-दूत अपने-अपने दलों में यह विश्वास कर चुके हैं कि "ग़व्वासी" धरती और आकाश के मध्य अनुपम कवि है -

"ग़व्वासी बे बदल शाइर है तेरा कर तू अंबर बीच
यक़ीनी लालिए हैं सब म मलिक अपनी कमानां में ।"[5]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर - ग़व्वासी - कुलयात-ए-ग़व्वासी पृ० 121
2· -वही- 124
3· -वही- 129
4· -वही- 133
5· -वही- 142

प्रेम उद्यान के समस्त फूलों में ज्योति जैसे दाँत तथा नर्गिस जैसे नयन वाला कवि "ग़व्वासी" दीन-दु:खी होते हुए भी शाही गर्व करता है -

"इश्क़ के गुलशन के फूलाँ में तमाम
जोत-दंता नयन ज्यूँ नर्गिस हूँ मैं

फ़क्र में करता हूँ शाही अय "ग़व्वास"
तू न को यूँ जान जो मुफ़्लिस हूँ मैं" ।

कवि को यह गर्व है कि वह अपने युग में निर्मल ज्योति की खान स्वरूप है -

"गव्वासी तेरे ज़माने में आज
निछल नूर बन था सो हूँ खान मैं ।"[2]

अपनी ग़ज़लों में ग़व्वासी ने यह भी व्यक्त किया है कि उसका हर शेरा मसीहा है । मसीहा दु:ख दर्द दूर करने वाले को कहते हैं । यदि ग़व्वासी काग़ज़ पर लेखनी फेर देता है तो उसका काव्य-लेखन काग़ज़ को जीवन प्रदान करता है -

"ग़व्वास तेरा शेर मसीहा हो सचीं आज
कागज़ कूँ जिला जीव दिया फेर क़लम कूँ ।"[3]

एक अन्य ग़ज़ल में आत्म-स्तुति परक अशार में ग़व्वासी इस प्रकार मुखरित हुआ है -

"दाएम अजब कुच फ़ैज़ है मिंज तब्अ के चश्मे के तें
अम्रीत आछा गैब का बहता है साल-ए-साल रे

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी-कुलयात-ए-ग़व्वासी, पृ सं0 144
2· -वही- 145
3· -वही- 148

"असरार केरा गंज में खेती सो मैं "ग़व्वास" हूँ
पंज-तन जो हैं पंच गंज सो मिंज गंज के रखवाल रे ।"[1]

कवि जन में से, जिनका स्वभाव कृतज्ञता प्रकट करने का है अर्थात् जो सज्जन-कवि हैं उनके दिल को "ग़व्वासी" की बातें शकर से भी मीठी लगती हैं -

"है शाकेर जकोई उसके दिलकूँ "ग़व्वास"
शकर थे मिठी बात तेरी लगे ।"[2]

विभिन्न ग़ज़लों से उद्धृत प्रमाणों के अतिरिक्त ग़व्वासी की एक सम्पूर्ण ग़ज़ल ऐसी प्राप्त होती है जिसमें उसने अपनी काव्य प्रतिभा पर गर्व किया है । कथित ग़ज़ल की विशेषता को ध्यान में रखते हुए उसे यहाँ उद्धृत करना अनुचित नहीं समझा जाएगा -

धरई दाएम अजब परवान-ए-हिम्मत के परां मेरे
यू नो अम्बर जो ऊँचे हैं सो गमने के धरां मेरे

जहाँ लग बंदरा हैं बेबदल बातां के मोत्यां के
अटल तुजार मैं हूँ होर दो सारे बंदरां मेरे

लिखें गर लोह पर तो जीव पा मछली हो उछले वई
हैं ऐसे निर्मल अमृत से आछी अच्छरां मेरे

न धरता होए ऐसा नूर डोंगर तूर-ए-मूसा का
के धरते हैं तजल्ली नूर जैसे डोंगरां मेरे

उजाले दिल कू होर काली रैन में यू सितारे सब
जो डुबते होर निकलते हैं सो हैं बाज़ीगरां मेरे

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं० 157

2· -वही- 172

दिवाने में कहँ यक घर थे सब कूँ तो अजब क्या है
के जम बाताँ के मंतराँ सूँ भरे हैं दफ़्तराँ मेरे ।

"ग़व्वासी" जोहराँ जोती तो लई धरता जुनूँ में आ
कहाँ वो जोहरी पारक जो परखे जोहराँ मेरे ।

3•8 ग़ज़लों में ग़व्वासी की विनम्रता

अनुभव किया गया है कि दक्खिनी के क्रमश: समस्त हिंदी-उर्दू आलोचकों ने ग़व्वासी को अहंकारी एवं गर्व करने वाला कवि माना है। उन्होंने ऐसा प्रभाव दिया है कि "ग़व्वासी" अपने आगे किसी को कुछ नहीं समझता। इस दृष्टि से अब तक "ग़व्वासी" के वही शेर दोहराए जाते ह रहे हैं जो प्राय: वरिष्ठ आलोचकों के शोध ग्रंथों में उद्धृत किए गए थे। आलोच्य विषय को ध्यान में रखते हुए ग़व्वासी के सम्पूर्ण साहित्य का अध्ययन करने पर यह तथ्य उद्घाटित हुआ है कि "ग़व्वासी" ने कहीं भी शिष्टाचार का दामन हाथ से नहीं छोड़ा। इसमें कोई संदेह नहीं कि कवि ने को कई स्थलों पर अपने काव्य की सराहना की है। परन्तु उसकी ग़ज़लों में विनम्रतापूर्ण भावों को अभिव्यक्त करने वाले शेर भी कम नहीं है। ऐसे अशार इस तथ्य के परिचायक हैं कि ग़व्वासी सुशील एवं विनम्र व्यक्तित्व का मालिक भी था। कहीं-कहीं तो उसकी विनम्रता दास-भावना तक पहुँच जाती है।

ग़व्वासी स्वयं को क्षीण एवं अशक्त मानता हुआ कहता है कि प्रिय का प्रेम ही उसके जीवन की उपलब्धि है -

"दुब्ला ज़ुईफ़ सब थे "ग़व्वासी" तू है वले
धरता है कूर्ब पीव की मुहब्बत के मआल था ।"[1]

1• संपादक : मुहम्मद बिन उमर - ग़व्वासी - कुलयात-ए-ग़व्वासी - पृ सं0 107

यदि कोई ग़्वासी से प्रेम से मिलता है तो ग़्वासी विशाल हृदय पूर्वक जान निछावर करने के लिए तत्पर है । दिल की बात आती है तो कवि विख्यात दानी हातिमताई से, दिल के मामले में, कम नहीं है -

"मुहब्बत में जिया देने न कर सूँ कुच बख़ीली मैं
के मेरा दिल "ग़्वासी" यूँ है ज्यूँ के हातिमतई का ।"[1]

कवि, जीवन में विनम्रता बनाए रखना चाहता है । अतः किसी पर आक्षेप करके वह स्वयं को कलुषित करने की इच्छा नहीं रखता । वह क्यों किसी पर इल्ज़ाम धरे जब कि दुनियाँ की बनावट में ही लूट शामिल है -

"दुनिया ही लूट की बोनी कहें क्यों ख़ोशाचीनी मैं
के हरगिज़ मिंजमने आदत नहीं है ख़ोशा चीना का
"ग़्वासी" मैं दिल का धो सरासर पाक कर दिल कूँ
सफ़ा होर सिदक़ सूँ पकड्या हूँ दामन पाक दुनिया का ।"[2]

"ग़्वासी" विनम्रतापूर्वक स्वीकार करता है कि उसने कोई विशेष उल्लेखनीय काम नहीं किया है । किन्तु न जाने यह किसकी दया है, जिसके कारण लोग उसके कलाम को बार-बार सुनना पसंद करते हैं । वैसे उसे तो अपने काम से काम है -

"बंदा तो कुच काम नई किया हूँ वले यू किस फ़ैज़ है न जानूँ
जो ख़ल्क़ केता है मिंज मुकर्रर तूँ काम अपना किया किया करे ।"[3]

यदि कोई व्यक्ति सहानुभूतिपूर्ण, सत्य प्रेम का मार्ग बताना चाहे तो "ग़्वासी" विनम्रतापूर्वक उस राह में शीश देने से नहीं चूकता -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर - कुल्यात-ए-ग़्वासी - पृ सं0 108
2. -वही- 109
3. -वही- 119

"दिया होर लीस उसके बाट में मैं
यू थोड़ा नई "ग़्वासी" लए किया हूं ।"[1]

सम्पन्नजनों ने कृपा की दृष्टि नहीं डाली । कवि के मन पर मानो अत्याचार कर डाला । उसको दीन-दु:खी जानकर लोग मिलने से कतराने लगे । पर वह भी क्या करें । रोज़गार उसके बस की बात नहीं है । ऐसा लगता है जैसे रोज़गार रकीब से जा मिला है -

"गुर्बर मेरा सरोह लिना फोड़ लेकर आज
हर कोई चौंकते हैं मिलन मिंज ग़रीब सूं

आता नहीं कहे में मेरे रोज़गार अब्
गोया यू रोज़गार मिलया जा रकीब सूं ।"[2]

विनम्रता कवि के व्यक्तित्त्व का एक महत्वपूर्ण अंश है । जो व्यक्ति विनम्र होता है वह प्राय: आस्थावान भी होता है । ग़्वासी ने ईश्वरीय प्रेम का मधुपान किया है । संसार के सम्मुख अपनी दयनीय स्थिति को प्रकट करते हुए उसे लज्जा आने लगती है -

"परम का मस्त मद पी मस्त होकर
गह व बे गाह गाजे सो हमी हैं
ख़ल्क़ में खोल कहने दर्द अपना
"ग़्वासी" सख़्त लाजे सो हमी हैं ।"[3]

"ग़्वासी" अब्दुल्लाह कुत्बशाह को विनम्रता पूर्वक "गुण-ज्ञान का दरिया" कह कर सम्बोधित करता है । वह सुल्तान से विनय करता है कि यदि "ग़्वासी" के वचनों अर्थात् काव्य में कहीं कुछ त्रुटियाँ रह गई हो तो उन्हें सुधारने का कष्ट करें । उसने सुल्तान अब्दुल्लाह

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर - ग़्वासी - कुलयात-ए-ग़्वासी, पृ सं०
2. -वही-
3. -वही-

कुत्बशाह को अंजुमन की शमा अर्थात् सभा का दीप्तिमान दीपक कहा है और स्वयं के हृदय की तुलना दीपक पर भर मिटने वाले पतंग से की है -

"पतंग हो जिउड़ा मेरा फ़िदा हो जाए तुज पर ये
जब आवे शमा होकर तूं झमकता अंजुमन म्याने
दर्या गुन-ग्यान का है तूं कधीं इस्लाह देता जा
अगर कईं कुच ग़लत होवे "ग़व्वासी" के बचन म्याने ।"[1]

3·8 ग़व्वासी की ग़ज़लों में नैतिक मूल्य

मानव जीवन और उसके चरित्र से सम्बन्धित नैतिक मूल्यों को दक्खनी कवि ग़व्वासी ने अपनी ग़ज़लों में पर्याप्त स्थान दिया है । ग़व्वासी द्वारा उद्घाटित यह नैतिक मूल्य प्राय: काल सीमा में आबद्ध नहीं हैं ।

ग़व्वासी कहता है कि जो व्यक्ति एक चित्त होकर एकाग्रता पूर्वक संयम से काम नहीं करता वह अपने लक्ष्य की सिद्धी में सफल नहीं हो सकता -

"अंपड़ सके न वो अपनी मुराद कूं हरगिज़
जिन एक चित्त सूं "ग़व्वासी" तपस्स नहीं करता ।"[2]

जिस व्यक्ति का मन साफ़ नहीं है उस व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने मन रूपी दर्पण पर आई दुश्मनी की गर्द को साफ़ करें । अन्यथा मन में वेर भाव रखने वाले कलुषित व्यक्ति को, सभा में, आदर नहीं मिलेगा -

---

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृ सं० 169

2· -वही- 105-106

कहाँ थे जमीअत पादे क्यों मुख दिखावे उन
के जिसके दिल के दर्पन पर कदूरत का गुबार आया ।"[1]

गव्वासी की दृष्टि में सफल जीवन की प्राप्ति का रहस्य सत्संग में निहित है -

"गर दिल में है तेरे जो कमाई कमाए कुच
तो सोहबत एख़्तियार कर अहल-ए-कमाल का ।"[2]

सज्जनों को चाहिए कि वे उन पर की गई व्यक्तिगत आलोचना को एक सहृदय के रूप में ग्रहण करें -

"जकोई दिल तोड़ बोले होर कहे तो क्या हुआ मिंज कूँ
असर कर से न हर्गिज़ मिंज किसी के बोल होर कए का ।"[3]

गव्वासी के अनुसार संसार में लूट तथा बेईमानी आदि कोई नई बात नहीं है, यह संसार के अंश हैं । अतः दूसरों की बुराई करना अच्छी बात नहीं है ।

"दुनिया हो लूट की बीनी करें क्यों ख़ोशा चीनी मैं
के हर्गिज़ मिंज मने आदत नहीं है खोशा चीना का ।"[24]

कवि मन के मैल को धाकर मन पवित्र करना चाहता है और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह सत्य वचन तथा सत्य आचरण का आश्रम ग्रहण करने की अभिलाषा रखता है -

"गव्वासी मैल दिल का धो सरासर पाक कर दिल कूँ
सफ़ा और सिद्क़ सू पकड़ या हूँ दामन पाक दुनियाँ का ।"[5]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर - कुल्यात-ए-गव्वासी, पृ सं0 107
2· -वही- 107
3· -वही- 108
4· -वही- 109
5· -वही- 109

ग़व्वासी का विचार है कि मनुष्य को चाहिए कि वह अपना दु:ख अपने मन में ही छिपाए रखें। लोग जफ़ा की बात सुनेंगे तो हँसेंगे। अत: मन को कठोर करके मुँह पर मुहर लगा लेना ही उचित होगा -

"किसी कूँ दु:ख जफ़ा तेरा नको कह लोक हँसाई है
ज़बाँ कूँ मोहर कर तूँ हौर सिना करले सख़्त अपना।"[1]

मानव को कभी गर्व नहीं करना चाहिए। अपनी बड़ाई स्वयं करने से बहुत कुछ गँवाना पड़ता है -

"क़द्र अपना न जान अपस कूँ अवे
मैं गँवाया हो चुप बड़ायाँ पड़।"[2]

यदि मनुष्य का अन्त:करण शुद्ध है तो उसका मन अवश्य शान्ति एवं आनन्द प्रदान करेगा। यदि अन्त:करण पवित्र किए बिनए मनुष्य बाहरी संसार में रस-सिद्धि की कामना करेगा तो उसकी इच्छा पूरी नहीं होगी।

"दरू ना साफ़ है तेरा तूँ लज़्ज़त ले दरूने का
फिरेगा भार अगर तूँ यूँ तो पागा भार से क्या हज़"।[3]

मनुष्य का जीवन अधिक नहीं होता। वह दो-दिन का होता है। इस छोटे से जीवन में ऐसे कर्म किए जाने चाहिए कि जिसके कारण लोग हमें भला मनुष्य कहें। हमें मन में, किसी के प्रति छल-कपट का भाव नहीं रखना चाहिए। छल कपट युक्त व्यवहार मानवीय मूल्यों पर बुरा प्रभाव डालता है -

"भला कहवा के जीना खूब इस दो दिन के जीने में
न धरना दिल में कीना कुच के वफ़ा नई है कीने में।"[4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं 113-114
2· -वही- पृ सं0 118
3· -वही- पृ सं0 122
4· -वही- पृ सं0 136

तत्वज्ञानी बनने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य अपनी इन्द्रियों को वश में करले -

"बड़ा मतलब ज़रूरी है जो अपने नफ़्स कूँ समजे
हो आरेफ़ तुरत कर ले हासिल इस मतलब ज़रूरी कूँ ।"[1]

यथा

तू आरिफ है तो सरकश नफ़्स कूँ अपने कहते में लया
के बिरना नफ़्स के कए में ख़राबी की निशानी है ।

यदि वास्तव में कोई सच्चा हम दर्द मिल जाए तो उससे दिल का दर्द कह सुनाना अनुचित नहीं है । क्रूर के सम्मुख अपनी विपदा प्रस्तुत नहीं करनी चाहिए ।

"हमदर्द कोई है तो कह्या जाए दर्द उस
बेदर्द पास बेहूदा इज़्हार क्या करें ।"[2]

3·9 जीवन दर्शन

ग़व्वासी की ग़ज़लों का अध्ययन करने के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि अस्तित्व, आस्था तथा संसार के प्रति उसका एक विशेष दृष्टिकोण था । कवि का यह विशेष दृष्टिकोण मानव-जीवन के संबंध में उसके आदर्शों को प्रकट करता है । इन्हीं तथ्यों के आधार पर हम ग़व्वासी के जीवन दर्शन को प्रस्तुत कर सकते हैं ।

कवि अपने शेरों में जीवन के प्रति उदासीन सा लगता है । मानों संत रूप में मुखरित होता हुआ वह कहता है कि यदि उसके पास

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी पृ सं0 149

2· -वही- 150

कुछ है भी तो उसकी स्थिति वैसी ही रहेगी । जैसा कि उसके पास कुछ नहीं है । यदि उसके यहाँ कुछ नहीं है तो भी भौतिक दुर्लभता उसके मन को विचलित न कर सकेगी । वह एक खोया हुआ इन्सान है उसे अधिकार अथवा अधिकृत नियंत्रण की आवश्यकता नहीं है । उसका मन इच्छाओं से अथवा आसक्तियों से उपर उठ चुका है -

"दिवाना मैं मुसल्लम हूँ रहो या जाओ दिल मिंज थे
न रच का मिंजकूं कुद सुख है न दुःख है मिंज कूँ कुच गए का ।"[1]

चाहे कोई व्यक्ति कवि का दर्द-दुःख जाने या न जाने वह संसार के दुःख दर्द को पहचानता है -

"दर्द दुःख मिंज दरूनी का सो जानों या न जानो कोई
मैं अपना कर तो जान्या हूँ दर्द होर दुःख हर शय था ।"[2]

ग़व्वासी के अनुसार प्रेम प्रेमी की ओर से नहीं अपितु प्रेमिका की ओर से प्रकट होना चाहिए -

"ग़व्वास की दुआ जम भई है जो हर सनद सूँ
माशूक़ की तरफ़ थे आशिक़ नेहाल होना ।"[3]

जब तक जीवन शेष है तब तक सांसारिक बन्धनों तथा उलझनों से मुक्ति सम्भव नहीं । यदि इन उलझनों से छुटकारा चाहिए तो मनुष्य को आत्म-उत्सर्ग करना पड़ेगा -

"दग़दग़े लई हैं जो तलक जीव है
जीव दे दग़दग़्यां थे पाक होना ।"[4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुलयात-ए-ग़व्वासी पृ सं0 108
2· -वही- 108
3· -वही- 110
4· -वही- 110

संसार नश्वर है । इस संसार में मन नहीं रमाना चाहिए । भौतिक दु:खों से वशीभूत हुए बिना, आत्मा की शुद्धि द्वारा, प्रसन्न रहने की चेष्टा करनी चाहिए -

"यू दुनियाँ दो दिवस है मेहमाँ इसे कुच ठैर नई
दिल न बान्द इस साथ तूँ खुशहाल रह याँ ग़म न खा ।"[1]

रात कितनी ही अंधेरी क्यों नहीं होती, रात के बाद दिन अवश्य निकल आता है । इसी प्रकार दु:ख के पश्चात् सुख की घड़ियाँ भी मनुष्य के जीवन को आनन्दमय बना देती है । प्रश्न केवल सहनशीलता तथा ससंयम प्रतीक्षा का है - "रात अंधारी होए

"रात अंधारी होए के हरगिज़ पशेमानी न खैंच
दिन बी आवेगा निकल रोशन हो ताबाँ ग़म न खा ।"[2]

मन रूपी उदयान को आँसुओं से सींचते से एक दिन अपनी आवश्यकताओं अथवा महत्त्वाकांक्षाओं के पेड़ पर फूल और फल अवश्य आ जाते हैं । कभी फलोपलब्धि शीघ्र न होकर, प्रतीक्षा के पश्चात् अर्थात् विलम्ब से होती है । मनुष्य को हताष नहीं होना चाहिए -

"चमन में दिल के अब नैना थे पानी बान्द अंजुआँ का
जो ल्यावे फूल और फल बार हाजत का दरख़्त अपना ।"[3]

ग़व्वासी के अनुसार मनुष्य को स्वयं अपनी क्षमता अथवा स्थिति का वास्तविक ज्ञान होना चाहिए । अपनी व्यक्तिगत सीमा को पहचानते हुए संसार में जो कुछ हो - घट रहा है उसे एक तमाशे के रूप में देखते हुए किसी के आगे हाथ फैलाए बिना आत्म निर्भरता पूर्वक जीवन यापन आदर्श है -

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी- कुल्यात-ए-ग़व्वासी - पृ सं 11
2. -वही- 11
3. -वही- 11

"ग्वासी तूँ ख़बर पारे तमाशा देख दुनिया का रे
अंदेश अपना अंदेशा रे किसी सूँ मिन्नताँ क्या कान ।"[1]

मनुष्य को रचना, मनुष्य के रूप में होना ग्वासी के लिए आकस्मिक घटना है । यदि रचना मनुष्य के रूप में न होती तो उसे पूर्व रूप में ही रवा रहना होता था । जब महान रूप प्राप्त हुआ है तो मनुष्य को सत्कर्म करने चाहिए -

"रच दुनियाँ में बुला गया नई तो
अपनी जागा अपेइच रच हूँ मैं ।"[2]

संसार में मनुष्य को जो दुःख पहुँचा, उस दुःख को उसकी जिह्वा ने व्यक्त किया । परन्तु कटु वचन कहलवाकर जिह्वा को मनुष्य ने जो दुःख दिया उसे जिह्वा कैसे व्यक्त करे । ग्वासी का अभिप्राय है कि हमें मृदु वचन बोलने चाहिए -

"अय दिल तूँ आपना तो कह्या दर्द जीब सूँ
अम्माँ यू जीब कह सके जा किस तबीब सूँ ।"[3]

ग्वासी कहता है कि प्रेम का सौदा सुख देकर दुःख लेने पर पूरा होता है और यह दुःख भी प्रसन्नता पूर्व स्वीकार करना पड़ता है -

"मैं इश्क़ के बाज़ार में राख्या जो क़दन कूँ
शादी के दरम देके लिया ज़ौक़ सू ग़म कूँ ।"[4]

1· संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग्वासी - कुलयात-ए-ग्वासी
पृ सं0 126
2· -वही- 141
3· -वही- 141
4· -वही- 147

मानव जीवन की सार्थकता पर विचार करते हुए ग़व्वासी ने अपने समस्त जीवन दर्शन को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत कर दिया है। निम्न शेर में वह कहता है कि वही जीवन वास्तविक जीवन है जिसमें मनुष्य सद्आचरण सहित निर्भीक होकर जिए। वही जीवन उपलब्धियों से भरपूर माना जाएगा जिसमें कि मनुष्य मृत्यु से भयभीत न हाए।

"गर जिन्दगी की मिंज तूं ख़बर पूछता है तो
जिस जिन्दगी कूं मर्ग नईं वो जिन्दगी भली।"[1]

---

1. संपादक : मुहम्मद बिन उमर, ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृष्ठ सं० 170

पंचम अध्याय

ग़व्वासी के अन्य काव्य रूप : ससामयिक संदर्भ (मर्सिया, क़सीदा एवं रुबाई)

1· मर्सिया से तात्पर्य

1·2 मर्सिया का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

1·3 मर्सिया का विकास : ग़व्वासी तक

1·4 मुहम्मद कुली कुत्बशाह कृत मर्सिये

1·5 मुल्ला वजही का मर्सिया

1·6 अब्दुल्लाह कुत्बशाह का मर्सिया

1·7 ग़व्वासी की मर्सियागोयी

1·8 दक्खिनी मर्सिये का छंद

1·9 मर्सियों में, पात्रवद्-प्रयुक्त प्रसिद्ध एवं प्रचलित नाम

2. क़सीदा : तात्पर्य

2.1 दक्खिनी क़सीदा

2.1.1 प्रारंभिक रूप

2.1.2 मध्यवर्ती रूप

2.1.3 विकसित रूप

2.2 ग़व्वासी के क़सीदे

3. रूबाईयां

3.1 मुल्ला असदुल्लाह वजही की रूबाईयां

3.2 मुहम्मद कुली कुत्बशाह की रूबाईयां

3.3 ग़व्वासी की रूबाईयां

4. समकालीन कवियों के संदर्भ में ग़व्वासी का मूल्यांकन

4.1 ग़व्वासी एवं वजही

4.2 ग़व्वासी एवं मुहम्मद कुली कुत्बशाह

4.3 ग़व्वासी एवं अब्दुल्लाह कुत्बशाह

गुव्वासी की मसनवियों के अतिरिक्त उनके अन्य काव्य-रूप भी अत्यंत महत्वपूर्ण है । गुव्वासी ने अपने काल में प्रचलित क्रमश: सभी काव्य-रूपों में रचनाएं की । तत्कालीन प्रचलित काव्य-रूपों में मर्सिया (शोक गीत), कसीदे एवं रूबाईयां विशेष उल्लेखनीय हैं । इन पर गुव्वासी का अधिकार रहा है । अत: इस संदर्भ में गुव्वासी की अन्य रचनाओं पर विचार करना भी संगत होगा ।

1. <u>मर्सिये से तात्पर्य</u>

प्रस्तुत संदर्भ में दक्खिनी मर्सिए के उद्भव और विकास को दृष्टि में रख कर यह जान लेना अनुचित न होगा कि वास्तव में मर्सिये से तात्पर्य क्या है ? एवं मर्सिये की परिभाषा क्या है ? इस दिशा में उर्दू के विख्यात कवि एवं आलोचक रघुपतिसहाय

"फ़िराक़" गोरखपुरी का अभिमत महत्वपूर्ण है । "फ़िराक़" साहब के अनुसार -

> "मर्सिया अरबी शब्द है । इस शब्द का अर्थ है - मरने वाले के गुणों का इस प्रकार वर्णन करना कि सुनने वालों के हृदय में करुणा का संचार हो ।"[1]

अन्य शब्दों में यह कहा जाए तो संभवतः कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि "फिराक़" साहब साधारणीकर की करुणामय दशा को मर्सिया मानते हैं जिसे कवि शोक-काव्य के माध्यम से पाठक अथवा श्रोता या सहृदय के मन में उत्पन्न करता है । उर्दू के वरिष्ठ आलोचक सिफ़ारिश हुसैन रज़वी की धारणा है -

> "मर्सिया है क्या ? वास्तव में यह वह कविता है जिसमें किसी मृतक के सद्गुणों की अभिव्यक्ति की जाती है । परंतु, व्यवहार में, मर्सिये से अभिप्राय वह कविता है जो कर्बला की घटना पर लिखी गई हो ।"[2]

यथा

> "शब्द-कोश में मर्सिये के अर्थ कुछ भी हों, इसका सर्वस्वीकृत अभिप्राय उस काव्य से है जो कर्बला की दुःखद् घटना पर लिखा गया ।"[3]

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए दक्खिनी के

- -

1) रघुपतिसहाय "फ़िराक़" गोरखपुरी : उर्दू भाषा और साहित्य, पृ॰ 140

2) सिफ़ारिश हुसैन रज़वी : उर्दू मर्सिया, तारीक़-ए-मर्सिया, पृ॰ 10

3) " , " 18

1·2 मर्सिया का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

नबी-ए-अकरम, हज़रत मोहम्मद के देहात के पश्चात् विश्व के एक बड़े भू-भाग पर अरबों का आधिपत्य स्थापित हो गया । परिणामस्वरूप अरबों में अभूतपूर्व संपन्नता आई । धन-संपत्ति मानव-जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन उत्पन्न कर देते हैं । धनवान बनने पर एक ओर ग़रीबी से मुक्ति प्राप्त होती है तो दूसरी ओर धन बहुत सारी बुराईयों की जड़ भी बन जाता है । ऐसे ही समय में अरबों का शासन "बनी-ए-उमईया" नामक दल के हाथों में था ।

बनी-ए-उमईया के अधिकांश लोग इस्लाम धर्म के आर्थिक तथा राजनीतिक सिद्धांतों को अपनाने की अपेक्षा सरकारी प्रभुत्व पर अपना अधिकार बनाए रखने की चेष्टा में लगे हुए थे । बनी-ए-उमईया अपने लिए किसी नैतिक बंधन को भी अनावश्यक समझते थे ।

अत: हज़रत मोहम्मद के क्रमश: पचास वर्ष बाद ही परिस्थितियां कुछ ऐसी बदलीं कि यज़ीद ने अपने आपको ख़लीफ़ा घोषित कर दिया । वह अमीर-ए-मुअव्विया का पुत्र था । मोहम्मद साहब के बाद अरब में उत्तराधिकारी को ख़लीफ़ा कहा जाता था । अपने इस कर्म की पुष्टि के लिए यज़ीद ने मुसलमानों से समर्थन (बैत) मांगा ।

उस समय हज़रत अली के पुत्र एवं पैग़ंबर साहब के नाती हुसैन ने यज़ीद इब्न-ए-मुअव्विया को समर्थन देने अथवा शासक स्वीकार करने से इन्कार कर दिया । यज़ीद के आधिपत्य को अस्वीकार करने के परिणामस्वरूप हुसैन को अत्याधिक संकटों का सामना करना पड़ा । वे बेघर हो गए ।

आलोचक डॉ• श्रीराम शर्मा जी ने मर्सिये का जन्म फ़ारसी साहित्य में खोपा है । उनके अनुसार -

"हज़रत मोहम्मद जिन नवासों को बहुत प्यार करते थे, जो हसन-हुसैन हज़रत मुहम्मद की सुपुत्री बीबी फ़ातिमा और जामाता हज़रत अली की संतान थे, उनका वध हुआ । विशेष रूप से हज़रत हुसैन की हत्या से मानवता ही काँप उठी थी । अनेक शताब्दियों के बीतने पर भी यह घटना भुलाई नहीं जा सकी । इस बलिदान से संबंधित कविता ने फ़ारसी साहित्य में नई विधा - "मर्सिया" का रूप पाया ।"[1]

मर्सिये का क्षेत्र किसी मृतक के सद्गुणों के बखान अथवा कर्बला की दु:खद घटना एवं उससे संबंधित पात्रों के वर्णन तक ही सीमित नहीं है । इनके अतिरिक्त अन्य बहुत से वर्णन मर्सिये के काव्य-क्षेत्र में आते हैं -

"मर्सिये में प्रकृति-चित्रण, घटना वर्णन, तलवार, घोड़ा, विदाई, युद्ध तथा बैन आदि के अतिरिक्त धीरज, धैर्य, साहस, वीरता, बलिदान, सत्य-पथ पर सर्वस्व निछावर कर देने की उत्कंठा, अत्याचार के प्रति समर्पण का विरोध, दु:खों, कठिनाईयों तथा संकटों में घिर कर भी साध्य को दृष्टि में रखने की शिक्षा, संक्षिप्त में यह कि वह सबकुछ है जो एक मनुष्य को महान इन्सान बनाने में सहायक सिद्ध हो सकता है ।"[2]

- -

1) डॉ• श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ• 175-76

2) सिफ़ारिश हुसैन रज़्वी : उर्दू मर्सिया, तारीक़-ए-मर्सिया, पृष्ठ 12

बेसरोसामानी में हुसैन को बहत्तर स्वजनों सहित, मदीने से मीलों दूर ईराक़ में फ़रात नदी के तट पर, यज़ीद की सेना ने घेर लिया । इस संबंध में दक्खिनी साहित्य के एक आलोचक ने लिखा है-

"कूफ़ा के बारह हज़ार लोग हुसैन के लिए लड़ने को तय्यार हुए । "मुस्लिम" का संदेश पाकर हुसैन सन् 680 ई॰ में मक्का से चले । कूफ़ा मक्का से आठ सौ मील दूर था·····जब उबैदुल्लाह के आदमियों ने हुसैन को घेरा, हुसैन भटकते-भटकते कर्बला पहुँचे ।"[1]

हुसैन के साथ उनके जो प्रियजन थे उनमें कोई बाल-सखा था तो कोई उनपर जान निछावर करने वाला था । अन्य लोग हुसैन के परिवार से संबंध रखने वाले थे । भतीजे, भान्जे तथा पुत्र थे । छः महीने के शिशु, हुसैन के पुत्र अलीअसग़र के अतिरिक्त पत्नी, बहन आदि महिलाएं भी थीं ।

यज़ीद की सेना, अपने स्वामी की इच्छा के अनुसार यज़ीद के लिए हुसैन का समर्थन प्राप्त करना चाहती थी ।

यज़ीद, वास्तव में इस योग्य नहीं था कि हुसैन उसका समर्थन करते और उसके प्रभुत्व को मानते । जब हुसैन ने स्वजनों सहित अपने आपको यज़ीद की सेना द्वारा घिरा हुआ अनुभव किया तो उन्होंने तीन दिन तक बातचीत के माध्यम से मामले को हल करने का प्रयत्न किया -

"उन्होंने तीन बातें रखीं - मुझे अपने क़ाफ़िले के साथ मदीना लौटने दिया जाए ।

या

- -

1. डॉ॰ श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृ॰ 179

मुझे दमिश्क पहुंचाया जाए जहां मैं अपना मामला यज़ीद के सामने रखूंगा ।

या

यज़ीद मुझे शत्रुओं से लड़ने के लिए सीमा पर भेज दे ।

उबैदुल्लाह ने कोई बात स्वीकार नहीं की ।"[1] हुसैन से कहा गया कि अब भी समय है । हुसैन "बैत" कर लें । यज़ीद के प्रभुत्व के पक्ष में अपना समर्थन दें । परंतु, हुसैन ने यज़ीद के प्रति "बैत" करने की उपेक्षा आत्म उत्सर्ग तथा बलिदान का मार्ग चुना । सन् हिज्री 61 के मुहर्रम के महीने की दस तारीख़ को §10·10·680 सन् ईस्वी§ अपने बहत्तर साथियों सहित दिन के तीसरे पहर तक हुसैन शहीद कर दिए गए । बाण से घायल होकर के गिरे ही थे कि उनके सर को शरीर से अलग कर दिया गया । हुसैन के शहीद होने के पश्चात् उनके परिवार के अन्य सदस्यों को जिनमें महिलायें, बच्चें एवं सय्यद सज्जाद शेष रह गए थे बंदी बनाकर दमश्क़ भेज दिया गया । उस समय दमश्क़ यज़ीद की राजधानी था ।

मर्सियों में उपरोक्त घटना§-क्रम के अतिरिक्त अत्याचार के वे वर्णन भी मिलते है जो यज़ीद की सेना ने कर्बला के मैदान में हुसैन और उनके साथियों पर किए थे । पानी की एक-एक बूंद के लिए अहल-ए-बैत को तरसाना, तड़पाना, घाव लगाना, नेज़े बरसाना, सर को धड़ से अलग करना तथा नेज़े पर कटे हुए सर को उठाना आदि वर्णन ज़ुल्म और अत्याचार के अभूतपूर्व इतिहास का निर्माण करते है ।

- -

1§ डा· श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृष्ठ सं0 179

1·3 मर्सिया का विकास : गद्वासी तक

भारत में मर्सिया लेखन की परंपरा क्रमशः चार-साढ़े चार सौ वर्ष पुरानी है । वैसे यदि वीर काव्य की दृष्टि से विचार किया जाए तो भारत में वीर-रस प्रधान काव्य चार-सौ वर्ष से भी कई शताब्दियों पूर्व सर्वतोन्मुखी संपन्नता को प्राप्त कर चुका था । परंतु ऐसी अवस्था में जबकि समालोचकों ने मर्सिये को एक पृथक काव्य-विधा के रूप में स्थान दिया है और उसे किसी न किसी भाँति कर्बला की दुःखद घटना से भी जोड़ दिया है । हम वीर काव्य को मर्सिया नहीं कह सकते । यह एक पृथक तथ्य है कि मर्सिये में युद्ध का वर्णन तो विद्यमान है परंतु सहनशीलता, धैर्य एवं संयम जैसे महान गुण भी हैं जो आक्रमणकारी के भौतिक आक्रमण को नैतिक आधार पर परास्त कर समस्त मानव जाति के लिए आत्मोत्सर्ग की एक ऐसी पृष्ठभूमि तय्यार करते हैं जोकि किसी भी पाशविक वृत्ति को परास्त करने की सहज क्षमता रखते हैं ।

विद्वानों का मत है कि मर्सिये का उद्भव, दक्षिण भारत में, दक्खिनी काव्य के माध्यम से हुआ -

"मर्सिये का फैलाव लगभग साढ़े चार सौ वर्ष पर आधारित है, जिसका उद्भव दक्षिण से होता है ।"[1]

डॉ॰ राही मासूम रज़ा ने मर्सिये के दक्खिनी पक्ष पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है । उन्होंने गोलकुण्डा और बीजापुर के सामाजिक परिवेश को दक्खिनी मर्सियेके लिए सहायक माना है । उनके अनुसार -

- -

1) सिफ़ारिश हुसैन रज़्वी : उर्दू मर्सिया, तारीक़-ए-मर्सिया, पृष्ठ-17

"गोलकुण्डा और बीजापुर के शिया बादशाह रणभूमि में थे। ज़र्ब खा रहे थे और ज़ख्म लगा रहे थे। .....गोलकुण्डा और बीजापुर का सामाजिक परिवेश कर्बला की हारी हुई लड़ाई के आधार पर लिखे जाने वाले मर्सियों के लिए उपयुक्त था।"[1]

यह अनुमान लगाना कि दक्खिनी में सर्वप्रथम किस कवि ने मर्सिया लिखा अत्यंत दुष्कर है। हम यह स्वीकार कर सकते हैं कि दक्खिनी में जो मर्सिये प्रारंभ में लिखे गए वे मुहम्मद कुलीकुत्बशाह और वजही के थे। डॉ॰ रशीद मूस्वी के अनुसार -

"दक्षिण में मर्सिये के प्रारंभिक नमूने हमको वजही तथा मुहम्मद कुली कुत्बशाह के यहाँ मिलते हैं। वजही और मुहम्मद कुली दोनों समकालीन थे तथा दोनों ने मर्सिये भी लिखे थे। इन दोनों में से पहले किसने मर्सिया लिखा, यह निष्कर्ष निकालने के लिए हमारे यहाँ कोई ऐतिहासिक बुनियाद ऐसी नहीं है कि जिसके प्रकाश में हम किसी एक को प्राथमिकता दे सकें। एक बात अवश्य ध्यान आकर्षित करती है कि वजही, मुहम्मद कुली के पूर्व इब्राहीम के युग में भी विद्यमान था। इसलिए यह आभास होता है कि मुहम्मद कुली की अपेक्षा वजही को मर्सिया निगारी का श्रेय प्राप्त होता है।"[2]

मुल्ला वजही तथा मुहम्मद कुली कुत्बशाह से पूर्व जिन दक्खिनी कवियों ने मर्सिया लेखन पर ज़ोर आज़माई की उनमें अशरफ़ के "नौ-सरहार" का उल्लेख मिलता है। यह "दह-मजलिस" परंपरा की एक कड़ी है। उक्त काव्य में कर्बला-काण्ड के अन्य प्रमुख पात्रों का उल्लेख नहीं है, इसमें पौराणिकता की अपेक्षा कल्पना को अधिक

- -

1} राही मासूम रज़ा : लेख-अनीस के मर्सिये, धर्मयुग, आठ अक्तूबर, 1967

2} डॉ॰ रशीदमूस्वी, लेख-दक्खिनी- मर्सिया व मरासम-ए-अज़ादारी, मुजल्ला-ए-उस्मानिया, दकनी अदब अंक 1963, पृष्ठ 118

स्थान मिला है ।

सय्यद शाह अशरफ़ बियाबानी और उनकी कृति "नौसरहार" ।

अनुमान है कि सय्यद शाह अशरफ़ बियाबानी का जन्म सन् 1459 तथा मृत्यु 1528 ई॰ में हुई थी । इनके पिता सय्यद शाह ज़ियाउद्दीन रफ़ाई बियाबानी थे । फ़र्राबाद में प्रारंभिक शिक्षा पिता ने दी । सन् 1489 ई॰ में पिता ने अपने स्थान पर खलीफ़ा बनाया तथा सन् 1503 ई॰ में दर्गाह के सज्जादे हुए । इनकी तीन रचनाओं का उल्लेख मिलता है, "लज़िमुलबतद", "वाहेदबारी" तथा "नौसरहार" । पहली रचना "लाज़िमुलंबतद" छत्तीस विभिन्न शीर्षकों पर आधारित एक सौ उठानवे शेरों का काव्य है । यह धर्म तथा नीति के विभिन्न पहलुओं की, संक्षिप्त, व्याख्या प्रस्तुत करता है । दूसरी रचना "वाहेदबारी" शब्द-कोश के रूप में लिखी गई है । इसमें अशरफ़ दक्खिनी शब्दों के फ़ारसी तथा अरबी अर्थ ही नहीं देता अपितु शास्त्रीय ढंग से काव्य की विभिन्न विधाओं की, संक्षिप्त, परिभाषा भी प्रस्तुत करता है ।

अशरफ़ की "मसनवी" नौसरहार, दक्खिनी मर्सिया निगारी के क्षेत्र में एक विख्यात एवं विवादग्रस्त रचना है । मसनवी का नाम "नौसरहार" इसलिए रखा गया कि मसनवी नौ भागों में विभक्त है । इसका प्रत्येक भाग एक हार की स्थिति रखता है । यह नौ भाग क्रमशः बीस उप भागों में बंटे हुए हैं । तत्कालीन परंपरा के अनुसार सभी भागों एवं खण्डों के शीर्षक फ़ारसी हैं । उर्दू साहित्य के वरिष्ठ साहित्यकार जमील जालिबी ने लिखा है -

"नौसरहार में वाक़-ए-कर्बला और शहादत-ए-हुसैन को इस

तरह बयान किया गया है । जो आजकी प्रचलित परंपरा से भिन्न है ।"[1]

"नौसरहार" में अशरफ़ ने यज़ीद की उत्पत्ति के संबंध में जो कुछ बताया है वह विचित्र है । यज़ीद के जन्म से बहुत पूर्व मुआव्विया को ज्योतिष्यों ने कहा था कि उनका होने वाला पुत्र हत्यारा होगा, और हुसैन का अंत भी उसके ही कारण होगा । अत: मुआव्विया ने संकल्प किया कि वे आजीवन विवाह नहीं करेंगे । परंतु, एक रात जब मुआव्विया शौचार्थ उठे तब उनके पुंस पर किसी विषैले बिच्छु ने डस दिया । हकीमों-वैद्यों ने परामर्श दिया कि जब तक आप किसी स्त्री से संभोग नहीं करेंगे तब तक आप पीड़ा से मुक्त नहीं हो सकेंगे । अत: मुआव्विया एक दासी के साथ हो गए । उसी दासी की कोख से मुआव्विया के पुत्र के रूप में यज़ीद का जन्म हुआ ।

इस्लामी इतिहास में यज़ीद का एक योद्धा "हुर" यज़ीद से विद्रोह करके हुसैन के पक्ष में युद्ध करता है । किंतु, अशरफ़ ने "नौसरहार" में यज़ीद के पुत्र को हुसैन की ओर से युद्ध करता हुआ वर्णित किया है ।

"नौसरहार", "शहादत नामा" की कोटि में रखा जाए तो रखा जा सकता है । परंतु, उसे मर्सिया कहने से वाक़-ए-कर्बला की ऐतिहासिकता एवं पवित्रता पर अवश्य आँच आती है । इसके कथानक में इतिहास की अपेक्षा कल्पना की मात्रा अधिक है ।

नौसरहार की शैली पर विचार करते हुए जमील जालिबी ने लिखा है -

- -

1. डॉ॰ जमीला जालिबी : तव्वारीख़-ए-अदब-ए-उर्दू, प्रथम खण्ड, पृष्ठ 176

"नौसरहार का अंदाज़-ए-बयान और लहजा देखकर लगता है कि यह मसनवी मजलिसों में सुनाए जाने के लिए लिखी गई है। इसलिए यह बोल-चाल की भाषा से निकट है और इसमें रोज़मर्रा व मुहाविरों ने तथ्य को प्रभावशाली बना दिया है।"[1]

अशरफ़ की रचना "नौसरहार" के अतिरिक्त अहमद की कृति "मुसीबत-ए-अहल-ए-बैत", रामा राव की "रोज़त-उल-शोहदा" लतीफ़ एवं सेवक आदि की रचनाएं शहादत नामों की श्रेणी में रखी जा सकती हैं। नसीरुद्दीन हाशमी के अनुसार -

"इन शहादतनामों के अलावा गोलकुण्डा और बीजापुर के कई दक्खिनी कवियों के मर्सिये ऐसे हैं जिनमें से कुछ सौ-सौ अशार के भी हैं।"[2]

डॉ॰ परमानंद पांचाल ने दक्खिनी मर्सिये पर प्रकाश डालते हुए कुछ प्रमुख मर्सियानिगारों की सूची दी है। उनके अनुसार -

"आदिलशाही तथा कुत्बशाही काल में अनेक मर्सियानिगार हुए। इन राज्यों के शासक अधिकांशतः शिया संप्रदाय से संबंधित थे इसलिए "हज़रत हुसैन" तथा उनके प्रिय-जनों की शहादत को लेकर दक्खिनी हिंदी में अनेक प्रसिद्ध मर्सियों की रचना हुई थी। इस काल के प्रसिद्ध मर्सिया लेखक थे - अशरफ़, वजही, कुत्बशाह, ग़व्वासी, अब्दुल्लाह कुत्बशाह, लतीफ़, काज़ेम, शाही, नूरी, मुक़ीमी, आदिलशाह, नुसरती और हाशमी आदि।"[3]

- -

1) डॉ॰ जमील जालिबी : तारीख़-ए-अदब-ए-उर्दू, प्रथम खण्ड, पृष्ठ 177

2) नसीरुद्दीन हाशमी : क़दीम उर्दू - दक्खिनी ज़बान, पृष्ठ 13

3) डॉ॰ परमानंद पांचाल : दक्खिनी हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 118-19

1·4 मुहम्मद कुली कुत्बशाह कृत मर्सिये

मुहम्मद कुली कुत्बशाह कृत कुल पांच मर्सिये हमें उपलब्ध हो सके हैं । इनमें से प्रथम मर्सिया अंत में तथा द्वितीय एवं तृतीय मर्सिये प्रारंभ में क्षतिग्रस्त हैं । मुहम्मद कुली कुत्बशाह कृत यह पांच मर्सिये, क्रम से, इस प्रकार है -

॥1॥

मुहर्रम महीने में आया इमामां का सो ग़म फिर कर
ज़मीं हौर आस्मान म्याने भऱ्या सर थे अलम फिर कर

ज़मीं पर क्या बला किया शोर किया गूग़ा हुआ पैदा
यता कुच दिल में दु:ख दायता न निकले ग़म थे दम फिर कर

इमामां तईं सूरज जल-जल हुआ है आग का शोला
जलाया है अपस कूं कोयले नमने सुनम फिर कर

मुसलमानां नद्दियां सारे भराओ अपने अंझुआं थे
के आया है इमामां का बला सिर थे सितम फिर कर

मुहर्रम का न लेवो नाउं कद तुम अय मुसलमानां
क़यामत हो क़यामत का उचाया है अलम फिर कर

न भा दु:ख दर्द हूरां कूं कद है जन्नत नने यक तिल
हुसैनां के दु:खों मातम पकड़ते हैं जनन फिर कर

॥2॥

लहू रोतीं हैं बीबी फातिमा अपने हुसैनां तईं

1॥ सं·डॉ· मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" : "कुलयात-ए-मुहम्मद कुली कुत्बशाह", "अन्य विधाएं", पृष्ठ 56/1 - 56/8 एवं पृष्ठ 57-60

ओ लहू लाली का रंग लालो गगन उपराल छाया है

इमामां पर हुआ सो दु:ख नको पूछो मुसलमानां
हर यक ईमाम पर यक दु:ख बहुत घाता बसाया है

ज़ुल्म कैसा हुआ है आह दुनियां में उनन ऊपर
याता ज़ुल्म-ो-बला सब फ़ातिमा ख़ातिर मिलाया है

एगारह महीने के ननने महर्रम क्यों नहीं है तूं
सभी महीने में खुशियां करते तूं अब दु:ख बलाया है

किया है मैहमानी यूं इमामां का मुहर्रम तूं
जंगल में कर्बला के सब बलायां को बुलाया है

मुसलमां तूं नहीं है इस बराबर कोई बला जग में
के अंझुआं के लहू सीती प्याले भर पिलाया है

इमामां थे नंगे कौलां सो शामी-शोमी काफ़िर
हुए बेक़ौल तो उन तईं खुदा दो ज़ख़ बनाया है

किये हैं मौमिनां किलवत हसन के ज़हर थे हरया
सो इस के छांव थे अस्मान अपना रंग भराया है

खुदाया क़ुत्बशाह कू बख़्श तूं हुरमत इमामां की
के उनकी मदद का हल्क़ा मेरे कन में सुहाया है

मदद करने मलिक आए क़ुबूले नईं इनाम उनकू
के हैदर हात थे जब्बार दंदियां तर गिराया है

सूरज जलता है सारे मातम्यां के आह थे सब दिन
चंदाइस शर्म थे गुल कर सो अपना सिर नवाया है

उमर, उस्मान थे दीन में हुआ है सब ख़लल पैदा
जिनकी बाता थे मज़हब में बड़ा हीला उठाया है

यज़ीद-ो-सब यज़ीदियां मर्ग बन हुशियार न होतें
दुनियां वे नाल थे उनका तो मुख कद यही फिराया है

यज़ीदियां का तो वक़्त आया करो लानत यज़ीदां उपर
खूर के गोह में दाड़ी मूछियां तर भुई डुबाया है

यज़ीदियां का सो क़िस्सा ज़ुल्म का कोई ना सके कहने
के जानन-पन थे शैतान इन कने तालीम पाया है

यज़ीद-ो-शमर की कामां न कर सई कोई शैतान भी
हज़ारां लान है उस पर जिन ऐसा पूत जाया है ।

{3}

यतीमां आह हौर दर्द इते है हौर कचा जलता
उसी थे दो जहां तई नील का कसवत पिनाया है

इमामां बारह कूं आकर ज़ुल्म सूं दुःख दिए काफ़र
उसी थे फ़ातिमा का मुख लहू सीतीं धुलाया है

यतीमां वाह प्यासे वाह प्यासे कर रो वें मिलकर
इसी दुःखदर्द थे अंझू गला उनका सुकाया है

अपने जीवना-जान्तूं दीवे नमन इस दुःख थे जालता कर
परियां, हूरां अपस अंखियां थे लहू अंझू चुआया है

इमामां का क़िस्सा कहने नहीं है जीब कूं ताक़त
शहीदां के ग़मां थे दर्द-बदल जग पे छाया है

ख़ुदाया दाद ले हौर दाद ले उस ज़ालिमां कन थे
के जद नहीं सो यतीमां पर जफ़ा हौर ज़ुल्म धाया है

अगर दावे धरें ईमान के तुम सब मुसलमानां
रोवो दम-दम के दोज़ख़ अग्न थे तुनना कू छुड़ाया है

इमामां की दुआ थे क़ुत्बशाह कू दे शफ़ा यारब
शहीदां दोस्ती थे सब शहां म्याने सराया है

ओवो मिल कर मातम्यां सब इस ग़मां थे लहू रोवें
वा इमामां या इमामां याद कर-कर दिल खोवें ।

आह हमारे दर्द थे दरिया कूं सब जोश आवता
मातम्यां के लहू-बुंदां थे आग सब बुंज जावता

सब दु:खां कूं अंत है इस दु:ख के ताईं अंत नहीं
फ़ातिमा दु:ख के पूत बन इस जग मने नईं नूर कईं

फ़ातिमा दु:ख थे अर्श-कुर्सी थे ग़म अंझू सटे
सातों अस्मां हौर ज़मीं में आग की भड़की उठे

मुस्तफ़ा के बाग़ के फूलां कूं बिन पानी सुकाए
मुस्तफ़ा हौर मुर्तुज़ा हौर फ़ातिमा का दिल दु:खाए

नील कपड़े पहनें हैं पैग़ंबरां इस ग़म सतीं
दुश्मनी पकड़े भज़ीदां माल व हौर ख़ातम सतीं

ज्यूं नबियां में मुस्तफ़ा है त्यूं इमामां में हुसैन
कुफ़्र के तईं मान कर इस्लाम केते है हुसैन

दोस्ता रो-रो लहू ग़म थे असर है हम असीर
बाप नईं-मां नईं हुसैन है कर्बला-बन में असीर

अपने पूतां कूं कहे पंद-बुंद पीव तुम चुप रहो
मेरे बाद अज़ प्याल मेरा मेरे लोगां कूं कहो

जुल्म बेहद केते बाबा ज़ालिमां कन दाद यू
तुम ग़जब का तेग़ सब मज़्दियां के सर पर देयू-देयू

दीन-दुनियां के शाह रख कुत्ब ज़मां कू अप पनाह
तुन्हीं बख़्शाओ खुदा कर लुत्फ़ सूं मेरे गुनाह

दो जग इनानां दुःख थे सब जीव करते ज़ारी वाए-वाए
तन रुखों की लकड़ियां जालकर करते है ख़्वारी वाए-वाए

सातों जगत, आठों जन्नत, सातों दरिया, सातों धरत
एकस थे एक आपस में अप दुःख करते कारी वाए-वाए

काला किया कसवत मुका देखो इनानां दूथ थे
जुलमात बी काला हुआ इस दुःख थे भारी वाए-वाए

लौह, हौर क़लम, कुर्सी, अर्श, कुदूसियां, मलिक, गुल्मान सब
बिजलियां, बदल उड़रावते हैं रात सारी वाए-वाए

अस्मान छज-जाला हुआ, सूरज अगन वाला हुआ
चंदर सो जल काला हुआ है दुःअपारी वाए-वाए

पंखी सटे है सब परां रो-रो भराए समूदरां
छोड़े है सब अपने घरां देखों तो ज़ारी वाए-वाए

काले हुए दुःख थे मंगल सर पर सटे माटी सकल
तो पकड़े इस दुःख थे जंगल है बेक़रारी वाए-वाए
फूलां सके सब दुःख सती मुख मुंदे बुल-बुल झखसती
कोयल हुसैनादुःख सती बन-बन पुकारी वाए-वाए

देखो तुमीं अय मानसां दाने चरैं न पंखियां
धरती है मातम की दु:खां धरती बिचारी वाए-वाए

दो जग ख़राबां हो रहे हैं वां कबाबां हो रहे
समदर सराबां हो रहे ना होए जारी वाए-वाए

दु:ख-आग सूं जग-बन जले आकास ता धरती हिले
खन पर फ़रिश्ते खल्बले सट ए खुते चारी वाए-वाए

हज़रत नबी के गेसुआं दोनो इमामां के पगां
जिब्रील झुलावे अप हतां आ रात सारी वाए-वाए

हज़रत अली के दो पूतां कांधे नबी पर उंटनियां
तिस पर चढ़े दो शह जवां इस धात सारी वाए-वाए

शहज़ादे कए सबके उंटां ननने पुकारे उस ज़मां इफ़्फ़अफ़
नबी तिनकूं सुनां दे दुई बारी वाए-वाए

जिब्रईल आकर कहे तिसरी बरां जो उफ़ किए
इस उफ़ू थे जग पाएगा सब सख़्तगारी वाए-वाए

दो नूर-दीदे बीबी के आख़र देखो क्यों दु:ख दु:खे
लहू में लड़े प्यासे झुक्के देखो ये ख़्वारी वाए-वाए

यक पूत को देते ज़हर यक पूत पर खींचे खंजर
काफ़िर किए कैसे क़हर यू ज़ख़्मकारी वाए-वाए

दु:ख-बात कूं तो जीब जले लिखने क़लम बीना चले
दिल ज्यूं शमे जल तिलमले सुख की हमारी वहाए-वाए

"क़ुत्बा" कहे दिल के बचन हरदम मदद मिंज पंज-तन
राखे ख़ुदा मिंजकू जतन दुश्मन कू ख़्वारी वाए-वाए

"क़ुत्बा" कू है अल्लाह मदद बसता है इस दिल में अहद
तू मिंज मदद हैदर वल्द बेर्‌या कू ज़ारी बवाए-वाए

1·5 मुल्ला वजही का मर्सिया

मुल्ला वजही के मर्सिये आलोचनात्मक अध्ययन के लिए उपलब्ध नहीं है। अब्दुल्लाह क़ुत्बशाह के एकमात्र मर्सिये की भाँति वजही का एकमात्र मर्सिया भी स्वर्गीय नसीरुद्दीन हाशमी ने "मुजल्ला-ए-मक्तब-ए-हैदराबाद" में प्रकाशित किया था। कालांतर में उक्त मर्सिये को हाशमी साहब ने अपनी पुस्तक "दकन में उर्दू" के दो पृष्ठों में स्थान दिया है। यह मर्सिया भी उन्हें मौलवी सफ़ीउद्दीन साहब की बयाज़ से मिला था। मर्सिया यहाँ उद्धृत किया जाता है -

हुसैन का ग़म करो अज़ीजाँ
अंजू नयन सूँ झड़ो अज़ीजाँ

बिना जो अव्वल हुआ है ग़म का
अर्श गगन होर धरत हिलाया

क़ज़ा नें ज्यों-ज्यों लिख्या इलाही
गिरिया हुसैन पर ओही सनाया

न बियाँ-वलियाँ के अंजुआँ सूँ मुकड़े
यू ग़म हुसैन का जनम धो लाया

दिलाँ में दो फुग्गी चहवा ने छुटकियाँ
यू ग़म ने सुल्गा धरक लगाया।

एक मर्सिया मौलवी सफ़ीउद्दीन की बयाज़ से प्राप्त हुआ है ।"[1]

इस बात को अब्दुल्लाह कुत्बशाह के दीवान के संकलन कर्ता सय्यद मुहम्मद साहब ने भी स्वीकार किया है । दीवान में उन्होंने मर्सिया समाप्त होने के पश्चात् पाद-टिप्पणि में हाशमी साहब की पुस्तक का उल्लेख भी किया है - जैसे वे लिखते हैं -

"एक मर्सिया जो प्राप्त हो सका वह संग्रह में संकलित है ।"[2]

मर्सिया

अली हौर फ़ातेमा करते हैं दोनो आज ज़ारी भी
हसन का हौर हुसैन का डोला ल्याया जग पो ख़्वारी भी

हुसैना जब चले लड़ने सरां भुईं पर लगे पड़ने
शहीदां हुर तरफ़ चरने लग्या यू दु:ख प्यारी भी

वसीयत यू किए जाते न को रो तुम अप भाते
नहीं तो फिर को नईं आते अजल आई हमारी भी

यतीमां को संभालो हौर ग़रीबी में सिखालो हौर
भोत नीरां सूं पालो हो रहेगी यादगारी भी

पड़ेगा ग़म तुमन पर जब, मेरा ग़म याद करना तब
यू दु:ख याद आवेगा हर वब करो नईं अश्कबारी भी

तुने यू ग़म-ए-हरम सारा हुआ मुस्लिम निराधारा
सो मारे कल गला नारा पकड़ कर बेक़रारी भी

1) नसीरुद्दीन हाशमी, क़दीम उर्दू-दकनी ज़बान, पृष्ठ 129
2) सय्यद मुहम्मद, दीवान-ए-अब्दुल्लाह कुत्बशाह, भूमिका, पृष्ठ 15

यू क्या बला था यू क्या ज़फ़ा था
मगर क़ज़ा था सो हक़ दिखाया

मुहब दिलाँ कूं अजल का साक़ी
प्याले ग़म के सो भर पिलाया

यू क्या अंदेशा अंदेश केता
फ़लक शहाँ पर सितम खुदाया

हुसैन पो यारा दुरूद भेजो
के दीन का यू दीवा जलाया

तुमारे वजही कूं या इमामाँ
नहीं तुमन बिन यू इसको साया ।[1]

1·6 अब्दुल्लाह क़ुत्ब शाह का मर्सिया

अब तक अब्दुल्लाह क़ुत्बशाह का केवल एक ही मर्सिया प्रकाश में आसका है । यह मर्सिया नसीरुद्दीन हाशमी साहब की दो पुस्तकों- "क़दीम उर्दू-दकनी ज़बान" तथा "दकन में उर्दू" में सम्मिलित किया गया है ।[2] यह मर्सिया हाशमी साहब ने मौलवी सफ़ीउद्दीन साहब की ब्याज़ से प्राप्त किया था । इस संबंध में हाशमी साहब लिखते हैं -

"इसका "अब्दुल्लाह क़ुत्बशाह का" जो दीवान मिला है उसमें कोई मर्सिया नहीं है । वह क्षतिग्रस्त है । इतना अवश्य है कि

---

1) नसीरुद्दीन हाशमी, दकन में उर्दू, पृष्ठ 184-85
2) " , क़दीम उर्दू-दकनी ज़बान, पृष्ठ 129
3) " , दकन में उर्दू, पृष्ठ 58-61

शहरबानो कहे आकर के आय संसार के सरवर
मिंजे गुर्बत मने भाकर नजाओ छोड बारी भी

मिंजे की जाओते यू हाल तुमन बाद अज़ मेरा क्या हाल
करो मत गम से पाएमाल देओ दरस तुमारी भी

अली अकबर कहे हैं जाउं सो प्यासा मैं जो बाले लाउं
ज़ख्म खा आए फिर अब ठाउं यही है निश्क सारी भी

देखो सिफ्लां मंगे पानी न कर ज़र्रा मेहरबानी
सितम हूं तीर मारने गए वो नावकारी भी

हुसैन पानी पिने आए यज़ीदां तीर बरसाए
सो पानी पीने नईं पाए लगी मुख लहू की धारी भी

बग़ैर अज़ ज़ुल्म बेदादी न थी इस वक़्त कुछ शादी
हुई क़ासिम की दानादी देखो तक़्दीर-ए-बारी भी

सो दंदियां नबूवत बूंद कर जो खुशियां सात पेवंदकर
हरम कू ले चले बंदकर पड्या जग सब अंधारी भी

अरस आकर पकड़ दामन चले नोशू हो जब झझन
निशानी कुछ देओ मिंज कन सो प्यारा संभल तुम्हारी भी

हुसैन का वक़्त जब दाद्या शुमर ने आगला काद्या
हरम का देटव सीना फाद्या देना और उपकारी भी

नंगी पाउं चले आए सो पावां कू छले आए
अगन देखीं चले आए न कीते दोस्तदारी भी

क़पट-कीने सीते पेश आ क़्यामत कुछ न अंदेशा
अपन मार्‌या अपे तीशा तो पाया गिरफ्तारी भी

यज़ीद देखा हुसैन का सर फिर आया पेट सूँ भर-भर
सो देखो लोगूंती काफ़िर किया कुफ़्र एख़्तियारी भी

करवाए दोस्तां, मातम सवाब है बहुत करना ग़म
मदद होईगी इमाम हरदम की है उम्मीदवारी भी

हुसैन का दूक दिल में आन यकायक चट सूँ दायम वहां
करे क़ुत्ब अब्दुल्लाह सुल्तान दु:खों सूँ सहर यारी भी[1]

1·7 ग़व्वासी की मर्सिया गोयी

यह तथ्य निर्विवाद है कि वजही तथा अब्दुल्लाह क़ुत्बशाह द्वारा रचित मर्सियों को स्वर्गीय नसीरुद्दीन हाशमी ने सर्वप्रथम दक्खिनी के अध्ययन कर्ताओं के सम्मुख रखा । परंतु ग़व्वासी के मर्सियों को सर्वप्रथम पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने का श्रेय मुहम्मद बिन उमर तथा डॉ॰ मुहीउद्दीन क़ादरीज़ोर को है, क्योंकि मुहम्मद बिन उमर ने ग़व्वासी का जो कुल्यात तय्यार किया था उसे अंतिम रूप देकर डॉ॰ मुही उद्दीन क़ादरी "ज़ोर" ने प्रकाशित करवाया । ग़व्वासी की कुल्यात के प्रकाशन से पूर्व मुहम्मद बिन उमर साहब की मृत्यु हो चुकी थी । प्रस्तुत शोध-प्रबंध के लेखक को ग़व्वासी के दो, मर्सिये प्राप्त हो सके हैं, जोकि ग़व्वासी के काव्य-संग्रह "कुल्यात-ए-ग़व्वासी" से उद्धृत हैं । ग़व्वासी के मर्सिये क्रमिक रूप से इस प्रकार हैं -

(1)

दिस्ता नहीं करूँ क्या वो भान कर्बला का
फिरता हूँ ज़ार हूँ मैं हैरान कर्बला का

---

1) सं॰ सय्यद मुहम्मद, अब्दुल्लाह क़ुत्बशाह-दीवान-ए-अब्दुल्लाह क़ुत्बशाह, पृष्ठ 115-118

[illegible] ते सुनाया जिब्रील उतर को आया
रोता उपर ते लाया फ़र्मान कर्बला का

घर बाँद कर्बला मैं कर शुक्र हर बला मैं
क्यों है कि कर्बला में सुल्तान कर्बला का

है दु:ख बड़ा यू सबते नई किस्से बी क़राबत
पकड़या हुसैन जबते मैदान कर्बला का

दु:ख सर मलिक लिये हैं मातम ज़दे हुए हैं
रो-रो दरिया किये हैं अस्मान कर्बला का

चंदा न सुख सूं सोता इस दु:ख सूं उम्र खोता
तारयां सूं रोज़ रोता फ़र्मान कर्बला का

जलता है सूर ज्योति दुनियां खड़ी है रोती
जाते हुआ यू करती मेहमान कर्बला का

मिंज सुक नहीं है दु:ख बिन हूं मैं निढ़ाल छन-छन
लाग्या है रात हौर दिन मिंज ध्यान कर्बला का

ये दर्द-दु:ख बिसारा मिंज शाद करने हारा
जो है हुसैन प्यारा शहजान कर्बला का

"ग़व्वासिया" मोअत्तर आलम कूं सब किया है
गोया यू मर्सिया है रेहान कर्बला का[1]

---

1 सं॰ मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी : कुल्यात-ए-ग़व्वासी
पृष्ठ 203-204

(2)

माह-ए-मोहर्रम सोज़ सूं आया उबल दिल तेज़ सूं
आलम रोता यक रेज़ सूं क्या काम कीता हाय-हाय

क्यों हैफ़ नईं आया तुजे किन बंद सिखलाया तुजे
यू काम क्यों भाया तुजे क्या काम कीता हाय-हाय

कर बादशाही पर सितम शाहां कूं देता ग़म-पो-ग़म मज़लूम पर
करने सितम ख़ौफ़ी न खाया हाय-हाय

दुःख शाहज़ादे कूं दिया बदनामी अपने सर लिया
आख़िर वो काफ़िर क्यों किया अपनाई च खवाया हाय-हाय

मो राख कफ़नी भा गले जोगी जंगम पर ले चले
आज़ाद सूं बैराग ले सब तन जलाया हाय-हाय

रोते मलिक सब अर्श लग सूरज बिसार अपना झलक
मशिरक़ ते ले मग़रिब तलक अंधकार पाइया हाय-हाय

ग़म सूं पकड़ बैत-उल-हज़न याकूब ने खोया नयन
शीरीं के खाने कोहकन अप जीव गंवाया हाय-हाय

बोले "ग़व्वासी" मर्सिया रोए दकन के औलिया
हर साल था यू मर्सिया क्या काम कीता हाय-हाय ।[1]

ग़व्वासी के उपरोक्त, द्वितीय मर्सिये के मक़्ते में इस बात का संकेत मिलता है कि कवि हर साल, कम से कम, एक मर्सिया अवश्य लिखता था तथा यह मर्सिया बादशाह द्वारा आयोजित किसी मजलिस

- -

1) सं० मुहम्मद बिन उमर, कुल्यात-ए-ग़व्वासी, ग़व्वासी, पृष्ठ 204

में पढ़ा जाता था । खेद है कि उपरोक्त मर्सियों के अतिरिक्त "ग़व्वासी" के अन्य मर्सिये अनुपलब्ध हैं ।

1·8 दक्खिनी मर्सिये का छंद

यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि दक्खिनी मर्सिये तथा मसनवी के छंद में कोई भेद नहीं होता -

"दक्खिनी में हुसैन तथा उनके साथियों पर लिखे गए कथात्मक काव्यों में वही छंद प्रयुक्त हुआ है, जो अन्य आख्यानक काव्यों में प्रयुक्त होता रहा है ।"[1]

डॉ॰ रशीद मूस्वी का मत डॉ॰ श्रीराम शर्मा के मत से भिन्न है । लिखती हैं -

"दक्खिनी के प्रारंभिक मर्सिये संक्षिप्त और क़सीदे के रूप में लिखे जाते थे । बाद में, मुसल्लिस, मुरब्बा और मुख़म्मिस एवं कालांतर में मुसद्दस के रूप में लिखे जाने लगे ।

x x x x x x x

मुहम्मद कुली के काव्य-संग्रह में कुछ मर्सिये, नौहे और सलाम भी शामिल हैं । यह मर्सिये ग़ज़ल के रूप में लिखे हुए हैं ।"[2]

कुछ मर्सियों को गीत की कोटि में रखने की चेष्टा भी आलोचकों ने की है और उन्होंने, इस दृष्टि से, विभिन्न राग-रागनियों का उल्लेख भी किया है -

- -

1) डॉ॰ श्रीराम शर्मा : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृष्ठ 181

2) डॉ॰ रशीद मूस्वी : लेख - "दक्खिनी मर्सिया व मरासम-ए-आज़ादारी, मुजल्ल-ए-उस्मानिया", दक्खिनी अदब नंबर, 1963 पृष्ठ 118

"रूप तथा स्वभाव की दृष्टि से मर्सियों का "गीत" की कोटि में होना भी भारतीय प्रभुत्व का प्रमाण है । वे मर्सिये जो राग-रागनियों के अनुसार लिखे गए हैं, उनमें राग-रागनियों के नाम तक मिलते हैं ।"[1]

1·9 मर्सियों में पात्रवत - प्रयुक्त प्रसिद्ध एवं प्रचलित नाम

इमाम-ए-हुसैन के बहत्तर साथियों तथा यज़ीद और उसके सहायकों आदि के विभिन्न नामों में से ऐसे नाम जो प्रायः मर्सियों में प्रयुक्त होते रहे हैं, पात्रवत्, निम्नलिखित हैं -

नाम	संक्षिप्त-परिचय
इमाम-ए-हुसैन	हज़रत अली के पुत्र, हज़रत मोहम्मद के नाती, इमाम-ए-हसन के छोटे भाई
शहर बानो	इमाम-ए-हुसैन की पत्नी
अब्बास	इमाम-ए-हुसैन के सौतेले भाई
ज़ैन-उल-आबेदीन अथवा सय्यद सज्जाद	इमाम-ए-हुसैन के पुत्र
अली अकबर	इमाम-ए-हुसैन के पुत्र
अली असग़र	इमाम-ए-हुसैन के छः मास के शिशु
कुब्रा	इमाम-ए-हुसैन की पुत्री
सोग़रा	इमाम-ए-हुसैन की पुत्री
सकीना	इमाम-ए-हुसैन की पुत्री

1। सय्यद अब्दुल सत्तार, लेख-दक्खिनी शाइरी और हिंदुस्तानियत, सबरस, सितंबर, 1984, हैदराबाद, पृष्ठ 28

ज़ैनब	इमाम-ए-हुसैन की बहन
क़ासिम	इमाम-ए-हुसैन के भतीजे, इमाम-ए-हसन के पुत्र
मुस्लिम बिन अक़ील	इमाम-ए-हुसैन के चचेरे भाई
हबीब इब्न-ए-मुज़ाहर	इमाम-ए-हुसैन के बाल-सखा
फ़ुज़्ज़ा	जनाब-ए-फ़ातिमा की दासी
शीरी	शहर बानो द्वारा मुक्त की हुई दासी
हुर	यज़ीदी सेना का वह योद्धा जिसने कर्बला में यज़ीदी सेना का बहिष्कार किया और इमाम-ए-हुसैन के साथ हुआ ।
यज़ीद	खिलाफ़त का दावेदार, जिसकी सेना ने कर्बला में इमाम-ए-हुसैन को शहीद किया ।
उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद अथवा इब्न-ए-ज़ियाद	यज़ीद का पक्षधर एवं "कूफ़ा" का राज्यपाल
उमर बिन सईद	यज़ीद की सेना का सरदार
शिम्र	यज़ीद की सेना का एक अधिकारी जिसे यज़ीद ने कर्बला के अभियान पर भेजा था ।

2· क़सीदा : तात्पर्य

"क़सीदा" शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा में हुई । अरबी साहित्य में इसे विरेचन के अर्थ में लिया गया । यह तथ्य भी निर्विवाद है कि "क़सीदा" शब्द अरबी के "क़सद" शब्द से बना । "क़सद" शब्द का अर्थ - इरादा करना, निश्चय करना, लक्ष्य निर्धारित करलेना तथा मन में ठान लेना होता है । क़सीदे के शिल्प को ध्यान में रखते हुए इसके आलोचक ने लिखा है -

"क़सीदा उस सुदीर्घ कविता को कहते हैं जिसके पहले शेर की दोनों पंक्तियां अर्थात् अन्त्यानुप्रास तथा अन्य अशार के दूसरे मिस्रों (काव्य पंक्तियों) का "क़ाफ़िया" व "रदीफ़" एक हों और जिसमें प्रशंसा या गौरव, उपदेश या नीति अथवा इसी प्रकार का वर्णन हो ।"[1]

इस बात का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता कि अरबी में क़सीदा निगारी की शुरूआत कब से हुई । अनुमान लगाया जाता है कि इस्लाम धर्म के प्रवर्तन से दो सौ वर्ष पूर्व से क़सीदे लिखने की प्रथा का प्रचलन प्रारंभ हुआ । यह संभावना भी व्यक्त की जाती है कि महलहल और अमरू अल क़ैस अरबी के प्रारंभिक क़सीदे निगार शाइर थे । अरब में पूर्व इस्लाम युग को "ज़मान-ए-जाहेलियत" कहा जाता है । अरबों के पूर्व इस्लाम युग अथवा जाहेलियत युग में हम्माद नामक शाइर को सत्ताईस हज़ार क़सीदे कंठस्थ थे । असमा नामक शाइर को सोलह हज़ार कविताएं याद थीं । अधोकथित युग में अमू नामक क्रमशः एक सौ शाइर हुए । अरब में अब्बासिया-युग में ताएफ़ नगर के समीप आकाज़ के बाज़ार में प्रति वर्ष शोअरा जमा होते थे और अपने-अपने क़सीदे सुनाते थे । जो क़सीदा सबसे अच्छा होता उसे स्वर्ण-जल से लिखकर "ख़ान-ए-काबा" में टांग दिया जाता था ।[2]

अरबी क़सीदे प्रशंसात्मक विषयों तक सीमित नहीं थे । इनमें चालीस-चालीस वर्षों तक लड़े गए युद्धों के वर्णन, मित्रों के प्रति सहानुभूति,

---

1. ले. अबु मोहम्मद सहर : उर्दू में क़सीदा निगारी, पृष्ट 12
2. ले. डा. इलाही : उर्दू क़सीदा निगारी का तन्क़ीदी जाएज़ा, पृष्ट 70

शत्रुओं के प्रति घृणा के भाव, स्वतंत्रता प्राप्ति का उद्वेलन, आतिथ्य-सत्कार, वीरों की प्रशस्ति तथा यथार्थ को पर्याप्त स्थान मिला है ।[1]

अरबी की प्रारंभिक शाइरी में क़सीदे का विषय बहुत व्यापक था, इसमें कवियों का दैनिक जीवन, निजि अनुभव, प्रेमविघटन, देश-काल की स्थिति और प्रकृति चित्रण आदि किया जाता था । अरब के प्राचीन क़बाईली समाज में कवि आत्म-सम्मान का ध्यान रखते थे । लोगों की स्तुति अथवा प्रशंसा करना उन्हें नहीं आता था । धीरे-धीरे क़सीदे का प्रशंसात्मक काव्य के रूप में प्रयोग किया गया । परंतु यह प्रशंसा पुरस्कृत होने की कामना हेतु नहीं अपितु निःस्वार्थ भावना से की जाती थी ।[2]

कालांतर में क़सीदे का प्रयोग, ईरान में सुलतानों, सामंतों तथा बादशाहों की स्तुति अथवा प्रशंसा के लिए होने लगा । शाइरों ने धीरे-धीरे क़सीदे को स्वार्थ-सिद्धि का माध्यम बना लिया ।

उर्दू के वरिष्ठ आलोचक मौलाना अल्ताफ़ हुसैन हाली ने क़सीदे पर विचार करते हुए बड़े ही रोचक ढंग से इस तथ्य का उद्घाटन किया है -

"ज़िंदों की तारीफ़ को क़सीदा बोलते है और मुर्दों की तारीफ़ को, जिसमें तस्सुफ़ और अफ़सोस भी शामिल होता है मर्सिया कहते हैं ।[2]

मौलाना हाली का उक्त कथन सत्य पर आधारित होते हुए

- -

1§ ले॰डॉ॰ महमूद इलाही : उर्दू क़सीदा निगारी का तन्क़ीदी जाएज़ा, पृष्ठ 7।

2§ ले॰ अबु मुहम्मद सहर : उर्दू में क़सीदा निगारी, पृष्ठ 12

3§ ले॰ मौलाना हाली : भूमिका, दीवान-ए-हाली, पृष्ठ 212

भी अस्वीकृत किए जाने योग्य है । क्योंकि सत्यव्रती साधु-संतों, सूफ़ियों, मुर्शदों आदि की प्रशंसा में भी क़सीदे लिखे जाते हैं । यह लोग शुद्ध रूप से कवि के आदर तथा सम्मान के पात्र होते हैं । जहाँ सचमुच योग्यता एवं महानता के गुण किसी व्यक्ति में विद्यमान हों और कवि उनकी महानता का, निःस्वार्थ, बखान करे तो ऐसे अवसर पर "क़सीदा" एक पवित्र तथा स्वच्छंद काव्य-विधा के रूप में पाठक अथवा श्रोता का मन मोह लेता है । मुहम्मद क़ुली क़ुत्बशाह ने "बाग़-ए-मुहम्मद शाही" पर क़सीदा लिखकर सिद्ध कर दिया कि क़सीदा केवल धार्मिक महापुरुषों की महानता या सुलतानों की प्रशंसा अथवा किसी अन्य श्रद्धा-पात्र पर ही नहीं अपितु हर उस वस्तु पर लिखा जा सकता है जिसका अस्तित्व कवि की श्रद्धा का पात्र बनता है ।

2·1 दक्खिनी क़सीदा

दक्खिनी क़सीदे के अध्ययन को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से आलोचकों ने दक्खिनी क़सीदे को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया है । दक्खिनी क़सीदे के यह तीन रूप निम्नलिखित हैं -

2·1·1 प्रारंभि रूप

दक्खिनी क़सीदे का प्रारंभिक रूप वह माना जा सकता है जबकि सूफ़ियों ने दक्खिनी में लिखना आरंभ कर दिया था । इस दृष्टि सह फ़ैरोज़ द्वारा लिखे गए क़सीदों में "अब्दुल क़ादर जीलानी" से संबद्ध क़सीदा महत्त्वपूर्ण समझा जाता है । इब्राहीम आदिलशाह द्वितीय ने भी "ख़्वाजा बंदे नवाज़ गेसूदराज़" की शान में क़सीदा कहा है । दक्खिनी के अन्य कवियों, अब्दुल, नुसरती तथा मुख़्तार आदि ने "ख़्वाजा बंदे नवाज़ पर क़सीदे लिखकर मानो अपना अपारंपरिक उत्तरदायित्व

निभाया । रुस्तमी के क़सीदों का केवल उल्लेख मिलता है । उसके क़सीदे अनुपलब्ध है ।

2·1·2 मध्यवर्ती रूप

दक्खिनी क़सीदा लेखन का मध्यवर्ती रूप उस युग में पल्लवित हुआ जिसमें वजही, सन्अती तथा इब्न-ए-निशाति आदि दक्खिनी कवि मसनवी लेखन में व्यस्त थे । इनकी मसनवियों में जहाँ सुल्तान, मुर्शिद तथा पीर औलिया के लिए प्रशंसात्मक पंक्तियाँ लिखी गईं, आंशिक रूप में क़सीदे को प्रोत्साहन मिला । इस युग में अमीनुद्दीन आला ने क़सीदे की शैली में दो सुदीर्घ कविताओं की रचना की । अमीनुद्दीन आला का प्रथम क़सीदा उनके पिता की प्रशंसा में लिखा गया । उनके पिता शाह बुरहानुद्दीन जानम थे । अमीनुद्दीन आला का दूसरा क़सीदा "मुहब्बतनामा" है । "मुहब्बतनामा" में प्रशंसात्मक तत्वों की अपेक्षा रहस्यवादी भावना अधिक है ।

2·1·3 विकसित रूप

दक्खिनी क़सीदा का विकसित रूप वह है जबकि दक्खिनी भाषा तथा साहित्य अपनी परिमार्जित अवस्था को प्राप्त कर चुका था । क़सीदे के इस तीसरे दौर में मुहम्मद कुली कुत्बशाह वजही तथा ग़व्वासी का स्थान सर्वोपरि है ।

मुहम्मद कुली कुत्बशाह ने हज़रत अली की प्रशंसा में क़सीदा लिखा । यही नहीं, उसने बाग़-ए-मुहम्मद शाही पर क़सीदा लिखकर यह सिद्ध कर दिया कि क़सीदा महात्माओं तथा बादशाहों की तारीफ़ या किसी गुरुजन पर ही नहीं अपितु कवि-श्रद्धा-पात्र किसी भी वस्तु, स्थान अथवा दृश्य पर लिखा जा सकता है ।

दक्खिनी क़सीदे को परिष्कृत करने में अलीआदिलशाह द्वितीय की भूमिका चिरस्मरणीय रहेगी । उसने दक्खिनी क़सीदे के रूपनिर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । अलीआदिलशाह द्वितीय के दरबारी कवि नुसती तथा मिर्ज़ा हाशमी ने अपने सुलतान के लिए रचना का एक विशेष परिवेश निर्मित कर दिया था । परिणाम यह हुआ कि अली आदिलशाह द्वितीय जिसका उपनाम "शाही" था ने कुल छः क़सीदे लिखे । इनमें से एक क़सीदा अलीदाद महल के हौज़ तथा बाग़ की प्रशंसा में लिखा गया है । यह तथ्य उल्लेखनीय है कि अलीआदिल शाह द्वितीय ने अपने क़सीदों में उस परंपरा को नहीं अपनाया जो मुहम्मद क़ुली क़ुत्बशाह के क़सीदों में मिलती है । इस संबंध में दक्खिनी की विख्यात आलोचिका डॉ॰ समीना शौकत का मत द्रष्टव्य है -

"अली ने मुहम्मद क़ुली की भाँति अपने क़सीदों में अपने व्यक्तिगत लाभ अथवा सल्तनत की सुरक्षा, विस्तार, प्रगति तथा प्रतिष्ठा के लिए प्रार्थना नहीं की । उसके लिए यही पर्याप्त था कि वह अपने कार्य संतुष्ट है ।"[1]

2·2 ग़व्वासी के क़सीदे

ग़व्वासी के कुल इक्कीस क़सीदे, अब तक, प्रकाश में आए हैं । क़सीदा लेखन की परंपरा में वह दक्खिनी का सफलतम क़सीदा निगार माना जाता है । डॉ॰ मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" के अनुसार -

"इतने अधिक, सुदीर्घ एवं उत्कृष्ट क़सीदे अब तक, किसी दक्खिनी कवि के, प्राप्त नहीं हुए हैं ।"[2]

---

1) ले॰डॉ॰ समीना शौकत : ख़ुदग-ए-जस्ता, पृष्ठ 105

2) सं॰ मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी, भूमिका पृष्ठ 15-16

ग़व्वासी ने अधिकांश क़सीदे सुलतान अब्दुल्लाह कुत्बशाह की प्रशंसा में लिखे हैं। डॉ॰ श्रीराम शर्मा ने विचार प्रकट किया है - "क़सीदे अब्दुल्लाह कुत्बशाह से संबंधित हैं।"[1]

यहाँ ग़व्वासी के दो क़सीदे उदाहरणार्थ उद्धृत करना असंगत न होगा -

ज्यूं चांद पर निस जगमगा जम-जम सुबा लग जाग ख़ुश
ज्यूं सूर हर दिन कूं निकल रोशन कर ऐ संसार आज

अय जगपती चंद सूर अछूं देखे नहीं किस मुलक में
बरदीस तुज शह सार का तरवार मारनहार आज

इस गुंबद द्वार थे लक ठार दर्जे सूं बुलंद
देता रहे तुज शाह का दरगाह हौर दरबार आज

तेरी सिफ़्त की बात बिन काढ़ें न दूसरी बात कोई
निलते है जाँ दस पांच हौर गमते है जाँ दो चार आज

अय लाल तेरे लाल अधर अपराल थे क़ुर्बान हो मैं
जाँ लग दिलाँ के खान में है लाल जौहर बार आज

तेरे बुलंद इक़्बाल की दौलत थे आसूदे हैं सब
जाँ लग चुड़ी हौर चुंगनी जाँ लग हैं मोरी-गार आज

जिन कोई खा तेरा नमक तेरी वफ़ा में ना अछे
निकले फूट उसकी ज़ात में तुरत इस नमक का खार आज

पानी थे जग में धरतरी धरती है जो लग ताज़गी

- -

1. डॉ॰ श्रीराम शर्मा, : दक्खिनी हिंदी का साहित्य, पृष्ठ 273

तू लग अछो ताज़ा शहा तुज ऐश का गुल्ज़ार आज

बाद-ए-मुराद हौर आरज़ू ख़्वाहिश थे इस दुनिया मने
जीता है लग ग़ुव्वास कूं बस है तेरा आधार आज

खोल्या है हक़ जिस दिवस पे तुज शाह पर दर फ़त्ह का
रौशन हो ख़ुश उस दिवस थे पाया सफ़ा घर फ़त्ह का

निकले तूं जिस घर सैर कूं ज्यूं कोट उस घर ग़ैब थे
आवे निकल यकबारगी फ़ौजां तूं लश्कर फ़त्ह का

सपने में आ देख्यां के सुर्ख़ चश्मे लहू के हो बहे
जब थे फ़लक तेरी कमर बांद्या है ख़ंजर फ़त्ह का

दंदियां तेरे यकधीर थे क्यों न हज़ीमत पाएं आज
हर एक सिपाही सो तेरा है ज्यूं ग़ज़नफ़र फ़त्ह का

माते जंगल जो मद में गुल झलते है तुज दरबार सो
हर एक क़वी हैकल है ज्यूं गंभिर डोंगर फ़त्ह का

तेरा नगर जो हैदराबाद आज इसका नाउं है
सो बेगुमां बेशुबह है अवतार बंदर फ़त्ह का

शर शोर फित्ना हौर ख़लल विहसकर उलंग सकता नईं
तुज मुल्क की सरहद मने बहता दिखत सर फ़त्ह का

शाहां में क़ुत्ब आफ़ाक़ का तूं शाह अब्दुल्लाह है कर
तुज तन सुलह संजोत जम साजे सरासर फ़त्ह का

चमन-ए-चमन चारों तरफ़ तुज सल्तनत का बाग़ आज
देता है जल्वा बार आ हर डाल पर बर फ़त्ह का

जब तख़्त ऊपर बैस कर लश्कर की गिन्ती लेवे तूं
तब आ अतारद हुए खड़ा ले डब में दफ़्तर फ़तह का

जब लग चंदर हौर सूर के बजते हैं ताशा धन उपर
बजता अछो तुज दार की तब लग बजंतर फ़तह का

कवि अपने समकालीन बादशाहों की प्रशंसा करके क़सीदों के माध्यम से अपने दुःख को भी प्रकट किया करते थे । यह प्रशंसा कभी अतिशयोक्ति-पूर्ण भी हुआ करती थी और कभी सत्य के अनुरूप । क़सीदा सुनकर बादशाह प्रसन्न होता था और कवि को भेंट स्वरूप कुछ धन अथवा संपत्ति दे दिया करता था ।

ग़व्वासी की प्रशंसात्मक कविताएं सुनकर बादशाह ने संभवत: उसे एक गांव उपहार स्वरूप दिया था । परंतु ग़व्वासी को उस गांव से कोई विशेष आय नहीं हो रही थी अत: ग़व्वासी ने एक क़सीदे में दूसरा गांव प्राप्त करने हेतु प्रार्थना की -

"है तूं के सब का दाद यक तुज तख़्त की भुईं रख
मिंज दूं है तुज इरशाद यक जमराज कर अय राज तूं
मिंदूं दिये हैं गांव कसो कुच दस्त नईं इस नां सो
हैं गांव कर चुप नांव सो जम राज कर अय राज तूं
मामूर हौर यक गांव, मैं जो शाह की दौलत पाऊं मैं
तुज सुख सो रोटी खाऊं मैं जमराज कर अय राज तूं ।"[1]

अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने यह परंपरा चलाई थी कि उसके विशेष अधिकारी गण मास में एक बार, सिपाहियों की भांति दुर्ग का पहरा

- -

1) सं॰ मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी -कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृष्ठ 76

दिया करें । ग़व्वासी को भी महीने में एक बार दुर्ग का पहरा देना पड़ता था जो कि उसके लिए कठिन था । एक क़सीदे में वह इस बंधन से मुक्ति की प्रार्थना करता है -

> फेरी ये नईं फेरा मिंजे तड़खे बहुत ज़हरा मिंजे
> कर माफ़ यू पहरा मिंजे जम राज कर अय राज तूं"[1]

3. रूबाईयां

मसनवी, ग़ज़ल, मर्सिया इत्यादि की भांति रुबाई का विकास फ़ारसी साहित्य में हुआ । वैसे, उद्‌भव की दृष्टि से अरबी भाषा में "रुबा" शब्द "चार" संख्या के प्रदर्शन के लिए प्रयुक्त होता है । रूबाई भी चार पंक्तियों की एक अर्थपूर्ण कविता होती है जिसकी प्रथम दो तथा अंतिम पंक्ति एक ही तुक में लिखी जाती है । रूबाई हिंदी चौपाई से पर्याप्त साम्य रखती है परंतु वह चौपाई नहीं कही जा सकती ।

फ़ारसी में परिपक्व यह काव्य विधा "रूबाई" दक्खिनी में भी काफ़ी लोकप्रिय हुई । इसका प्रयोग किसी नीतिपरक उक्ति एवं गंभीर तथा गूढ़ अर्थ की चमत्कारिक अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है ।

दक्खिनी कवि अशरफ़ ने रूबाई की परिभाषा "वाहेद बारी" में दी है । वाहेदबारी" अरबी-फ़ारसी तथा उर्दू का एक काव्यात्मक शब्दकोश है, जो अमीर खुसरो की रचना "ख़ालिक़ बारी" की परंपरा के अंतर्गत माना गया है । "वाहेदबारी" में आम बोलचाल की दक्खिनी का प्रयोग किया गया है । इसमें न केवल दक्खिनी शब्दों के फ़ारसी-

- -

1) सं. मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृष्ठ 77

अरबी के रूप ही नहीं दिए गए अपितु ध्वन्यात्मक काव्यशास्त्रीय टिप्पणियां एवं उसके उदाहरण देने के अतिरिक्त विभिन्न काव्य-विधाओं को परिभाषित करने का सफल प्रयास भी किया गया है। अतः "वाहेदबारी" में अशरफ़ ने रुबाई को चौ-मिस्रा कहा है -

"बाहर है दरिया आब-ए-फ़िराख़
कलाम-ए-मौज़ू है डाली शाख़

नीम बैत कू मिस्रा बोल
दो मिस्रे की बैत है खोल

रुबाई क्या ? चौ-मिस्रा जान
मुख़म्मिस क्या ? पंच मिस्रा ख़्वान

चंद बैत कू क़त्अ तू जान
अज़ शेर-ए-ग़ज़ल ले काट के आन

कम अज़ पंच बैत न आवे ग़ज़ल
हो ज़िक्र-ए-फ़िराक़ मुहब्बत मिसल

क़सीदा ग़ज़ल का अव्वल मत्ला
तख़ल्लुस आख़र बैत का मक़्ता

रदीफ़ बाद अज़ क़ाफ़िया आर
एक घोड़े पर दो सवार"[1]

रुबाई में प्रायः "सूफ़ियाना विचार प्रकट किए जाते हैं तथा

- -

1. डॉ॰ ज़ोर : तज़किरा मक़्तूतात-ए-इदारह अदबियात-ए-उर्दू, प्रथम खण्ड, पृष्ठ 285

नीति, धर्म, दर्शन, रहस्यवाद तथा एकेश्वरवाद जैसी महत्वपूर्ण बातों को बयान किया जाता है ।"[1]

रुबाई में जिस भाव को पंक्ति-बद्ध किया जाता है, उसके अनुरूप शब्दावली, लय तथा अलंकारादि पर उपयुक्त ध्यान दिया जाना आवश्यक है । अन्यथा, रुबाई श्रोता के मन पर प्रभाव नहीं छोड़ेगी ।

रुबाई के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि वह चार समानांतर पंक्तियों में कही गई काव्यमय उक्ति हो । यह काव्य-मय उक्ति संतुलित रूप में, गंभीरतापूर्वक कही जाए, इसका कथ्य श्रोता के मन पर ऐसा प्रभाव डाले कि श्रोता के मुख से अनायास ही वाह-वाह निकल उठे । श्रोता की वाह-वाही में काव्य-मर्म की पहचान होनी चाहिए ।

रुबाई में शब्द, अर्थ तथा लय का तालमेल महत्व रखता है । यदि इनमें सामंजस्य स्थापित न हो सका एवं विषय में गंभीरता का अभाव शेष रह गया तो ऐसी रुबाई उत्कृष्ट नहीं समझी जा सकती ।

दक्खिनी साहित्य में रुबाईयात कबसे लिखी जाने लगीं यह निश्चित रूप से बताना कठिन है ।

ख़्वाजा बंदे नवाज़ गेसू दराज़ की जो प्रारंभिक रुबाईयां मिलती हैं उनका अर्थ शुद्ध धार्मिक अथवा नैतिक है -

"लड़ने का जब धरे तू ख़याल लड़के फिरना
आख़र कू ना किसी सवां बात ना संपड़ना
कहकर अय मुसलमान लड़ना तो सब कुफ़्र है
लड़ना तो काफ़िरां सूं साबित क़दम हो मरना ।[2]

- -

1) मुहम्मद जमाल शरीफ़ : मुजल्ल-ए-उस्मानिया, दक्खिनी अदब नंबर, वर्ष 1963, पृष्ठ 149

2) -वही- , " 150

साहित्यिक दृष्टि से मुहम्मद कुली कुत्बशाह की रूबाईयां, दक्खिनी काव्य में, प्राथमिकता रखती है ।

3·1 मुल्ला असदुल्लाह वजही की रुबाईयां

मुल्ला वजही की रुबाईयां स्वतंत्र रूप में उपलब्ध नहीं हैं । "कुत्बमुश्तरी" में जो रुबाईयां प्रस्तुत की गई हैं वह उक्त मसनवी की कथा का अंग हैं । परंतु, तकनीक की दृष्टि से ऐसी रुबाईयां अपना स्वतंत्र अर्थ एवं अस्तित्व भी रखती हैं । अतः उदाहरणार्थ मुल्ला वजही की कुछ रुबाईया सासार यहां उद्धृत करना संगत होगा -

कवि उस नगर तक जाए बिना नहीं रह सकता जहां पर कि उसकी चंचल प्रेमिका रहती है । 96 उसके तनिक दर्शन की कामना करता है । प्रेयसी के दर्शन बिना उसके मन को चैन नहीं मिलता है । अतः वह उसे अपने घर लाये बिना संतुष्ट नहीं हो सकता ।

मैं ना रह सकूं उस शहर तलक जाये बिन
चंचल सकी का चक दरस पाये बिन
इस जीव दिवाने कूं क्यों होवे क़रार,
उस नार कूं इस ठार लेकर आये बिन ।"[1]

जो कोई उस चंद्रमुखी का प्रेमी है वह शरीर पर सर रहते, अर्थात् प्राण रहते, प्रेम के मार्ग से नहीं हटेगा । लोगों को क्या काम है कि वे बेकार ही इश्क़ से मना करते रहते है, परंतु कवि की प्रेमिका किसी की बातों में हरगिज़ नहीं आनेवाली है ।

- -

1§ सं० विमला वाघ्रे-बसलीरुद्दीन हाशमी : मुल्ला वजही - कुत्बमुश्तरी, पृष्ठ 83

"आशिक़ है जकोई पंद उस माली ना
सिर है तलक इस बाट में ते जासी ना
किया काम मना इश्क़ ते करते हैं उसे
हरगिज़ किसी के कये मने वह आसी ना ।"[1]

उद्यान में बैठी नायिका अपने प्रेमी बादशाह की प्रतीक्षा कर रही है । उसके मन में आता है कि वह आकर उसे प्यार से गले लगाएगा तथा दोनों मिलकर आनंद से वहाँ बैठे समय बिताएँगे । नायिका का मन शाह से मिलकर गद-गद हो उठेगा ।

"को शाह यो इस बाग़ मने आवेगा
को शाह मुंजे नेह सूँ गले लावेगा
को शाह हमें मिलके यहाँ बैठेंगे
को शाह सूँ मिल जीव ख़ुशी पावेगा ।"[2]

आज नायक का मन उदास है । मधुपान भी उसके मन को मस्त नहीं कर पा रहा है और उपवन में खिले फूल मानो शूल बन कर दृगों को घायल कर रहे हैं । नायिका के बिना वह उपवन प्रेमी नायक को नहीं भा रहा है ।

"ख़ुशहाल हो जीवन आज ख़ुशी पाता नहीं
पीता हूँ शराब होर असर आता नहीं
काँटा के ज़र्ब दिसते अहैं फूल सब
तुज बाज सकी बाग़ मुंजे भाता नहीं ।"[3]

---

1) सं॰ विमला वाघ्रे-मनसीरुद्दीन हाशमी-वजही-कुत्ब मुश्तरी, पृष्ठ84-85
2) " -"- " , " 109-110
3) " " " , " 119

प्रेमी राजा के विरह-जन्य दुःख के निवारण हेतु दूत बंगाल की ओर इसलिए जा रहा है कि वह अपने राजा के मन में छिपी इच्छा से भली-भांति परिचित है । वह राजा की प्रेमिका से बात करेगा, फिर या तो राजा को वहाँ बुला भेजेगा अथवा उसे राजा के यहाँ ले आएगा ।

"मैं आज बंगाले की तरफ़ जाता हूं

मक़सूद जो है दिल में सो सब पाता हूं

या धन के कन उस शह कूं बुला भेजूंगा

या शह के कन उस धन कूं ले कर आता हूं ।"[1]

3·2 मुहम्मद कुली कुत्बशाह की रुबाईयाँ

मुहम्मद कुली कुत्बशाह के काव्य-संग्रह में कुल उनचालीस रुबाईयाँ विद्यमान हैं ।

कुली कुत्बशाह की रुबाईयों में धर्म, नीति, दर्शन, तर्क आदि के अतिरिक्त, प्रेम तत्व को, अपेक्षाकृत अधिक स्थान प्राप्त हुआ है । कुली कुत्बशाह की भाषा, रुबाईयों में, सरल-प्रवाहमयी तथा माधुर्य से परिपूर्ण है । कवि ने गूढ़ अर्थ का बड़ा ही मार्मिक एवं चमत्कार-पूर्ण उद्घाटन प्रस्तुत किया है । भावों की अभिव्यंजना में कवि को सफलता प्राप्त हुई है ।

हज़रत अली के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए मुहम्मद कुली कुत्बशाह कहते हैं कि उनके हाथ में हज़रत अली के प्रेम का भरा प्याला । वही मतवाले हैं जिनकी कृपा से जग में मुहम्मद कुली कुत्बशाह का नाम प्रसिद्ध

1) सं॰ विनजा वाद्रे-नसीरुद्दीन हाशमी .: मुल्ला वजही-कुत्ब मुश्तरी, पृष्ठ 122

हुआ है । अतः हज़रत अली के ध्यान के अतिरिक्त उन्हें और कोई काम नहीं है । वे, हैदर अर्थात् अली के ध्यान में ही मग्न रहना चाहते हैं -

अपड्चा है अली हत्थ ये महन जाम मिंजे
मतवाल के उसके रखे जग नाम मिंजे
दो जग नें नहीं काम किसी ध्यान सूं मिंजे
है ध्यान सूं हैदर के सदा काम मिंजे

कवि नायिका के मुख-मण्डल पर झूलती हुई लटों से धीरे-धीरे खेलता है और कहता है कि नायिका उसकी मनोकामना पूरी करे । प्रत्युत्तर में नायिका कहती है कि पहले तू लट छोड़ और फिर होटों में होंट लेले । हे शाह तुझे जीवन में आनंद मिले तथा तू दीर्घ आयु को प्राप्त करे -

"उस लट कूं लताफ़त सूं पकड़ कीता नियाज़
कह्या के मेरा चारा करें अब कर साज़
मिंज कह के मेरा होंट पकड़ लट कूं तू छोड़
है तुज कूं अनंद होर सदा उम्र दराज़ ।"[2]

3·3 ग़व्वासी की रुबाईयाँ

मुल्ला "ग़व्वासी" की निम्नलिखित चौदह रुबाईयाँ प्राप्त

- -

1) सं·डॉ· मुहीउद्दीन क़ादरी-ज़ोर : कुल्यात-ए-मुहम्मद कुली कुत्बशाह, रुबाईयात, पृष्ठ 44

2) -वही- पृष्ठ 45

हुई है -

रुबाई गव्वासी कहता है कि हे मित्र प्रीत के मार्ग पर बढ़ तथा किसी अन्य रास्ते पर मत चल । तू उस मार्ग को अपना जो परमात्मा से आत्मा को मिलाता है । यह रुबाई गव्वासी के सूफ़ी-पक्ष को प्रकट करती है -

बिन वाट तूं अय यार किसी हाट न जा
बिन पीर पिरत बाट कधीं दाट न जा
जे हाट जो सीदी नईं माशूक़ तरफ़
सुनता है मेरी बात तो उस बाट न जा ।

अपनी प्रेमिका से कवि कहता है कि मुझे तुझसे एक बात कहनी है । वह बात मैंने गठरी में बांध रखी है, तू आकर इस (ज्ञान की) गठरी को खोल क्योंकि तेरे ही हाथ उसे खोल सकते हैं -

अय पीव छुपी यक बात है तुज सात बग़ैर
किस धीर कह्या जाए न वो रात बग़ैर
कुच वस्त रखे हूं तेरे तईं गठरी बांद
आ खोल ले खुलसे न वो तुज हात बग़ैर

मदिरा पान बिना मैं कोई भी काम नहीं कर सकता । मेरा मदिरापान देखकर लोग मुझे नरक का नाम लेकर डराते हैं । परंतु मुझ पर परमात्मा की कृपा है, अत: कोई मुझे भयभीत नहीं कर सकता -

मैं बाज गुनह काम भी कुच कर सूं न
सुहबत बग़ैर अज़ जाम कूं धरसूं न
दोज़ख़ ये डराते हैं मिजे लोकां आज
ग़फ़्फ़ार क़वी सर पे है मैं डरसूं ना ।

हे मन ! यह संसार नश्वर है दु:ख-सुख, जीवन में, आते और चले जाते हैं । अत: व्यथा को चाहिए कि वह इस संसार से मन न लगाए क्योंकि यह संसार क्षणिक है ।

अय दिल जो यू दुनियां है गुज़रते गुज़री
हुई कधीं ख़ाली, कधीं भरते गुज़री

सौदा ले सरस मोल न कर आज दुरंग
है बेहतर निहार यू सरते गुज़री ।

हे प्रभु ! तू अंतर्यामी है मेरा संबंध में तू सब कुछ जान लेता है । परंतु अपने संबंध में तू कुछ भी नहीं बताता । तू ख़िज़्र की भांति व्यवहार करता है जिस तरह से ख़िज़्र सबको रास्ता बताते हैं परंतु स्वयं अपनी थाह नहीं देते तू भी वैसा ही करता है -

भेदी है मेरा भेद तू बुझ लेता तूं
हैरान मिंज अपन भेद न दे लीता तूं

किया मिंज अपन प्यार तूं शर्न हुज़ूर
जे ख़िज़्र नमन जग में जन अय मीता तूं ।

हे बोध ! तुझे एक बुद्धिमान मित्र की भांति होना चाहिए । हे प्रेम ! तुझे सच्चा प्रेमी बनना चाहिए । मैं रातदिन मस्त हूं मुझे अपने परमात्मा की धुन चाहिए -

अय अक़्ल तुजे रफ़ीक़ दाना होना
अय इश्क़ तुजे यार दिवाना होना

मैं मस्त हूं दिन-रात मिंजे जाग हौर मने
महबूब-ो-तराना होना ।

अपने मदिरापान का उल्लेख करता हुआ ग़्वाली कहता है कि उसका मदिरापान किसी परिचय की आकांक्षा नहीं रखता, जिस प्रकार चंद्र और सूर्य को सभी जानते है वैसे ही उसके मधुपान का बोल-बाला है ।

हुश्यार कहीं ना होए मस्ती मेरी
मय-सात रंगी गई है यू हस्ती मेरी

ज्यूं चांद होर आफ़ताब आलम में
मशहूर है आज मय परस्ती मेरी ।

अपनी प्रियतमा के नयन-सौंदर्य के संबंध में कवि कहता है कि उसकी प्रेमिका की आँखें क्षण भर में ईमान वालों को आकर्षित कर देती है । उसके कपोलों पर झूलते हुए केश उसे किसी सभाजन्य उलझन की भांति लगते हैं ।

वो नाज़ भरी आंक मेरे जानां की
सुद छीन लेली छन में मुसलमानां की

इस गाल पे जो बाल बिखर फिरते है
गोया है वो जमाअत परेशानां की

प्रभु ! चतुर आखेटक के समान माया-जाल तान रखा है जिसमें मनुष्य अपनी इच्छा से स्वयं ही फंस जाता है । मनुष्य का ज्ञान अपूर्ण होने के कारण परमात्मा की कृपा के बिना सांसारिक माया-जाल से निकलना कठिन है ।

दाना सय्याद अज़ल सट जो अपे दाम रखिया
लेद संपडूया दिखत उस नाम अदुल जान रखिया

अपने ख़ाहिश सूं अपे खूब बुरा पैदा कर
आम पर ऐब रखिया क्या सो अजब ख़ास रखिया

हे ग़व्वासी ! तू केवल परमात्मा के सौन्दर्य की कामना कर । परमात्मा के अतिरिक्त किसी अन्य की आराधना न कर । ईश्वर प्रेम के मार्ग में कण्टक भरे पड़े हैं अत: लड़खड़ाए बिना साहसी बनकर इस कठोर पथ से निकल जा -

ग़व्वास तूं हक़ साज किसे संग न को
गर है तूं सो हद तो किसूं संग नको

मारग में मुहब्बत के हैं काँटे-काँटे
काँटियाँ पे क्या नीट तूं जा संग न को

हे मित्र ! भगवान ने तुझे पुरुष रूप में उत्पन्न किया है अत: तू पुरुषार्थ पर किसी प्रकार का आक्षेप न आने दे, क्योंकि तुझे ईश्वर की महानता का ज्ञान है । इसलिए सत्कर्म कर, उत्तेजना से काम न ले -

अय यार तूं है मर्द तो ना चीज़ न हो
मर्दी के उपर राख नज़रहीज़ न हो

आरिफ़ है अगर तूं तो नको सुस्ती कर
अछ काम मने तेज़ वले तेज़ न हो

वियोग रात्रि के दु:ख का वर्णन करता हुआ ग़व्वासी कहता है कि सारी रात उसकी आँखों से अश्रुधारा प्रवाहित होती रही । अपनी इस स्थिति का साक्षी, कवि ने, चंद्र एवं तारक को बनाए रखा ताकि अवसर पड़ने पर वे गवाही दे सकें -

मैं रात के दु:ख का कहूँ क्या तुज सूँ गिला
अंझुआँ थे मेरे नयन के या सच गिला

बावर तुजे लगना के सचोटी के बोल
राखे हूँ गवा चांद कूँ तारियाँ सूँ मिला

हे बादशाह ! {अब्दुल्ला कुत्बशाह} तुझे सदैव विजय प्राप्त होती रहे । तुझे हज़रत अली तथा हज़रत मुहम्मद के पारिवारिक सदस्यों की कृपा-परिधि नसीब हो -

आय शाह या फ़त्ताह जग तेरी ज़ुबाँ का वर्द अछो
इन्ना फ़तेहना ता अबद तेरे जफ़र का बर्द अछो

तावीज़ इक़्बाल के बाज़ू को आ नाद-ए-अली
आल-ए-अबा का सो दुआ जीव दो तेरे गिर्द अछो

जन साधारण कहते हैं कि संसार ही सब-कुछ है । विशेष जन कहते हैं कि स्वर्ग ही सब-कुछ है । परंतु ग़व्वासी मानता है कि अली ही उसके आराध्य हैं अत: उन्हें प्राप्त करना सबसे जटिल कार्य है -

देख आम यू दुनिया कहे मंजिल सो रहीच
या ख़ास सो उक़्बा कहे हासिल सो रहीच

हैरान हूँ मौला की तलब में पूरा
आशिक़ सो कहे सब ये है मुश्किल सो रहीच ।[1]

ग़व्वासी की रुबाईयों में संसार से विरक्ति की भावना इस

- -

1} सं॰ मुहम्मद बिन उमर : कुल्यात-ए-ग़व्वासी-ग़व्वासी, पृष्ठ 174-176

तथ्य को प्रकट करती है कि उसने संभवत:, अपने जीवन के उत्तरार्ध में रुबाईयां लिखी हों । इसकी रुबाईयों में सूफ़ी विचारधारा को बल मिला है । नैतिकता के प्रतिपादन का उद्घोषण भी कवि को अभीष्ट है । संसार की मायवी भौतिकता ग़व्वासी को आकर्षित नहीं करती और न उसे अपने सत्य-पथ से डिगा सकती है । उसकी रुबाईयों पर प्रेम तथा ज्ञान मार्गी भक्तिधारा के सम्मिश्रण का आभास होता है ।

4. समकालीन कवियों के संदर्भ में ग़व्वासी का मूल्यनिर्धारण

जिस समय गोलकुण्डा में ग़व्वासी के काव्य की बहुत चर्चा थी उसी समय वजही का प्रभाव भी कुछ कम नहीं था । इससे कुछ पूर्व ग़व्वासी ने मुहम्मद कुली कुत्बशाह द्वारा कही गई ग़ज़लों की बहर में स्वयं कविता करके साहित्य में स्थान प्राप्त कर लिया था । यह स्थान अब्दुल्लाह कुत्बशाह के युग तक आते-आते "राज-कवि" की उपाधि में परिवर्तित हो गया । पूर्व के अध्यायों में ग़व्वासी के समकालीन कवियों की चर्चा की जा चुकी है । यहाँ पर उनका तुलनात्मक अध्ययन संगत होगा ।

4.1 ग़व्वासी एवं वजही

वजही तथा ग़व्वासी दोनों ही गोलकुण्डा के मलिकुश्शोअरा हुए हैं । ईश्वर की महानता को व्यक्त करते हुए वजही कहता है -

तूं झाड़ां कूं कपड़े दिया सब्ज़ पान,
मुअल्लक, रख्या है ज़मीं आसमान ।
दीवा कर चंदर, शमा कर भान कूं,
दिपाया दो जग के शबिस्तान कूं ।[1]

---

1. सं॰ विमला वाघ्रे - नसीरुद्दीन हाशमी : वजही -कुत्बमुश्तरी, पृष्ठ 5

गुव्वासी ने भी ईश्वर स्तुति में निम्न पंक्तियां लिखी हैं -

"चंदा में ते तूं चंदना काढ़ता,
सूरज ते गरम धूप तूं पाड़ता ।

दिखाता तमाशे अजब दूर थे,
दिपाता है लख नूर एक नूर थे ।"[1]

हिंदी के विख्यात विद्वान राहुल सांकृत्यायन ने स्वीकार किया है -

"गुव्वासी से पहले वजही की कीर्ति चारों ओर छाई हुई थी । 194 ही अपने इस तरुण समकालीन कवि से केवल ईर्ष्या ही नहीं करता था अपितु भय भी खाता था उसने अपने ग्रंथों में उस पर छोटे कसे हैं । संभव है, वजही की प्रतिद्वंद्विता ने भी तरुण कवि थे । मुहम्मद कुली कुत्ब जैसे महान कवि के सम्मान का पात्र न होने दिया हो ।"[2]

वजही ने गुव्वासी की काव्य-कला पर व्यंग बाण बरसाए -

"अगर गोते लक बरस गुव्वास खाय,
तो यक गोहर इस धात अमोलक न पाय ।
यो मोती नहीं वो जो गुव्वास पाय,
यो मोती नहीं वो जो किस हाथ आए ।
गुव्वासां किते गोते खा खाय कर
मुए हैं सो इस समद में आय कर ।"[3]

- -

1) डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय-अकबरुद्दीन सिद्दीकी : गुव्वासी-सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 2

2) राहुल सांकृत्यायन : दक्खिनी काव्यधारा, पृष्ठ 132

3) सं॰ विमला वाघ्रे-नसीरुद्दीन हाशमी : वजही - कुत्बमुश्तरी, पृष्ठ 30

जब वजही ने देखा कि ग़व्वासी चुप है और प्रति-प्रहार नहीं कर रहा है तो वजही गाली-गलोज पर उतर आए -

"नको बोल मज़मून तूं हौर का,
के काला है दो जग में मूं चोर का ।
जिता चोरी कर चोर अपे साव होय,
दग़ाबाज़ उचक्के कूं माने न कोय ।
चुरा कर चुराता न की चोर कोई ?
यो बाता समजते सो हैं हौर कोई ।"[1]

वजही की तीखी आलोचना सुनकर ग़ुव्वासी भी कब तक चुप रहता, उसने भी अपने व्यक्तित्व की महानता को निम्न पंक्तियों में प्रकट किया -

"बचन के समंद का हूं ग़व्वास मैं
धरनहार हूं मोतियां ख़ास मैं
जगत-जौहरी सब मेरे पास आए
मेरे ख़ास मोतियां कूं जीव कर ले जाए
चढ़े हात मोती चू जिस राज के
तो सर पर रखे जोड़ उपर ताज के
उनन का बहा कोई दे ना सके
बग़ैर राज भी कोई ले ना सके ।"[2]

x x x

"हुनर की गली का सो मैं बाग हूं

---

1) सं॰ विमला वाघ्रे - नसीरुद्दीन हाशमी : वजही - क़ुत्बमुश्तरी, पृष्ठ 31

2) डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी- सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 17-18

बचन के उत्तम गंज का नाग हूं
सके कौन मिलने मेरे तौर में
कि रुस्तम हूं मैं आज के दौर में ।"[1]

x x x

"गगन सातों दफ़्तर मेरे शेर के
सितारे सो जौहर मेरे शेर के
जो कुछ तशबिहां ख़ूब नाज़ुक हैं
मेरे ख़्याल के बन के जो फूल हैं
मेरे तबा का झाड़ जग ल्यावे बार
खिले फूल तिसकूं हज़ारां हज़ार ।"[2]

यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि ग़व्वासी ने "तूतीनामा" एवं "मैना सत्वंती" में अपेक्षाकृत अपनी काव्य क्षमता की बड़ाई नहीं की है । उसने काव्यप्रतिभा की महानता को लेकर "सैफ़ुलमुलूक व बदी उज्जमाल" में जितना कुछ स्वयं अपने बारे में लिखा संभवत: वह कज़ही की आलोचना के जवाब में कहा गया था । मूर्खतापूर्ण उक्तियों एवं फ़बतियों का उत्तर ग़व्वासी ने इस प्रकार दिया -

"हम दर्द कोई है तो कहा जाए दर्द उस
बेदर्द पास बेहूदा इज़हार क्या करूं ।"[3]

- -

1) डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी- सैफ़ुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 22

2) डॉ॰ राजकिशोर पाण्डेय - अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी : ग़व्वासी- सैफ़ुलमुलूक व बदी उज्जमाल, पृष्ठ 23

3) सं॰ मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृष्ठ 150

"ग़लत में बोल कहने दर्द अपना
ग़व्वासी सख़्त लागे लो हमी है ।"[1]

वजही और ग़व्वासी की नोक-झोक गंभीर स्थिति उत्पन्न करती चली गई । बात बादशाह, अब्दुल्लाह कुत्बशाह, तक पहुँची । अब्दुल्लाह कुत्ब ने बड़े आदर सहित वजही को अपने दरबार में बुलाया और उनसे अनुरोध किया कि वे कोई गद्यात्मक रचना ऐसी लिखें कि जैसी आज तक किसी और ने नहीं लिखी ।

"सुलतान अब्दुल्लाह ज़िल्लल्लाह सूरत में यूसुफ़ थे अगले, आदम बेहोश होवे, पत्थर पिघले । हिकमत में अफ़लातून शागिर्द-सख़ावत में हातिम का बोले बुर्द शुजाअत में रुस्तम गर्द । आली हिम्मत.....सुबा के वक़्त बैठे तख़्त । .....वजही नादिर मन कूं, दरियादिल, गौहर सुख़न कूं हुज़ूर बुलाए । पान दिए और फ़रमाए के इन्सान वजूद बिच में कुछ इश्क़ का बयान करना, अपना नाऊं अयां करना, कुछ निशान धरना । वजही बहुगुनी, गुन भर्या, तसलीम कर के सर पर हात धरिया ।"[2]

बादशाह ने उधर ग़व्वासी को गोलकुण्डा का राजदूत बनाकर बीजापुर भेज दिया । इस प्रकार दोनों कवियों को विभिन्न क्षेत्रों में व्यस्त करके अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने चैन की साँस ली ।

4.2 ग़व्वासी एवं मुहम्मद कुली कुत्बशाह

ग़व्वासी एवं मुहम्मद कुली कुत्बशाह के काव्य की तुलना करने

---

1) सं. मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी-कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृष्ठ 145
2) सं. डॉ. श्रीराम शर्मा : मुल्ला वजही-"सबरस", पृष्ठ 4-5

पर ज्ञात होता है कि दोनों कवियों के मध्य ग़ज़लगोयी के तत्व, क्रमशः समान रूप से पाए जाते हैं । एक ग़ज़ल के विभिन्न अशार अत्यंत साम्य रखते हैं । उक्त ग़ज़ल का मत्ला निम्नलिखित है और दोनों ही कवियों के काव्य संग्रहों, "कुल्यात-ए-मुहम्मद कुली कुत्बशाह" तथा "कुल्यात-ए-ग़व्वासी" में विद्यमान है -

"पिया बाज प्याला पिया जाए ना
पिया बाज यक तिल जिया जाय ना ।"

मुहम्मद कुली कुत्बशाह ने ग़व्वासी तथा वजही की भांति सुदीर्घ मसनवियां नहीं लिखी । "मसनवी" शीर्षक के अंतर्गत दी गई एक कविता मिलती है जो केवल दो पृष्ठों पर ही आधारित है और "कुल्यात-ए-मुहम्मद कुली कुत्बशाह" के अंतिम भाग में संकलित है । यह संकलन स्व॰डॉ॰ मुहीउद्दीन क़ादरी "ज़ोर" ने किया है ।

4·3 <u>ग़व्वासी एवं अब्दुल्लाह कुत्बशाह</u>

ग़व्वासी तथा अब्दुल्लाह कुत्बशाह के काव्य की तुलना करने पर यह तथ्य सामने आता है कि इन्होंने भी मसनवियां नहीं लिखी । इनका दीवान सय्यद मुहम्मद साहब के संपादन में, सिलसिल-ए-यूसुफिया से प्रकाशित हुआ है । दीवान में कोई दोहा नहीं है । अंत में एक मर्सिया दिया गया है जो नसीरुद्दीन हाशमी साहब की पुस्तक "दकन में उर्दू" से उद्धृत है । ग़व्वासी की ग़ज़लों से अब्दुल्लाह की ग़ज़लों की तुलना की जा सकती है । अब्दुल्लाह कुत्बशाह की ग़ज़लों के संबंध में दक्खिनी साहित्य के आलोचक डॉ॰ इक़बाल अहमद कहते हैं -

"अब्दुल्लाह की ग़ज़लों में भाव की दृष्टि से बहुत गहराई है । इन्होंने ग़ज़लों को बहुत लंबी नहीं किया । इनकी ग़ज़लें छोटी-छोटी

है जिसके भावों में मुग्धता झलकती है ।"[1] तुलनात्मक दृष्टि से अब्दुल्लाह कुत्बशाह की निम्नलिखित ग़ज़ल द्रष्टव्य है -

"दिल की अंखाँ में जकोई तुज इश्क़ का अंजन किया
ग़ैब के पा गंज यो सब रंग दूं भंजन किया
मुख तुजे दर्पन में तिल-तिल देखने आदत है कर
नैन कूं मैं ऐन तुज दीदार का दर्पन किया

रात सारी ज़ुल्फ़ तेरा बाद दूं मिल एक हो
खुश हुकूमत मुंज उपर मांगता यदूं अपना मन किया

मुंज लखें अब नख तेरा चांद दूं दिस्ता है आज
ज्यूं हुना इक़बाल का मुंज घर में आ मस्कन किया

आशिक़ों में कुई दुई का नांव लेते न क्यूं
तुज दूं मिल जा मैं अपस कूं एक दिल एक तन किया ।

शाह अब्दुल्लाह नबी सदक़े तेरी तौफ़ीक़ थे
ज़िक़्र हो झुट कूं तमाम अंबरीत का रंजन किया ।"[2]

उपरोक्त ग़ज़ल के परिप्रेक्ष्य में ग़व्वासी की प्रस्तुत ग़ज़ल का अवलोकन किया जा सकता है -

"मैं जो मजनूं के नमन अपसीं दिवानगी किया
इश्क़ में दाना हो चुप लोगां में नादानी किया ।

- -

1) डॉ॰ इक़बाल अहमद : दक्खिनी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ 226

2) सय्यद मुहम्मद : दीवान-ए-अब्दुल्लाह कुत्बशाह, पृष्ठ 51-52

हर सनद को हात चढ़ना कर मिंजे इस वास्ते
मैं कलीजे कूं लहू हौर लहू के तैं पानी किया

राज़ मिंज दिल के दरू ने का न होवे फ़ाश कई
भौत दिन दिल के हरम के दर की दरबानी किया

इश्क़ का पंछी हुआ मिंज पर लटिया देख आरसा
साड़ु तन के साड़ उस यक रंग मेहमानी किया

जीव की ज्योत की दिखुना के सीदी बाट मिंज
सोज़ का दीया लगा सीने कूं नूरानी किया

बात की नज़ाकत बाल ते बारीक था
मैं अवल दक्खिनी ज़ुबाँ मैं कुफरो जानी किया

दुनियां सब हिंद की रग़बत करें त्यूं आज कुल
क़ब्रिस्तान हो "ग़व्वासी" सफ़र अफ़्शानी किया ।"[1]

---

1. सं॰ मुहम्मद बिन उमर : ग़व्वासी - कुल्यात-ए-ग़व्वासी, पृष्ठ 108-109

उपसंहार

दक्षिण भारत में बहमनी राज्य के पतन के पश्चात् क्रमशः पांच राज्य अस्तित्व में आये । बीदर में बरीदशाही, बरार में इमादशाही, बीजापुर में आदिलशाही, अहमद नगर में निज़ामशाही तथा गोलकुण्डे में कुत्बशाही राज्यों की स्थापना हुई । यह सभी राज्य बहमनी युग में प्रचलित परंपराओं एवं साहित्यिक मूल्यों के आधार पर कुछ समय तक विकासशील रहे । परंतु, कालांतर में बरार का विलय अहमदनगर में तथा बीदर का विलय बीजापुर में हो गया । अब केवल तीन राज्य शेष रहे । यह तीन राज्य गोलकुण्डा, बीजापुर तथा अहमदनगर थे । अहमदनगर में साहित्य के विकास की वह परंपरा नहीं चल सकी जो बीजापुर एवं गोलकुण्डा के भाग्य में आई थी ।

गोलकुण्डा राज्य के प्रवर्तक एक तुर्क "सुल्तानकुली" थे । सुलतान कुली ने सन् 1518 ई० में गोलकुण्डा में शासन की नींव

डाली । दक्खिन में अभी दक्खिनी भाषा तथा साहित्य अपनी शैशव अवस्था को पार कररहे थे । उत्तर भारत में यह समय राजनीतिक संघर्षों का था । परंतु ऐसे संघर्ष दक्षिण में अपेक्षाकृत कम थे । यह वह युग है जबकि सूफ़ी लोग शनैः शनैः दक्खिन की ओर आकर्षित हो रहे थे ।

गोलकुण्डे का प्रथम सुलतान (सन् 1518 ई०-सन् 1543 ई०) स्वयं साहित्य प्रेमी था परंतु उसे राजनीतिक संघर्षों और उसके पश्चात् प्रशासनिक कार्यों ने इतना समय ही नहीं दिया कि वह साहित्य की ओर ध्यान दे सके ।

गोलकुण्डे का द्वितीय सुलतान जमशीद कुत्बशाह सन् 1543 ई० से सन् 1550 ई० तक शासन करता रहा । जमशीद को राज्य की बुनियाद मजबूत करने में ही काफ़ी समय लग गया । वैसे भी अपने पिता का हत्यारा होने के कारण वह जनता के मन पर राज्य नहीं कर सका ।

जमशीद के देहांत पर उसका पुत्र सुब्हान कुली ने सन् 1550 ई० में शासन की बागडोर संभाली ही थी कि विजय नगर से जमशीद के छोटे भ्राता इब्राहीम कुत्बशाह को गोलकुण्डे की राज गद्दी सौंप दी गई । इब्राहीम का शासन् सन् 1550 ई० से सन् 1580 ई० तक गोलकुण्डा पर रहा । अन्य असंख्य उच्च मूल्यों का स्वामि होने के अतिरिक्त इब्राहीम साहित्य प्रेमी था । इसके युग में दक्खिनी कवि फ़ेरोज़ को राज्य-संरक्षण प्रदान किया गया । इब्राहीम के समय में ही साहित्य एवं साहित्य प्रेमियों को शासकीय सहायता मिलनी आरंभ हो गई थी ।

इब्राहीम के पश्चात् सन् 1580 ई॰ से सन् 1612 ई॰ तक गोलकुण्डा पर मुहम्मद कुली कुत्बशाह का शासन रहा । सुलतान स्वयं उच्च कोटि का कवि था । वह दक्खिनी के अतिरिक्त तेलुगु तथा फ़ारसी आदि का ज्ञाता भी था । उसका कुल्यात उर्दू साहित्य में पहले "दीवान" के रूप में प्रसिद्ध हुआ ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध का आलोच्य कवि ग़व्वासी कुली कुत्बशाह के शासन काल में ही मान्यता प्राप्त कर चुका था । उधर ग़व्वासी की कोटि का कवि मुल्ला वजही, जो आयु में ग़व्वासी से बड़ा था, राजा की कृपा का पात्र बना हुआ था । मुहम्मद कुली कुत्बशाह ने उसे "राज-कवि" की उपाधि से सम्मानित किया था । वजही तथा ग़व्वासी में प्रतिस्पर्धा ज़ोरों पर चल रही थी । ग़व्वासी ने ग़ज़ल के क्षेत्र में नाम कमाना आरंभ कर दिया था । परंतु, उस समय वजही का ही बोलबाला था । वजही ने मसनवी कुत्बमुश्तरी की रचना की । कुत्बमुश्तरी में मुहम्मद कुली कुत्बशाह तथा एक बांगला सुंदरी की कल्पित प्रेम कहानी को काव्य बद्ध किया गया है । ग़व्वासी कब शांत रहता ? उसेने फ़ारसी कथा पर भारतीय आवरण चढ़ा कर एक उत्कृष्ट मसनवी की रचना कर डाली तथा मसनवी का नाम "सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल" रखा । अब तक जनता और शासक के मन पर ग़व्वासी की ग़ज़लों तथा पहली मसनवी का प्रभाव पड़ चुका था, कवि गण उसको आदर की दृष्टि से देखने लगे थे । उसकी कुछ ग़ज़लें मुहम्मद कुली कुत्बशाह की ज़मीनों में मिलती हैं, यह इस बात का प्रमाण है कि उसके क़दम राज दरबार तक पहुंचने लगे थे ।

मुहम्मद कुली कुत्बशाह के पश्चात, निःसंतान होने के कारण, उसका जामाता मुहम्मद कुत्बशाह गोलकुण्डा के सिंहासन

पर आसीन हुआ । मुहम्मद कुत्बशाह ने सन् 1612 ई॰ से सन् 1626 ई॰ तक शासन किया । वैसे तो वह स्वयं साहित्य प्रेमी था, परंतु, धार्मिक व्यक्ति होने के कारण इसने रचनात्मक साहित्य की ओर उस प्रकार ध्यान नहीं दिया जैसा कि उससे पूर्व सुलतान मुहम्मद कुली कुत्बशाह ने दिया था । अतः इसके काल में उल्लेखनीय साहित्य बहुत ही कम मात्रा में रचा गया ।

सन् 1626 ई॰ से सन् 1672 ई॰ तक गोलकुण्डा राज्य पर अब्दुल्लाह कुत्बशाह का शासन था । राजनीतिक रूप से यह काल गोलकुण्डा राज्य के पतन के संकेत देने लगा था । परंतु दक्खिनी साहित्य की दृष्टि से अब्दुल्लाह कुत्बशाह का युग स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाने योग्य है ।

अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने हमारे शोध-प्रबंध के आलोच्य कवि ग़व्वासी को राजकीय सम्मान से विभूषित करते हुए गोलकुण्डा का राज कवि घोषित किया । केवल इतना ही नहीं अब्दुल्लाह ने उसे गोलकुण्डा के दूत के रूप में बीजापुर भी भेजा ।

ग़व्वासी और वजही में जो प्रतिस्पर्धा चली आ रही थी उसको अब्दुल्लाह कुत्बशाह ने बड़े ही कलापूर्ण ढंग से समाप्त किया तथा दोनों को निकट लाने में भी अब्दुल्लाह का बड़ा हाथ रहा । अब्दुल्लाह ने एक ओर सम्मान देकर वजही को आमंत्रित किया । उसे अपने साथ तख़्त पर बिठाया तथा पान इत्यादि देकर उसकी आवभगत की । सुलतान ने वजही से कहा कि वह मनुष्य के अस्तित्व के विषय पर कोई ऐसा गद्य-रूपक रचे कि संसार देखता रह जाए । उधर सुलतान ने ग़व्वासी को बीजापुर भेज दिया ।

ग़व्वासी की कुल्यात के अतिरिक्त उसकी तीन मसनवियाँ, "सैफुल मुलूक व बदी उज्जमाल", "तूतीनामा" तथा "मैना सत्वंती" प्राप्त हुई है । कुल्यात (काव्य-संग्रह) में कुल एक सौ अट्ठावन 158 ग़ज़लें है । प्रथम मसनवी का कथ्य प्रेम में इष्ट की प्राप्ति की अभियान यात्रा को प्रदर्शित करता है । इसका नायक नित्य नवीन संकटों को पार करता हुआ सफलता पूर्वक घर लौटता है । द्वितीय तथा तृतीय मसनवियों में नारी समस्या पर प्रकारांतर रूप से विचार किया गया है । नारी का कुलटा रूप एवं सत् रूप दोनों ही कलापूर्ण बन पाए है ।

शोध की दृष्टि से प्रस्तुत प्रबंध में ग़व्वासी के काव्य के क्रमशः सभी पक्षों पर समुचित रूप से प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है ।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1· अबुल्लैस सिद्दीकी — 1·1 लखनऊ का दबिस्ताने शाइरी, मर्कज़-ए-उर्दू, गणपति रोड, लाहौर, 1955

1·2 ग़ज़ल और मुतग़ज़्ज़लैन, मक्तब-ए-जामिआ लिमिटेड (अज्ञात)

2· अब्दुल मजीद सिद्दीकी — 2·1 मुक़द्दमातारीख़े दकन, इदारह अदबियात-ए-उर्दू, है· 1940

3· अबु मुहम्मद सहर — 3·1 उर्दू में क़सीदा निगारी, इलाहाबाद, 1958

4· अब्दुल्लाह कुत्बशाह — 4·1 दीवान-ए-अब्दुल्लाह कुत्बशाह, सं· सय्यद मोहम्मद, सिल्सिल-ए-यूसुफ़िया, हैदराबाद (दीवान में प्रकाशन तिथि नहीं दी गई है)

5• अली आदिलशाह द्वितीय	5•1 अली आदिलशाह ४द्वितीय४ का काव्य संग्रह सं• श्रीराम शर्मा तथा मुबारिजुद्दीन रफ़अत, आगरा विवि•, 1958 ई•
6• अशरफ़	6•1 नौसरहार, हस्तलिपि, इदारह आदबियात-ए-उर्दू, हैदराबाद संख्या 1
7• अल्ताफ़ हुसैन हाली	7•1 मुक़द्दम-ए-शे-ो-शाइरी, बर्क़ी प्रेस, देहली ४तिथि अज्ञात४
8• आज़िज़	8•1 लैला मजनू, सं•डा• गुलाम उमर खाँ, उर्दू वि• उस्मानिया वि•वि•, हैदराबाद सन् 1967 ई•
9• एहतेशाम हुसैन	9•1 उर्दू साहित्य का इतिहास, अंजुमन तरक्क़ी-ए-उर्दू, हिंद, 1954 ई•
10. कमल कुल श्रेष्ठ	10•1 हिंदी प्रेमाख्यानक काव्य, मान सिंह कचहरी रोड, अजमेरशरीफ़, सन् 1953 ई•
11• ग़व्वासी	11•1 सैफुलमुलूक व बदी उज्जमाल, सं• डा• राजकिशोर पाण्डेय – अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी, दक्खिनी हिंदी प्रकाशन समिति, हैदराबाद, सन् 1955 ई•
	11•2 वही, सं• मीर सआदत अली रज़वी; सिल्सिल-ए-यूसुफिया, हैदराबाद, हि• 1035

	11·3 तूतीनामा, सं· मीर सआदत अली रज़्वी, सिल्सिल-ए-यूसुफिया, हैदराबाद, हि· 1049
	11·4 मैना सतवंती, सं· गुलाम उमर खाँ, मक्तब-ए-जामिआ, नई दिल्ली (प्रकाशन तिथि नहीं दी गई)
	11·5 कुल्यात-ए-ग़व्वासी, सं· मुहम्मद बिन उमर, इदारह अदबियात-ए-उर्दू, हैदराबाद (समय अप्रकाशित)
12· गार्सां दतासी	12·1 खुतबात गार्सां द तासी, उर्दू, अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू, हिंद, 1935 ई·
13· गेसूदराज़, ख़्वाजा बंदे नवाज़	13·1 चक्की नामा, हस्त लिखित, इदारह-अदबियात-ए-उर्दू, हैदराबाद
14· गोपीचंद नारंग	14·1 हिंदुस्तानी क़िस्सों से माख़ूज़ उर्दू मसनवियाँ, मक्तब-ए-जामिआ, नई दिल्ली, सन् 1962 ई·
15· ज्ञान चंद जैन	15·1 शुमाली हिंद की नस्री दास्तानें, अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू, पाकिस्तान, सन् 1954 ई·
16· दाऊद, मुल्ला	16·1 चंदायन, सं·डा· माताप्रसाद गुप्त, प्रामाणिक प्रकाशन, आगरा, सन् 1937 ई·

	16.2 चंदायन, सं. परमेश्वरी लाल गुप्त, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर, बंबई, 1964 ई.
17. नसीरुद्दीन हाशमी	17.1 दकन में उर्दू, मकतब-ए-इब्राहीमिया, हैदराबाद, 1936
	17.2 क़दीम उर्दू-तारीख़े अदब-ए-उर्दू 1935
18. परशुराम चतुर्वेदी	18.1 भारतीय प्रेमाख्यान की परंपरा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1956 ई.
	18.2 हिंदी के सूफ़ी प्रेमाख्यान, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर, बंबई, 1962 ई.
19. मसूद हुसैन खां	19.1 तारीख़-ए-जबान-ए-उर्दू, आज़ाद किताब घर, नई दिल्ली, सन् 1954 ई.
20. मुहम्मद कुली कुत्बशाह	20.1 कुल्यात-ए-मुहम्मद कुली कुत्बशाह, सं. डॉ. मुहिउद्दीन क़ादरी जोर, सिलसिल-ए-यूसुफ़िया, हैदराबाद, सन् 1940 ई.
21. डॉ. मुहम्मद कुंज मेत्तर	21.1 दक्खिनी हिंदी का सूफ़ी साहित्य, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988
22. मुहम्मद मुक़ीम बीजापुरी	22.1 चंदर बदन व माहयार, सं. अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी, मजलिस-ए-इशाअत दकनी अदब, सन् 1956

16·2 चंदायन, सं· परमेश्वरी लाल गुप्त, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर, बंबई, 1964 ई·

17· नसीरुद्दीन हाशमी
17·1 दकन में उर्दू, मकतब-ए-इब्राहीमिया, हैदराबाद, 1936
17·2 क़दीम उर्दू-तारीखे अदब-ए-उर्दू 1935

18· परशुराम चतुर्वेदी
18·1 भारतीय प्रेमाख्यान की परंपरा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1956 ई·
18·2 हिंदी के सूफ़ी प्रेमाख्यान, हिंदी ग्रंथ रत्नाकर, बंबई, 1962 ई·

19· मसूद हुसैन खाँ
19·1 तारीख-ए-जबान-ए-उर्दू, आज़ाद किताब घर, नई दिल्ली, सन् 1954 ई·

20· मुहम्मद कुली कुत्बशाह
20·1 कुल्यात-ए-मुहम्मद कुली कुत्बशाह, सं·डॉ· मुहिउद्दीन क़ादरी जोर, सिलसिल-ए-यूसुफ़िया, हैदराबाद, सन् 1940 ई·

21· डॉ· मुहम्मद कुंज मेत्तर
21·1 दक्खिनी हिंदी का सूफ़ी साहित्य, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988

22· मुहम्मद मुक़ीम बीजापुरी
22·1 चंदर बदन व माहयार, सं· अकबरुद्दीन सिद्दीक़ी, मजलिस-ए-इशाअत दकनी अदब, सन् 1956

23. मुहीउद्दीन क़ादरी ज़ोर	23.1 उर्दू शहपारे, मकतब-ए-इब्राहीमिया, हैदराबाद, सन् 1929 ई.
24. महमूदइलाही	24.1 क़सीदा निगारी का तन्क़ीदी जाएज़ा, जमाल प्रिंटिंग प्रेस, नई दिल्ली, 1956
25. मसीहुज़्ज़मा	25.1 उर्दू मर्सिये का इर्तिक़ा, दिल्ली, 1963
26. यूसुफ़ हुसैन खाँ	26.1 उर्दू ग़ज़ल मक्तबे जामिया, दिल्ली, 1952 ई.
27. रघुपति सहाय "फ़िराक़" गोरखपुरी	27.1 उर्दू भाषा और साहित्य, हिंदी सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, 1962 ई.
28. डा॰ रशीद मूसवी	28.1 दकन में मर्सिया और मरासम-ए-अज़ादारी, नेशनल प्रिंटिंग प्रेस, हैदराबाद 1970
29. रामचंद्र शुक्ल	29.1 हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 1940
30. रामपूजन तिवारी	30.1 हिंदी सूफ़ी काव्य की भूमिका, ग्रंथ वितान, पटना, सन् 1960 ई.
31. राहुल सांकृत्यायन	31.1 हिंदी काव्यधारा, किताब महल, इलाहाबाद 1945 ई.

32· वजही
32·1 कुत्बमुश्तरी, सं· अब्दुल हक़, अंजुमन तरक़्क़ी-ए-उर्दू, पाकिस्तान 1953 ई·
32·2 वही, सं· मिलावाप्रे-नसीरुद्दीन हाशमी, दक्खिनी प्रकाशन समिति, हैदराबाद, सन् 1954 ई·

33· विष्णु शर्मा
33·1 पंचतंत्र, मेहरचंद लक्ष्मण दास, लाहोर, 1932

34· श्याम मनोहर पाण्डेय
34·1 मध्य युगीन प्रेमाख्यान, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, सन् 1961
34·2 सूफ़ी काव्य विमर्श, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, सन् 1968 ई·

35· शाही
35·1 कुल्यात-ए-शाही, सं· सय्यद मुबारिज़ुद्दीन रफ़अत, अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू, हिंद अलीगढ़ सन् 1962 ई·

36· डॉ· श्रीराम शर्मा
36·1 दखिनी का पद्य और गद्य, हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद, 1954 ई·
36·2 दखिनी हिंदी का उद्भव और विकास, दक्षिण प्रकाशन, हैदराबाद 1961

	36.3 दक्खिनी हिंदी का साहित्य, दक्षिण प्रकाशन, हैदराबाद, 1972 ई.
37. सरला शुक्ल	37.1 जायसी के परवर्ती हिंदी सूफ़ी कवि और काव्य, लखनऊ वि. वि. 1956 ई.
38. साधन	38.1 मैनासत, सं. अगर चंद नाहटा, हिंदी विद्यापीठ, आगरा, 1957 ई.
39. सिफ़ारिश हुसैन रज़वी	39.1 उर्दू मर्सिया, मकतब-ए-जामिया, नई दिल्ली, 1959 ई.
40. हाशिम दक्खिनी	40.1 किस्सा हुस्न-ओ-दिल, हस्तलिखित, राजकीय पुस्तकालय, हैदराबाद सं0 60

पत्रिकाएँ

1. मुजल्ला-ए-उस्मानिया	1. दकनी अदब नंबर, निर्देशक : डॉ. मसूद हुसैन खाँ, 65वाँ अंक, 1964
2. सबरस	2. उर्दू कान्फ्रेंस नंबर, जुलाई 1954